204 MA HIN

by Cde Anu

Submission date: 26-Jul-2025 01:17PM (UTC+0530)
Submission ID: 2720717104
File name: 204_M.A._HINDI-_LIG.pdf (6.86M)
Word count: 52515
Character count: 131742

भाषा विज्ञान

एम.ए., हिन्दी Semester-II, Paper-IV

पाठ लेखक

डॉ. सेनकांबळेपिराजीमनोहर
एम.ए., एम, फिल., पी-एच.डी.
हिन्दी विभाग
हैदराबाद विश्वविद्यालय

डॉ. सूर्य कुमारी .पी.
एम.ए., एम, फिल., पी-एच.डी.
हिन्दी विभाग
हैदराबाद विश्वविद्यालय

पाठ लेखक और संपादक

डॉ. मंजुला
एम.ए., एम, फिल., पी-एच.डी.
हिन्दी विभाग
रामकृष्ण हिंदू हाई स्कूल
अमरावती, गुंटूर।

निर्देशक

डॉ नागराजूबट्टू
एम.एच.आर.एम., एम.बी.ए., एल.एल.बी., एम.ए., (मनो) एम.ए., (सामा) एम.ई.डी., एम.फिल., पी-एच.डी
दूरस्थ शिक्षा केंद्र, आचार्य नागार्जुना विश्वविद्यालय
नागार्जुना नगर-522510
Phone No-0863-2346208, 0863-2346222
0863-2346259 (अध्ययन सामग्री)
Website: www.anucde.info
E-mail: anucdesemester2021@gmail.com

एम.ए., हिन्दी

4
First Edition: 2021
Reprint :

No. of Copies:

©Acharya Nagarjuna University

This book is exclusively prepared for the use of students of एम.ए., हिन्दी Centre for Distance Education, Acharya Nagarjuna University and this book is meant for limited circulation only.

Published by:

Dr. NAGARAJU BATTU,
Director

Centre for Distance Education,
Acharya Nagarjuna University

Printed at:

FOREWORD

Since its establishment in 1976, Acharya Nagarjuna University has been forging ahead in the path of progress and dynamism, offering a variety of courses and research contributions. I am extremely happy that by gaining 'A' grade from the NAAC in the year 2016, Acharya Nagarjuna University is offering educational opportunities at the UG, PG levels apart from research degrees to students from over 443 affiliated colleges spread over the two districts of Guntur and Prakasam.

The University has also started the Centre for Distance Education in 2003-04 with the aim of taking higher education to the door step of all the sectors of the society. The centre will be a great help to those who cannot join in colleges, those who cannot afford the exorbitant fees as regular students, and even to housewives desirous of pursuing higher studies. Acharya Nagarjuna University has started offering B.A., and B.Com courses at the Degree level and M.A., M.Com., M.Sc., M.B.A., and L.L.M., courses at the PG level from the academic year 2003-2004 onwards.

To facilitate easier understanding by students studying through the distance mode, these self-instruction materials have been prepared by eminent and experienced teachers. The lessons have been drafted with great care and expertise in the stipulated time by these teachers. Constructive ideas and scholarly suggestions are welcome from students and teachers involved respectively. Such ideas will be incorporated for the greater efficacy of this distance mode of education. For clarification of doubts and feedback, weekly classes and contact classes will be arranged at the UG and PG levels respectively.

It is my aim that students getting higher education through the Centre for Distance Education should improve their qualification, have better employment opportunities and in turn be part of country's progress. It is my fond desire that in the years to come, the Centre for Distance Education will go from strength to strength in the form of new courses and by catering to larger number of people. My congratulations to all the Directors, Academic Coordinators, Editors and Lesson-writers of the Centre who have helped in these endeavors.

Prof. P. Raja Sekhar
Vice-Chancellor
Acharya Nagarjuna University

SEMESTER II

PAPER - IV : LINGUISTICS

204HN21 - भाषा विज्ञान

<u>पाठ्य पुस्तक</u> :

भाषा विज्ञान - भोलानाथ तिवारी, किताब महल, इलाहाबाद ।

<u>पाठ्यांश</u> :

1. भाषा की परिभाषा - भाषा की संरचना - भाषा विकास के मूल कारण - भाषा के विविध रूप, भाषा विज्ञान की परिभाषा - भाषा विज्ञान की शाखाएँ । भाषाओं का आकृतिमूलक वर्गीकरण, भाषा विज्ञान का इतिहास - मुनित्रय, पाणिनि, कात्यायन, पतंजलि ।
2. ध्वनि विज्ञान - ध्वनि तथा भाषा ध्वनि में अंतर, ध्वनि यंत्र - विभिन्न आधारों पर ध्वनियों का वर्गीकरण। ध्वनि परिवर्तन के कारण और ध्वनि परिवर्तन की दिशाएँ-ध्वनि गुण - ध्वनि नियम - बर्नर नियम - ग्रिम नियम, ग्रासमैन नियम ।
3. रूप विज्ञान-रूप और शब्द में अंतर - रूप परिवर्तन के कारण और दिशाएँ । अर्थ विज्ञान - अर्थ परिवर्तन के कारण और अर्थ परिवर्तन की दिशाएँ । शब्द विज्ञान - शब्द की परिभाषा - शब्दों का वर्गीकरण - शब्द भण्डार में परिवर्तन के कारण ।
   वाक्य विज्ञान - वाक्य की परिभाषा, वाक्यों के प्रकार, वाक्य गठन में परिवर्तन के कारण ।

<u>सहायक ग्रन्थ</u> :

1. भाषा विज्ञान की भूमिका - देवेन्द्रनाथ शर्मा, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली ।
2. सामान्य भाषा विज्ञान - बबूराम सक्सेना, हिन्दी हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग ।

भाषा विज्ञान

अनुक्रमनिका	पृष्ठ संख्या
1. भाषा की - संरचना –भाषा के विविध रूप	1.1- 1.14
2. भाषाविज्ञान- भाषा विज्ञान की शाखाएँ	2.1- 2.15
3. भाषाविज्ञान का इतिहास- मुनित्रय	3.1- 3.11
4. ध्वनि-विज्ञान	4.1- 4.18
5. ध्वनि के गुण- ध्वनि नियम	5.1- 5.11
6. रूप विज्ञान	6.1- 6.10
7. अर्थ विज्ञान	7.1- 7.10
8. शब्द विज्ञान	8.1- 8.11
9. वाक्य विज्ञान-वाक्य गठन परिवर्तन के कारण	9.1- 9.17

1.भाषा की संरचना- भाषा के विविध रूप

उद्देश्य :

प्रस्तुत इकाई में आप भाषा के विषय में जानकारी प्राप्त करेंगे। भाषा के अर्थ को समझते हुए भारतीय विद्वान और पाश्चात्य विद्वानों के द्वारा दिया गया परिभाषाओं को जानते हुए भाषा का संरचना को विस्तृत रूप से जानकारी प्रात करसखेंगे। इतना ही नहीं बल्कि भाषा के मूलकारण -भाषा के विविध रूपों को सोदाहरण रूप से समझने की कोशिश करेंगे।

इकाई- **I**

1.1. प्रस्तावना :

1.2. भाषा का अर्थ :

1.3. भाषा की परिभाषाएँ :

(क) पाश्चात्य विद्वानों की परिभाषाएँ :

(ख) भारतीय विद्वानों की परिभाषाएँ :

1.4. भाषा की संरचना :

1.4.1. ध्वनि संरचना

1.4.2. वाक्य संरचना

1.4.3. प्रोक्तिसंरचना

1.4.3.1.भाषाई आधार

1.4.3.1.1. मानसिक आधार

1.4.3.1.2. भौतिक आधार

1.4.3.1.3. सामाजिक आधार

1.5. भाषा विकास के मूलकारण:

1.5.1. ध्वनि परिवर्तन

1.5.2. शब्द- परिवर्तन

1.5.3. पद- परिवर्तन

1.5.4. वाक्य परिवर्तन

1.5.5 अर्थ परिवर्तन

1.6. भाषा के विविध रूप :

1.6.1. परिनिष्ठित भाषा

1.6.2. विभाषा

1.6.3. बोली

1.6.4. साहित्यिक भाषा

1.6.5. विशिष्ट भाषा

1.6.6. मानक भाषा
1.6.7. राज्य भाषा
1.6.8. राष्ट्र भाषा
1.6.9. अन्तर्राष्ट्रीय भाषा
1.7. सारांश :
1.8. स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न :

1.1. प्रस्तावना :

भाषा का अध्ययन शास्त्र के रूप में भी हुआ है और विज्ञान के रूप में भी। भाषा के अमूर्त रूप को भाषा निर्माण की अमूर्त प्रक्रिया को पाश्चात्य व भारतीय विद्वानों ने उसके सूक्ष्म अस्तित्व से उसके प्रकट स्वरूप तक का अध्ययन किया है। वाग्वयों की संरचना, उच्चारण-प्रक्रिया आदि के अध्ययन का समावेश भाषाविज्ञान के अंतर्गत होते है, तो विविध भाषाओं के इतिहास एवं संरचना-वैशिष्ट्य का अध्ययन भाषा शास्त्र के अंतर्गत किया जाता है। किन्तु यह विभाजन-रेखा अब विलीन होती जा रही है। इस इकाई में भाषा की परिभाषाओं के साथ-साथ भाषा की संरचना को समझते हुए भाषा के मूलकारण तथा भाषा के विविध रूप को समझाया गया है।

1.2. भाषा का अर्थ :

'भाषा' शब्द संस्कृत की भाषा धातु से निष्पन्न हुआ है। भाषा का अर्थ है- कहना। भाषा शब्द जितना सरल है, उसे परिभाषा में बांधना उतना ही कठिन। क्योंकि भाषा की सामान्य परिभाषा देना बड़ा सरल है, जैसे कि- जो बोली जाती है, वह भाषा है। अथवा मनुष्य जो बोलता है, वह भाषा होती है आदि। किन्तु इतनी सरल परिभाषा देते ही कई प्रश्न उठ खड़े होते हैं, यथा- जो लिखी जाती है, वह भाषा नहीं मानी जाएगी क्या? भाषा केवल मनुष्य बोलते हैं, पशुओं, पक्षियों की भाषा नहीं होती क्या? साथ ही अगर भाषा की भूमिका या कार्य को देखेंगे तो हम पाते हैं कि भाषा भावनाओं तथा विचारों को अभिव्यक्त करती है। तब कुछ और प्रश्न भाषा के संदर्भ में उठते हैं कि आँखों, मुख और हाथों आदि की सहायता से कोई बात कहने के लिए जो इशारे या संकेत किए जाते हैं, वे 'भाषा' कहलाते हैं क्या? संदेश या किसी बात की जानकारी देनेवाली आकृति, चित्र या वस्तुएँ भी भाषा की परिधि में आती हैं क्या?

अतः इन प्रश्नों का समाधान करनेवाली 'भाषा' की सटीक परिभाषाओं की आवश्यकता है।

1.3. भाषा की परिभाषाएँ :

अनेक विद्वानों ने भाषा की परिभाषा के माध्यम से अपना-अपना मत रखा

है, उन्हें जानना भी आवश्यक है । इनमें भारतीय और पाश्चात्य विद्वानों की परिभाषाएँ इस प्रकार हैं।

(क) पाश्चात्य विद्वानों की परिभाषाएँ :

- **प्लेटो:**

"विचार आत्मा की मूक व अध्वन्यात्मक बातचीत है, पर वही जब ध्वन्यात्मक होकर होठों पर प्रकट होती है तो उसे भाषा की संज्ञा देते हैं" ।

- **हैलिडे:**

"Language can be thought of as organized noise used in situations, actual social situations or in other words contextualized systematic sound".

सामाजिक स्थितियों में प्रयुक्त की गई संयोजित ध्वनियाँ अर्थात् संदर्भित ध्वनि-व्यवस्था के भाषा माना जा सकता है।

- **क्रोचे :**

"Language is articulated limited sound organized for the purpose of expression".

अभिव्यक्ति के उद्देश्य से संयोजित उच्चारित सीमित ध्वनियाँ ही भाषा है।

- **नॉमचॉमस्की :**

'मैं भाषा को वाक्यों का एक समूह समझता हूँ, जो निश्चित लंबाई में तथा एक निश्चित तत्वों के समूह (set) में संचरित होते हैं।'

(ख) भारतीयविद्वानों की परिभाषाएँ :

- **डॉ. बाबूराम सक्सेना :**

एक प्राणी अपने किसी अवयव द्वारा दूसरे प्राणी पर कुछ व्यक्त कर देता है- यही विस्तृत अर्थ में भाषा है। (समान्य भाषा- विज्ञान)

- **डॉ. श्यामसुंदर दास :**

मनुष्य और मनुष्य के बीच वस्तुओं के विषय में अपनी इच्छा और मति का आदान-प्रदान करने के लिए व्यक्त ध्वनि -संकेतों का जो व्यवहार होता है, उसे भाषा कहते हैं।

- **डॉ. किसोरीदास वाजपेयी :**

विभिन्न अर्थों में सांकेतिक शब्द समूह ही भाषा है, जिसके द्वारा हम अपने मनोभाव दूसरों के प्रति बहुत सरलता से प्रकट करते हैं। (भारतीय भाषा-विज्ञान)

- **डॉ. देवेन्द्र शर्मा :**

उच्चरित ध्वनि-संकेतों की सहायता से भाव या विचार की पूर्ण अभिव्यक्त भाषा है । तथा जिसकी सहायता से मनुष्य परस्पर विचार-विनिमय या सहयोग

करते हैं, उस यादृच्छिक, रूढ़ ध्वनि- संकेत प्रणाली को भाषा कहते है। (भाषा-विज्ञान की भूमिका)

इस प्रकार भाषा की सटीक परिभाषा यही है कि- "भाषा उच्चारण-अवयवों से उच्चारण के योग्य यादृच्छिक ध्वनि-प्रतीकों की वह व्यवस्था है, जिसके द्वारा एक समाज के लोग आपस में भावों और विचारों का आदान-प्रदान करते हैं"।

उपरोक्त परिभाषाओं से भाषा के अर्थ को इस प्रकार समझा जा सकता है।

1. भाषा का प्रकार्य विचारों को संप्रेषित करना है।
2. भाषा का यह प्रकार्य समाज की परिधि में ही घटित होता है, अर्थात् निर्जन स्थान पर भाषा का कार्य संपन्न नहीं हो सकता। एकाधिक व्यक्तियों के माध्य ही भाषा अपनी भूमिका निर्वहन कर सकती है।
3. भाषा अपनी भूमिका एक अनुशासन के तहत अदा करती है। अतः भाषा स्वयं ही एक व्यवस्था है। भाषा का स्वरूप संरचनागत होता है। भाषा की संरचना का निर्माण वाक्यों से होता है। वाक्यों का रूपों से, रूपों का शब्दों से, शब्दों का अक्षर से।
4. अक्षर भाषा की लघुतम इकाई होते हैं। वास्तविक रूप में अक्षर किसी भी भाषा में प्रयोगरत ध्वनियों के प्रतीक होते हैं।
5. उल्लेखनीय यह है कि भाषा में प्रयुक्त ध्वनि-प्रतीक यादृच्छिक होते हैं। उन्हें तर्क के आधार पर प्रमाणित नहीं किया जा सकता।
6. भाषा मेंप्रयुक्त ध्वनियाँ उच्चारण अवयवों से निःसृत होती हैं। अर्थात् कंठ एवं मुख की सहायता से उच्चारित ध्वनियाँ ही भाषा कहलाती हैं।
7. ये उच्चारित ध्वनियाँ भावों एवं विचारों की संवाहक होती हैं। अतः उन ध्वनियों का सार्थक होना आवश्यक माना जाता है।

1.4.भाषा की संरचना :

भाषा यादृच्छिक ध्वनि प्रतीकों की संरचनात्मक व्यवस्था है। भाषा-संरचना का मूलाधार संरचनात्मक पद्धति है। जिस प्रकार भवन-रचना में ईंट सीमेंट लोहा, शक्ति अर्थात मजदूर और कारीगर की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार भाषा-संरचना में ध्वनि, शब्द, पद, वाक्य, प्रोक्ति और अर्थ की अपनी-अपनी भूमिका होती है।

1.4.1. ध्वनिसंरचना :

सामान्यतः किन्हीं दो या दो से अधिक वस्तुओं के आपस में टकराने से वायु में कंपन होता है। जब यह कंपन कानों तक पहुँचता है, तो इसे ध्वनि कहते हैं। भाषाविज्ञान में मानव के मुखागों से निकली ध्वनियों का अध्ययन किया जाता है। ध्वनि भाषा की लघुतम, स्वतंत्र और महत्त्वपूर्ण इकाई है।

(क) स्वर :

भाषा में कुछ ऐसी ध्वनियाँ होती हैं जिनके उच्चारण में किसी अन्य ध्वनि का सहयोग नहीं लेना पड़ता है। इन ध्वनियों के उच्चारण में किसी प्रकार का अवरोध नहीं होता अर्थात् इनके उच्चारण में फेफड़े से आने वाली वायु अबाध गति से बाहर आती है और इनका उच्चारण जितनी देर चाहें कर सकते हैं। विभिन्न भाषाओं में स्वर ध्वनियों की संख्या भिन्न-भिन्न होती है। यथा-वर्तमान समय हिंदी की स्वर ध्वनियाँ हैं- अ, आ, इ,ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ औरऔ आदि ।

(ख) व्यंजन :

जिन ध्वनियों के उच्चारण में स्वर ध्वनियों का सहयोग अनिवार्य हो और जिनके उच्चारण में फेफड़े से आने वाली वायु मुख के किसी भाग में अल्पाधिक रूप से अवरुद्ध होने के कारण घर्षण के साथ बाहर आए, उन्हें व्यंजन ध्वनि कहते हैं।

हिंदी में कुछ व्यंजन ध्वनियों का प्रयोग स्वर के रूप में होता है। इन्हें अर्धस्वर कहते हैं; यथा-य् ।

(ग) संधि :

कभी-कभी दो भाषिक ध्वनि इकाइयाँ मिलकर एक हो जाती हैं, ऐसे ध्वनि-परिवर्तन को संधि कहते हैं।

(घ) उपसर्ग :

उपसर्ग वह भाषिक इकाई है, जो शब्द के पूर्व में प्रयुक्त होती है, किंतु इसका स्वतंत्र प्रयोग नहीं होता। ऐसी इकाई शब्द-संरचना का मुख्य आधार है। इसे मुख्यतः दो भागों में विभक्त कर सकते हैं।

प्रथम-अपनी भाषा के उपसर्ग- यथा-हिंदी में अ. कु. स. सु आदि। धर्म>अधर्म, >जीव>सजीव, सुगंध>सुगंध

द्वितीय-दूसरी भाषा के उपसर्ग; यथा- बे- बेकाम (फा. + हि) + बेसिर (फा + हि.)

(ञ) प्रत्यय :

प्रत्यय वह भाषिक इकाई है, जो स्वतंत्र रूप से प्रयुक्त न होकर शब्द के अंत में प्रयुक्त होती है। प्रत्यय को भी मुख्यतः दो वर्गों में विभक्त कर सकते हैं।

प्रथम-निज भाषा के प्रत्यय ,

कार- साहित्यकार, नाटककार, स्वर्णकार

आनी – जेठानी, सेठानी, देवरानी ।

(च) समास :

समास में दो शब्द जुड़कर एक सामासिक शब्द का रूप धारण कर लेते हैं। ऐसे

रूप को समस्त पद या सामासिक पद कहते हैं:
यथा- माता और पिता>माता-पिता , घोड़ों की दौड़>घुड़दौड़

1.4.2. वाक्य संरचना :

भाषा की स्वतंत्र, पूर्ण सार्थक, सहज इकाई को वाक्य कहते हैं। वाक्य में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कम से कम एक क्रिया का होना अनिवार्य है। वाक्य संरचना में मुख्यतः उद्देश्य तथा विधेय दो भाग होते हैं;

यथा- 'मोहन जा रहा है" में "मोहन" उद्देश्य और "जा रहा है।' विधेय है। वाक्य में उद्देश्य छिपा भी सकता है: यथा- जाओ (तुम) जाओ।> (आप) जाइए।

वाक्य के स्पष्ट संरचना का भावाभिव्यक्ति में विशेष महत्व होता है। यथा- रोको मत, जाने दो। – रोको, मत जाने दो।

यहाँ प्रथम वाक्य-संरचना में 'जाने देने' की भावाभिव्यक्ति हैं, तो दूसरी वाक्य-संरचना में रोकने की। वाक्य को संरचनात्मक आधार पर सरल, संयुक्त और मिश्र वर्गों में विभक्त कर सकते हैं।

1.4.3. प्रोक्ति संरचना :

भाषा के महत्तम इकाई प्रोक्ति है।ध्वनि यदि भाषा की लघुतम इकाई है, तो प्रोक्ति महत्तम और पूर्ण अभिव्यक्ति करने वाली इकाई है।

यथा-

(क) गौरव अच्छा लड़का है।
(ख) गौरव एम.ए. का छात्र है।
(ग) गौरव नियमित परिश्रम करता है।
(घ) गौरव को परीक्षा में प्रथम स्थान मिला।

यहाँ गौरव के विषय में चार वाक्य दिए गए हैं। आपसी संबंधों के अभाव में यहाँ पूर्ण स्पष्ट और सहज अभिव्यक्ति नहीं है। प्रोक्ति का रूप आते ही भावाभिव्यक्ति पूर्ण स्पष्ट हो जाती है- 'गौरव अच्छा लड़का है। नियमित परिश्रम करने के कारण उसे एम.ए. की परीक्षा में प्रथम स्थान मिला।'यह एक लघु प्रोक्ति है।

1.4.3.1. भाषाई आधार :

भाषा के तीन आधार यहाँ दिए जा रहे हैं।

- पहला मानसिक आधार (Intellectual basis) ।
- दूसरा भौतिक आधार (physical basis) ।
- सामाजिक आधार (Social basis) ।

1. मानसिक आधार (Intellectual basis)

- भाषा की आत्मा है तो भौतिक आधार उसका शरीर।
- मानसिक आधार भाषा के आत्मा से आशय है, वे विचार या भाव जिनकी अभिव्यक्ति के लिए वक्ता भाषा का प्रयोग करता है और भाषा के भौतिक आधार के सहारे श्रोता जिनको ग्रहण करता है।

2. भौतिक आधार (physical basis)

- मानसिक पक्ष सूक्ष्म है, अतः उसे किसी स्थूल का सहारा लेना पड़ता है।
- सुन्दर के भाव या विचार को व्यक्त करने के लिए वक्ता इन ध्वनि-समूहों का सहारा लेता है, और इन्हें सुनकर श्रोता 'सुन्दर' अर्थ ग्रहण करता है, अतएव वे ध्वनियाँ उस अर्थ की वाहिका, शरीर या भौतिक आधार है।

स् + उ + न् +द् +अ + र = सुन्दर ।

3. सामाजिक आधार (Social basis)

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहते हुए उसे अपनी मूलभूत आवश्यकताओं के लिए एक-दूसरे पर निर्भर रहना पड़ता है। एक-दूसरे के साथ विचारों का आदान-प्रदान करने के लिए, एक-दूसरे को अपनी आवश्यकताएँ बताने के लिए और उन को पूरा करने के लिए; वह जिस माध्यम का प्रयोग करते हैं वह भाषा ही है।

भाषा की संरचना के बाद में अब हम भाषा विकास के मूलकारण और भाषा के विविध रूपों के बारे में विस्तार रूप से जानकारी प्राप्त करेंगे।

1.5. भाषा विकास के मूलकारण:

भाषा विकास एक प्रक्रिया है जिसे मानवीय जीवन की शुरुआत में शुरू किया जाता है। शिशुओं का विकास भाषा के बिना शुरू होता है, फिर भी 10 महीने तक, बच्चे भाषण की आवाज को अलग कर सकते हैं और वे अपनी मां की आवाज़ और भाषण और भाषण पैटर्न पहचानने लगते है। भाषा के विकास को सीखने की साधारण प्रक्रियाओं के द्वारा आगे बढ़ना माना जाता है जिसमें बच्चों को भाषाईइनपुट से शब्दों, अर्थों और शब्दों के प्रयोग और बोलने का उपयोग होता है। जिस पद्धति में हम भाषा कौशल विकसित करते हैं वह सार्वभौमिक है। हालांकि मुख्य बहस यह है कि कैसे सिंटैक्स के नियमों का अधिग्रहण किया जाता है। वाक्य विन्यास के लिए दो प्रमुख दृष्टिकोण हैं। एक अनुभववादी खाता जिसके द्वारा बच्चों ने भाषाईइनपुट से सभी वाक्यविन्यास नियम। दूसरानैतिकवादी दृष्टिकोण प्राप्त किया है जिसके द्वारा कुछ सिद्धांत वाक्यविन्यास जन्मजात हैं और 'मान जीनोम' के माध्यम से प्रेषित हैं।

भाषा का विकास या परिवर्तन काल-भेद से भी हो जाता है। वैदिक संस्कृत से संस्कृत, पाली, प्राकृत, अपभ्रंश और हिन्दी आदि का विकास काल-भेद के कारण हुआ है। आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं की मूल जननी भाषा संस्कृत होने पर भी स्थान-भेद के कारण वे हिन्दी, ओड़िया, बंगला, गुजराती, मराठी और असमी आदि के रूप में विभिन्न भाषाएँ विकसित हुई हैं। राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक आदि परिस्थितियों की भिन्नता के कारण भी भाषा में परिवर्तन या विकास होता है। केन्द्रीय सत्ता में अंग्रेज रहने के कारण भारतीय भाषाओं में विदेशी अंग्रेजी शब्द अधिक प्रवेश करने में समर्थ हुए। खड़ी बोली दिल्ली, मेरठ के आसपास बोली जानेवाली बोली रूप में पहले रहने के कारण विकसित होकर भाषा-रूप के प्राप्त हो गई और अब अन्तर्राष्ट्रीय भाषा बन गई है। यह परिवर्तन भाषा के पाँच स्तरों पर उपलब्ध होता है। वे हैं-

1. ध्वनि परिवर्तन।
2. शब्द- परिवर्तन।
3. पद- परिवर्तन।
4. वाक्य परिवर्तन।
5. अर्थ परिवर्तन आदि।

1.5.1. ध्वनि परिवर्तन

ध्वनि चिह्नों की समष्टि को भाषा कहते हैं। अतः भाषा ध्वनि-संकेतों पर निर्भर रहती है। प्रायः यह देखा जाता है कि भाषा के ये ध्वनि-संकेत बड़े विचित्र रूप में परिवर्तित होते रहते हैं और जिनके परिवर्तन से भाषा भी पर्याप्त मात्र में परिवर्तित हो जाती है। भाषा में ध्वनि-परिवर्तन के विविध भेद भी दिखाई देते हैं जैसे- कभी आदि स्वर का लोप हो जाने पर 'अनाज' का 'नाज' ही रह जाता है; मध्य स्वर का लोप हो जाने पर 'गरदन' को 'गर्दन' अथवा 'खुरजा' को 'खुर्जा' कहने लगते हैं;अन्त्य स्वर का लोप हो जाने पर 'शिला' को 'सिल' या 'निद्रा' को 'नींद' रहने लग जाते हैं।

1.5.2. शब्द- परिवर्तन

ध्वनियों के संयोग से ही शब्द बनता है। जब कई ध्वनियाँ संयुक्त होकर उच्चरित होती हैं, तब 'शब्द' उत्पन्न हो जाता है। अतः जहाँ ध्वनियों के विविध परिवर्तन भाषा की परिवर्तनशीलता के द्योतक हैं, वहाँ शब्द-परिवर्तन भी भाषा की परिवर्तन संबंधी दिशा को सूचित करते हैं। शब्दों में भी विविध प्रकार के परिवर्तन देखे जाते हैं। जैसे- एक समय 'मातृ', 'पितृ' और 'भ्रातृ' शब्दों का प्रचार था, धीरे-धीरे परिवर्तन होते-होते इनके स्थान पर क्रमशः 'माता','पिता' और 'भ्राता' का प्रचार हुआ और फिर क्रमशः 'माँ', 'बाप' और 'भाई' का प्रचार हो गया।

1.5.3. पद- परिवर्तन

प्रत्यय विभक्त या क्रिया-चिह्न के योग से जो शब्द बनते हैं, उन्हें 'पद' कहते हैं। प्रत्येक शब्द तब तक किसी वाक्य में प्रयुक्त नहीं होता, जब तक वह पद का रूप ग्रहण नहीं करता। जैसे- 'राम ने रावण को मारा' वाक्य में 'राम ने','रावण को' और 'मारा' ये तीन पद हैं। 'राम' के साथ जब 'ने' विभक्ति का योग हुआ है, तब 'राम ने' कर्ता शब्द बना है, 'रावण' के साथ जब 'को' विभक्ति का योग हुआ है, तब 'रावण को'कर्मपदबना है और 'मारना' क्रिया के साथ जब अन्त में 'आ' प्रत्यय का योग हुआ है, 'तब मारा' भूतकाल का क्रियापद बना है।

1.5.4. वाक्य-परिवर्तन

वाक्यों के निर्माण से भी भाषा-परिवर्तन की दिशा का ज्ञान होता है। प्रायः पदों के संयोग से वाक्य बनते हैं। संस्कृत युग में वाक्य-रचना इतनी व्यवस्थित एवं स्पष्ट थी कि कोई भी पद किसी भी स्थान पर रख दो तब भी वाक्य के अर्थ में कोई परिवर्तन नहीं होता था। जैसे- यदि मैं गांव को जाता हूँ, वाक्य को संस्कृत में कहें तो अहं ग्रामंगच्छामि कह सकते हैं, गच्छाम्यहंग्रामम् कह सकते हैं ग्राम अहं गच्छामि कह सकते हैं, गच्छामिग्रामंअहम् भी कह सकते हैं। इन वाक्यों के अर्थ में कोई परिवर्तन नहीं होता। यदी दिशा कुछ काल तक प्राकृत और अपभ्रंश में भी रही, क्योंकि विभक्तियों एवं प्रत्ययों के संयोग से वाक्य के सभी पद इतने व्यवस्थित ढंग से निर्मित होते थे कि उनको कहीं भी किसी स्थान या क्रम से रख दीजिए उनके अर्थ में कोई परिवर्तन नहीं होता था। परन्तु हिन्दी का आविर्भाव होते ही यह व्यवस्था न रही।

1.5.5. अर्थ- परिवर्तन

भाषा- परिवर्तन की दिशा का ज्ञान अर्थ- परिवर्तन से भी होता है। प्रायः जो शब्द पहले जिस अर्थ में प्रयुक्त होते रहते हैं, कालान्तर में उन शब्दों का प्रयोग अन्य अर्थों में भी होने लगता है। इस अर्थ- परिवर्तन का कहीं विस्तार देखा जाता है, कहीं संकोच देखा जा सकता है और कहीं अर्थ बिल्कुल ही परिवर्तित हो जाता है। जैसे- 'तेल' शब्द का मूल अर्थ था 'तिल का सार', किन्तु कालान्तर में इस शब्द के अर्थ में इतना विस्तार हुआ कि सभी पदार्थों के सार को 'तेल' कहने लगे। इसलिए आज 'सरसों का तेल','मूँगफली का तेल','मिर्च का तेल' और 'मिट्टी का तेल' आदि कहा जाता है। इस प्रकार विविध अर्थ- परिवर्तन भी भाषा-परिवर्तन की ओर संकेत करते हैं। यही कारण है कि अर्थ- परिवर्तन को भी भाषा परिवर्तन की एक दिशा माना जाता है।

1.6. भाषा के विविध रूप-

भाषा का प्रयोग व्यक्ति करता है। प्रत्येक व्यक्ति की भाषा बोलने का ढंग अलग-अलग होता है। उसका उच्चारण, शब्द प्रयोग, वाक्य विन्यास भी दूसरे से

अलग-अलग होता है। इस दृष्टि से जितने व्यक्ति होंगे, भाषा उतने प्रकार की होगी। प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व की छाप उसकी भाषा पर पड़ती है, चाहे वह शिक्षित हो या अशिक्षित। व्यक्ति की शिक्षा-दीक्षा, संस्कार, संस्कृति, जाति, व्यवसाय और परिवार के भेद से उसकी भाषा भी बदल जाती है। एक डाक्टर की भाषा और एक दार्शनिक की भाषा में अंतर पाया जाता है। एक शिक्षित व्यक्ति और एक अशिक्षित व्यक्ति की भाषा में अंतर पाया जाता है। भूगोल, राजनीति, आर्थिक स्थिति और सामाजिक-स्थिति आदि का भी प्रभाव भाषा पर पड़ता है। इनके कारण भाषा-रूप बदल जाते हैं।

भाषा समाज सापेक्ष है और इसकी उपयोगिता समाज में ही सिद्ध होती है। भाषा के विभिन्न रूपों पर चर्चा करते समय सामाजिक पक्ष पर भी ध्यान देना पड़ता है। इसलिए विश्व भाषा (भाषा को सार्वभौमिक रूप) भाषा का अमूर्त रूप होने से इसे छोड़कर व्यक्ति और समाज को आधार मान कर भाषा रूपों की चर्चा की जाती है। भाषा के विविध रूपों को कुछ विद्वानों ने सिर्फ तीन प्रकार ही मानते हैं।

- **भाषा के विविध रूप इस प्रकार हैं वे-**

1. परिनिष्ठित भाषा।
2. विभाषा।
3. बोली।
4. साहित्यिक भाषा।
5. विशिष्ट भाषा।
6. मानक भाषा।
7. राज्य भाषा।
8. राष्ट्र भाषा।
9. अन्तर्राष्ट्रीय भाषा।

1.6.1. परिनिष्ठित भाषा –

जब कोई विभाषा अपने एक सुव्यवस्थित व्याकरण के साथ सभ्य एवं शिक्षित वर्ग के दैनिक व्यवहार एवं साहित्य-रचना में प्रयुक्त होने लगती है। उसे परिनिष्ठित भाषा कहते हैं। इसे 'टकसाली भाषा' भी कहा जाता है। डॉ. श्यामसुन्दर दास ने लिखा है कि - कई विभाषाओं में व्यवहृत होने वाली एक शिष्ट-परिगृहीत विभाषा ही भाषा (राष्ट्रीय भाषा अथवा टकसाली भाषा) (Language or Koine) कहलाती है। भाषा विज्ञान कोश में लिखा है कि किसी भाषा की उस विभाषा को परिनिष्ठित- भाषा कहते हैं, जो अन्य विभाषाओं पर अपनी साहित्यिक एवं सांस्कृतिक श्रेष्ठता स्थापित कर लेती है और उन विभाषाओं को बोलने वाले भी उस भाषा को सर्वाधिक उपयुक्त समझने लगते हैं।

1.6.2. विभाषा –

जब कोई बोली धार्मिक श्रेष्ठता अथवा भौगोलिक विस्तार के कारण किसी प्रान्त या उप प्रान्त में प्रचलित हो जाती है, तब उसे 'विभाषा' या उपभाषा कहा जाता है । भाषा विज्ञान-कोश में विभाषा को Dialect कहा गया है और उसकी परिभाषा करते हुए लिखा है कि – किसी भाषा के उस विशिष्ट रूप को विभाषा कहते हैं। जो किसी प्रदेश-विशेष अथवा भौगोलिक-क्षेत्र में बोली जाती है । जो अपने उच्चारण, व्याकरण सम्बन्धी रूप और शब्द प्रयोग की दृष्टि से अन्य परिनिष्ठित अथवा साहित्यिक भाषाओं से भिन्न होती है। परन्तु इतनी भिन्न नहीं होता कि उसे किसी एक भाषा की अन्य विभाषाओं से बिल्कुल भिन्न माना जाता है। इस दृष्टि से भारत में प्रचलित ब्रज, अवधी, बंगला, गुजराती, पंजाबी, मराठी, तमिल, मलयालम, कन्नड़ और उड़िया आदि सभी 'विभाषाएँ' हैं।

1.6.3. बोली -

किसी सीमित क्षेत्र की उस उपभाषा को 'बोली' कहते हैं । जो उस क्षेत्र के निवासियों की स्वभावतः घरेलू बोलचाल की भाषा होती है । उच्चारण तनिक भी साहित्यिक नहीं होती और जिसकी रूप-रचना में स्थानीय भेद स्पष्ट विद्यमान रहता है क्योंकि वह अपनी समीपवर्ती बोली से भी भिन्न होती है। प्रायः किसी एक भाषा की कितनी ही बोलियाँ होती हैं । इसलिए बोली को किसी भाषा की कितनी ही बोलियाँ होती हैं। एक बोली अपनी निकटस्थ बोली से स्पष्ट ही भिन्न सुनाई पड़ती है।

1.6.4. साहित्यिक भाषा -

जो भाषा मुख्यतया साहित्य-रचना के लिए व्यवहृत होती है, उसे 'साहित्यिक भाषा' कहते हैं। यह भाषा बोलचाल की भाषा से कुछ भिन्न होती है और परिनिष्ठित भाषा के सन्निकट होती है ।बोलचाल की भाषा में प्रायः अपरिष्कृत एवं असंस्कृत शब्दों का भी व्यवहार देखा जाता है, जबकि साहित्यिक भाषा पूर्णतया परिमार्जित परिष्कृत एवं सुसंस्कृत होती है । कवि और लेखक अपनी-अपनी रचनाओं में इसी भाषा का व्यवहार किया करते हैं। प्रायः साहित्यिक परिवर्तनशील होती है, क्योंकि समय के अनुसार उसमें परिवर्तन होते रहते हैं। उदाहरण के लिए हिन्दी को ही ले सकते हैं। साहित्यिक भाषा में अब उर्दू-फारसी के ही नहीं, अपितु अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग खुले आम होता है । इस प्रकार साहित्यिक भाषा समयानुसार बदलती रहती है और इसका क्षेत्र किसी एक प्रदेश या भू-खण्ड तक सीमित नहीं रहता।

1.6.5. विशिष्ट भाषा –

जो भाषा बोली, विभाषा एवं परिनिष्ठित भाषा से सर्वथा भिन्न विविध व्यवसायों अथवा कार्यों की शब्दावली से निर्मित होती है उसे विशिष्ट भाषा कहते हैं । जो विशिष्ट भाषा से तात्पर्य उस भाषा से है, जिसका प्रयोग विशिष्ट परिस्थितियों में कुछ

लोगों का समुदाय ही करता है। जैसे- कानूनी की भाषा। अपने विशिष्ट प्रयोग के लिए वकील या जज जिस भाषा का प्रयोग करते हैं, वह प्रचलित बोली से भिन्न कानूनी भाषा कहलाती है। कभी-कभी यह भाषा गुप्त सम्पर्क का भी माध्यम होती है। परन्तु इन सभी भाषाओं में एक बात समान रूप से देखी जाती है कि ये सभी भाषाएँ किसी एक ही सामान्य भाषा का विशिष्ट रूप होती हैं और प्रयोक्ताओं की आवश्यकता के अनुकूल अपना रूप ग्रहण किया करती हैं।

1.6.6. मानक भाषा-

विश्व की अधिकांश भाषाओं में कई क्षेत्रीय भेद / रूपांतरण पाए जाते हैं। ऐसी स्थिति में उसका मानवीकरण आवश्यक हो जाता है, ताकि उस भाषा में एकरूपता स्थापित किया जा सके। अतः ऐसी भाषा जिसका मानकीकरण हो गया हो और एक परिनिष्ठित रूप निश्चित हो गया हो, मानक भाषा या परिनिष्ठित भाषा कहलाती है। मानक भाषा शब्द को अंग्रेजी में Standard language कहते हैं। 'मानक भाषा' में उसके क्षेत्रीय रूप (बोलियाँ) शामिल नहीं होते हैं। यह भाषा का वह रूप होता है जिसे नगरों के पढ़े-लिखे लोग प्रयोग करते हैं। जैसे- हिन्दी भाषा के अनेक क्षेत्रीय रूप, बोलियाँ और उपभाषाएँ हैं, जो मानक हिन्दी से भिन्न हैं। क्योंकि मानक हिन्दी खड़ी बोली के परिष्कृत रूप को कहा जाता है, जिसका प्रयोग शिक्षा, शासन, मीडिया और साहित्य आदि में होता है।

1.6.7. राज्य भाषा –

जो भाषा किसी राज्य के सरकारी कार्यों में सर्वाधिक प्रयुक्त होती है, उसे 'राज्य भाषा' कहते हैं। 'राज्य भाषा' में केन्द्रीय एवं प्रान्तीयसरकारें अपने पत्र-व्यवहार किया करती हैं। सरकारी आदेश एवं आज्ञाएँ भी इसी भाषा में मुद्रित होती हैं और केन्द्र एवं प्रदेशों के मध्य सम्पर्क करने का कार्य भी इसी भाषा के द्वारा होता है। राज्य भाषा सदैव देश में शासनात्मक ऐक्ट् की स्थापना में बड़ी सहायता पहुँचाती है। भारत में पहले संस्कृत राज्य भाषा रही, फिर अंग्रेजों की राज्य-सत्ता स्थापित होने पर प्राकृत एवं अपभ्रंश भाषाएँ राज्य भाषा हो गयीं, फिर मुसलमानों के शासन-काल में फारसी को राज्य भाषा का गौरव प्राप्त हुआ, फिर अंग्रेजों की सत्ता स्थापित होते ही अंग्रेजी ने यहाँ पर राज्य भाषा का स्थापना ग्रहण कर लिया और भारत के स्वतन्त्र होते ही हिन्दी को राज्य भाषा घोषित किया गया। परन्तु सभी प्रदेशों के साथ सम्पर्क स्थापित करने के लिए केन्द्र ने हिन्दी को ही राज्य भाषा के रूप में स्वीकार किया है, क्योंकि हिन्दी ही एक ऐसे भाषा है, जिसे भारत के साठ प्रतिशत निवासी बोलते एवं अच्छी तरह समझते हैं।

1.6.8. राष्ट्र भाषा –

किसी देश की 'राष्ट्र भाषा' उस देश की बहुसंख्यक लोगों की भाषा को माना जाता है। जब कोई भाषा राष्ट्र के विस्तृत भू-भाग में प्रयुक्त होने लगता है तो वह स्वतः

'राष्ट्र भाषा' के पद पर आसानी हो जाती है। भोलानाथ तिवारी के शब्दों में, जब कोई आदर्श भाषा बनने के बाद भी उन्नत होकर और भी महत्वपूर्ण बन जाती है तथा पूरे राष्ट्र या देश में अन्य भाषा क्षेत्र तथा अन्य भाषा परिवार क्षेत्र में भी उसका प्रयोग सार्वजनिक कामों आदि में होने लगता है तो वह 'राष्ट्र भाषा' का पद पा जाती है। 'राष्ट्र भाषा' को अंग्रेजी में National language नाम से जाना जाता है।

जिस भाषा का प्रयोग हम राष्ट्रीय स्तर पर करते हैं, उसे 'राष्ट्र भाषा' कहते हैं। जो किसी प्रांतीय भाषा का ही विकसित होता है। जिसे देश की अधिकांश जनता अपने दैनिक जीवन में प्रयोग करती है। जहाँ 'राष्ट्र भाषा' संवैधानिक रूप से मान्यता प्राप्त भाषा होती है, वहीं 'राष्ट्र भाषा' का देश के संविधान से कोई संबंध नहीं होता है। राष्ट्रभाषा सम्पूर्ण देश में भावात्मक तथा सांस्कृतिक एकता स्थापित करने का प्रधान साधन होती है। जिन देशों में किसी एक भाषा का प्रयोग होता है, उसे आसानी से 'राष्ट्र भाषा' का दर्जा मिल जाता है। परंतु भारत जैसे देश में जहाँ पर कोई भाषाओं का प्रयोग होता है, वहाँ पर 'राष्ट्र भाषा' का स्वरूप उतना स्पष्ट नहीं हो पाता है। फिर भी हिन्दी को 'राष्ट्र भाषा' का दर्जा दिया जाता है, क्योंकि यह देश के अधिकतर भागों में प्रयुक्त होती है।

1.6.9. अन्तर्राष्ट्रीय भाषा-

जो भाषा विभिन्न राष्ट्रों के बीच विचार-विनिमय, पत्र-व्यवहार आदि का माध्यम होती है, वह 'अन्तर्राष्ट्रीय भाषा' कहलाती है। इस भाषाका प्रयोग प्रायःअन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में होता है, क्योंकि जहाँ विविध राष्ट्रों के विभिन्न भाषा भाषी प्रतिनिधि एकत्र होते हैं, वहाँ पारस्परिक विचार-विनिमय के लिए किसी एक ऐसी परिनिष्ठित भाषा का प्रयोग किया जाता है । जो अधिकांश राष्ट्रों में ही प्रचलित होती है और जिसे विश्व के अधिकांश राष्ट्र के प्रतिनिधि अपना लेते हैं। अधिकांश राजनैतिक सम्बन्धों की स्थापना के लिएभी इसी अंग्रेजी भाषा का व्यवहार होता है, अंतर्राष्ट्रीय समाचार इसी भाषा में प्रसारित किये जाते हैं और अन्तर्राष्ट्रीय दूर-समाचार-व्यवस्था अथवा टेलीप्रिंट आदि में भी इसी भाषा का प्रयोग सर्वाधिक होता है।

- **राष्ट्र भाषा और राज्य भाषा में अंतर –**

राष्ट्र भाषा, राष्ट्र / दोश के लोगों की संपर्क भाषा होती है। जबकि राजभाषा केवल सरकार के कामकाज का भाषा होती है। अधिकतर देशों में दोनों एक ही भाषा होती है । राष्ट्र भाषा का विकास स्वतः स्फूर्त और प्रवाहमान होता है, जबकि राजभाषा शासन तंत्र की नीतियों के संयोजन का साधन है।

1.7. सारांश :

इस इकाई में आप- सबसे पहले भाषा के अर्थ को समझ सकेंगे। इसके साथ-साथ भाषा का प्रयोग हम सभी के लिए बड़ा ही सहज और स्वाभाविक है। अपने दैनिक जीवन में विभिन्न क्रिया कलापों के लिए हम सभी बिना किसी कठिनाई के भाषा का प्रयोग करते रहते हैं। लेकिन अनायास ही कोई यह प्रश्न पूछे कि 'भाषा

किसे कहते हैं?' तो उत्तर देना कठिन होगा । क्योंकि यह प्रश्न एक ओर भाषा की संरचना से जुड़ा है तो दूसरी ओर भाषा के प्रयोग से । पिछले कई दशकों के दौरान भाषा के क्षेत्र में अनेक अध्ययन तथा शोध कार्यों से एक बात बहुत स्पष्ट रूप से उभर कर सामने आई और वह यह है कि भाषा संरचना की दृष्टि से जटिल है तथा प्रयोग की दृष्टि से बहुत आसानी (आयामी) । भाषा की संरचना को मुख्य रूप से एक जीवंत तथ्य के रूप में देख सकते हैं । अंतः भाषा केवल 'ध्वनियों का समूह' या 'अभिव्यक्ति का माध्यम मात्र' नहीं है । वह मनुष्य की व्यक्तिगत और सामाजिक अस्मिता की परिचायक भी है । साथ ही साथ भाषा मनुष्य के मानसिक और बौद्धिक स्तर का मापदण्ड भी है । भाषा ही वह एक मात्र कड़ी है जिसने हमारे वर्तमान को हमारे प्राचीन मूल्यों और परंपराओं से जोड़ रखा है ।

1.8. स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न :

1.भाषा की संरचना के बारे में सविस्तार से लिखिए ।
2.भाषा के विविध रूपों के बारे में सविस्तार रूप से लिखिए ।
3. भाषा विकास के मूलकारणों के बारे में लिखिए ।
4.भाषा का अर्थ बताइए और भाषा की परिभाषाओं को सविस्तार बताइए ।

सहायक ग्रंथ :

1. भाषा एवं हिन्दी भाषा- डॉ. सतीशकुमार रोहरा, हिन्दी प्रचार संस्थान, पिशाचमोचन, वाराणसी ।
2. सामान्य भाषा विज्ञान-बाबूराम सक्सेना, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग ।
3. भाषा-विज्ञान एवं भाषा-शास्त्र- डॉ. कपिलदेवद्विवेदी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी ।
4. भाषा-विज्ञान के सिद्धान्त और हिन्दी भाषा- डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ ।
5. आधुनिक हिन्दी व्याकरण और रचना- डॉ. वासुदेवनन्दन प्रसाद, भारती भवन, पब्लिशर्सएण्डडिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली ।

डॉ. सूर्य कुमारी. पी.

2. भाषा विज्ञान –आकृतिमूलक वर्गीकरण

उद्देश्य :

भाषा-विज्ञान एक स्वतंत्र ज्ञानानुशासन है। भाषा-विज्ञान एक जटिल विषय है। यह ज्ञानानुशासन साहित्य से स्वतंत्र एवं विस्तृत अध्ययन की अपेक्षा रखता है। अतः भाषाविज्ञान में प्रवेश करने के पूर्व भाषा के स्वरूप से परिचित होना आवश्यक है। प्रस्तुत इकाई का यही प्रमुख उद्देश्य है कि इस इकाई के अध्ययन से विद्यार्थी विविध विद्वानों द्वारा दी गई भाषाविज्ञान की परिभाषाओं को जान सकेंगे। इसके साथ-साथ विद्यार्थी स्वयं भाषाविज्ञान की परिभाषा को शब्दबद्ध कर सकेंगे।

इकाई- **II**

2.1. प्रस्तावना :
2.2. भाषा-विज्ञान का अर्थ और परिभाषाएँ:
2.2.1. भाषा-विज्ञान की अर्थ-
2.2.2. भाषा-विज्ञान की परिभाषाएँ -
2.3. भाषा- विज्ञान की शाखाएँ:
2.3.1. ध्वनिविज्ञान (**Phonology**)
2.3.2. रूपविज्ञान (**Morphology**)
2.3.2.1. (क) शब्द-विज्ञान
2.3.2.2. (ख) पद-विज्ञान
2.3.3. वाक्यविज्ञान (**Syntax**)
2.3.4. अर्थविज्ञान (**Semantics**)
2.4. भाषाओं का आकृतिमूलक वर्गीकरण:
2.4.1. आकृतिमूलक वर्गीकरण:
2.4.1.**1.** अयोगात्मक भाषा (**Isolation Language**)
2.4.1.2.योगात्मक भाषा (**Agglutinating language**)
(क) अश्लिष्ट (**Agglutinative**)
(ख)श्लिष्ट (**Inflectional**)
(ग) प्रश्लिष्ट (**Incorporating**)
2.5. सारांश :
2.6. स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न :

2.1. प्रस्तावना :

भाषा का अध्ययन एक शास्त्र के रूप में भी हुआ है और विज्ञान के रूप में भी । भाषा-विज्ञान के अंतर्गत भाषा के स्वरूप का अध्ययन किया जाता है । इस इकाई में भाषा विज्ञान से संबंधित कई विद्वानों की परिभाषाओं का अध्ययन करते हुए भाषाविज्ञान की शाखाओं के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे । इसके साथ-साथ भाषाओं केआकृतिमूलक वर्गीकरण की विस्तार रूप से जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।

2.2. भाषाविज्ञान का अर्थ और उसकी परिभाषाएँ:

यहाँ पर हम भाषा-विज्ञान की अर्थ और परिभाषाओं के बारे में विस्तार रूप से जानकारी प्राप्त करेंगे ।

2.2.1. भाषाविज्ञान का अर्थ

'भाषा-विज्ञान' का अर्थ है-भाषा का विज्ञान । भाषा उच्चारण अवयवों से उच्चरित यादृच्छिक ध्वनि प्रतीकों की व्यवस्था होती है । विज्ञान का अर्थ होता है- विशिष्ट ज्ञान ।अतः भाषा-विज्ञान का अर्थ है- भाषा के स्वरूप, प्रकारों और विविध आयामों आदि का गहनता एवं समग्रता में अध्ययन करनेवाला शास्त्र । भाषा-विज्ञान को अंग्रेजी में 'लिंग्विस्टिक्स' (Linguistics) कहते हैं, अर्थात् साइंस ऑफ लैंग्वेज । 'लिंग्विस्टिक्स' शब्द का मूल आधार लैटिन शब्द 'लिंगुआ' है । 'लिंगुआ' शब्द का अर्थ होता है- जिह्वा ।

'भाषाविज्ञान' एक ऐसा ज्ञानानुशासन है जिसमें भाषा का सर्वांगीण अध्ययन किया जाता है अर्थात् भाषा के सभी अंगों-उपांगों का अध्ययन तर्कनिष्ठ आधार पर किया जाता है । इन्साइक्लोपीडियाब्रिटेनिका में भाषा-विज्ञान को 'भाषाओं का विज्ञान' कहा गया है ।

The word philology is here taken as meaning the science of language i.e., the study of the structure & development of language.

कुछ विशिष्ट भारतीय भाषा-चिंतकों के विचार इस प्रकार भाषा-विज्ञान को परिभाषित करते हैं-

2.2.2. भाषाविज्ञान की परिभाषाएँ :

- **डॉ. श्यामसुंदर दास**

भाषा-विज्ञान की सहायता से हम किसी भाषा का वैज्ञानिक दृष्टि से विवेचन, अध्ययन और अनुशीलन करना सिखाते हैं और जब हम इस प्रकार का विवेचन, अध्ययन और अनुशीलन कर लेते हैं, तब उसी दृष्टि से किसी दूसरी भाषा अथवा अनेक भाषाओं का

विवेचन करते हैं तथा एक भाषा के सिद्धांतों तथा नियमों आदि का दूसरी भाषा या भाषाओं के सिध्दांतों और नियमों आदि से मिलन करते हैं और आपस में उनकी तुलना करते हैं। इस अवस्था में इस विज्ञान की सीमा का और भी प्रकार होते हैं और उसे तुलनात्मक भाषा-विज्ञान का नाम देते हैं। सच पूछा जाए तो बिना तुलना के अध्ययन वैज्ञानिक हो ही नहीं सकता। इससे तुलनात्मक भाषा-विज्ञान को ही भाषा-विज्ञान कहते हैं। (भाषा-विज्ञान)

- **डॉ. बाबूराम सक्सेना**

  भाषा तत्वों का अध्ययन भाषा-विज्ञान का विषय है। (सामान्य भाषा-विज्ञान)

- **डॉ. मंगलदेव शास्त्री**

भाषा-विज्ञानउसको कहते हैं जिसमें सामान्य रूप से मानवीय भाषा का किसी विशेष भाषा की रचना और इतिहास का और अंततः भाषाओं या प्रादेशिक भाषाओं के वर्गों की पारस्परिक समानताओं और विशेषताओं का तुलनात्मक विचार किया जा सकता है।

- **डॉ. भोलानाथ तिवारी**

जिस विज्ञान के अंतर्गत, वर्णनात्मक, ऐतिहासिक और तुलनात्मक अध्ययन के सहारे भाषा की उत्पत्ति, गठन, प्रकृति एवं विकास आदि की सम्यक व्याख्या करते हुए, इन सभी के विषय में सिद्धांतों का निर्धारण हो, उसे भाषा-विज्ञान कहते हैं।

- **डॉ. मनमोहन गौतम**

भाषा-विज्ञान वह शास्त्र है, जिसमें ऐतिहासिक एवं तुलनात्मक अध्ययन के द्वारा भाषा की उत्पत्ति, बनावट, प्रकृति, विकास एवं ह्रास आदि की वैज्ञानिक व्याख्या की जाती है। (भाषा-विज्ञान)

- **डॉ. देवेंद्र शर्मा**

भाषा-विज्ञान का सीधा अर्थ है, भाषा का विज्ञान और विज्ञान का अर्थ है- विशिष्ट ज्ञान। इस प्रकार भाषा का विशिष्ट ज्ञान भाषा-विज्ञान कहलाता है। (भाषा-विज्ञान की भूमिका)

- **डॉ. अंबाप्रसाद**

भाषा-विज्ञानवह विज्ञान है, जिसमें भाषाओं का सामान्य रूप से या किसी एक भाषा का विशिष्ट रूप से प्रकृति, संरचना, इतिहास, तुलना और प्रयोग आदि की दृष्टि से सिद्धांत निश्चित करते हुए, वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया जाता है। (भाषा-विज्ञान: सिद्धांत और प्रयोग)

- **डॉ.कैलाशचंद्रभाटिया**

भाषा-विज्ञान का तात्पर्य उस शास्त्र से है, जिससे भाषा का तात्विक विश्लेषण मात्र किया जाता है। (भाषा-भूगोल)

- **डॉ. दानबहादुर पाठक**

भाषा-विज्ञान वह विज्ञान है, जिसमें मानव द्वारा प्रयुक्त एवं व्यक्त वाक् (भाषा) का पूर्णतया वैज्ञानिक अध्ययन किया जाता है। (भाषा-विज्ञान)

- **डॉ. गुणे**

तुलनात्मक भाषा-विज्ञान या केवल भाषा-विज्ञान भाषा का विज्ञान है.... भाषाओं के किसी विशेष वर्ग के तुलनात्मक भाषा-विज्ञान का उद्देश्य है- उनकी पारस्परिक समानताओं का अन्वेषण एवं उनकी व्याख्या।

2.3. भाषा- विज्ञान की शाखाएँ:

भाषाविज्ञान भाषा का सर्वांगीण अध्ययन प्रस्तुत करता है, अतः उसमें भाषा के सभी घटकों का अध्ययन होता है। भाषाविज्ञान का अध्ययन विविध अंगों, भागों एवं शाखाओं में किया जाता है। प्रायः भाषा के चार प्रमुख अंग माने गये हैं -1.ध्वनि (Sound), 2. पद या शब्द (From) 3. वाक्य (Sentence), 4. अर्थ (Meaning) । इन चारों अंगों को आधार बनाकर भाषाविज्ञान के अनेक शाखाएँ स्थापित हुई हैं। कुछ विद्वानों ने इसी आधार पर भाषा-विज्ञान की छः शाखाएँ मानी हैं, कुछ ने पाँच में ही संतोष किया है और कुछ ने चार शाखाएँ स्वीकार की हैं। जैसे- **डॉ. श्यामसुन्दर दास** ने भाषा-विज्ञान की छः शाखाएँ मानी हैं-

1. ध्वनि विचार।
2. ध्वनि-शिक्षा।
3. रूप-विचार।
4. वाक्य- विचार।
5. अर्थ-विचार आदि।

ध्यानपूर्वक देखा जाये तो पता चलेगा कि उक्त शाखाओं में से ध्वनि-विचार और ध्वनि-शिक्षा को पृथक-पृथक शाखाओं के रूप में स्वीकार करना उचित नहीं है।**डॉ. दास** ने लिखा है कि- ध्वनि-विचार या ध्वनि-विज्ञान के अन्तर्गत ध्वनि के परिवर्तनों का तात्विक विवेचन तथा ध्वनि-विकारों का इतिहास आदि सभी बातें आ जाती हैं। **प्रो. देवेन्द्रनाथ शर्मा** ने भी भाषा विज्ञान की छः शाखाएँ स्वीकार की हैं-

1. ध्वनिविज्ञान।
2. पदविज्ञान।
3. वाक्यविज्ञान।
4. अर्थविज्ञान।
5. कोशविज्ञान तथा
6. भाषिक भूगोल। परन्तु आपने इन छः शाखाओं को तो भाषाविज्ञान के छः अंग रहा है, जबकि भाषाविज्ञान की तीन शाखाएँ बतायी हैं-

1. वर्णनात्मक।
2. ऐतिहासिक तथा
3. तुलनात्मक। यदि ध्यानपूर्वक देखा जाए तो पता चलेगा कि **प्रो. शर्मा** ने जिनको भाषाविज्ञान की शाखाएँ कहा है, वे भाषाविज्ञान के अध्ययन की प्रणालियाँ, पद्धतियाँ एवं रीतियाँ हैं। अतः उन्हें शाखाएँ कहना नितान्त भ्रम है।

डॉ. मंगलदेव शास्त्री ने भाषाविज्ञान की पाँच शाखाएँ मानी हैं-

1. वाक्य-विज्ञान।
2. पद- विज्ञान।
3. ध्वनि-विज्ञान।
4. अर्थ- विज्ञान।
5. प्रागैतिहासिक अनुसंधान। इनमें से डॉ. शास्त्री की पाँचवीं शाखा वही है, जो डॉ. श्यामसुन्दर दास ने 'प्राचीन शोध' के रूप में स्वीकार की है। अतः डॉ. शास्त्री एवं **डॉ. दास** में कोई मौलिक भेद नहीं है। **डॉ. अम्बाप्रसाद**'सुमन' ने भी भाषाविज्ञान की पाँच शाखाएँ स्वीकार की हैं और **डॉ. बाबूराम सक्सेना** ने भाषाविज्ञान की केवल चार प्रमुख शाखाएँ स्वीकार की हैं। **प्रो. नलिनीमोहनसान्याल** ने भी भाषाविज्ञान की चार प्रमुख शाखाएँ स्वीकार की है।

इस प्रकार भाषाविज्ञान की विविध शाखाओं का अनुशीलन करने पर ज्ञात होता है कि विद्वानों ने ध्वनि-विज्ञान , पद-विज्ञान, वाक्य-विज्ञान, शब्द-विज्ञान, अर्थ-विज्ञान, कोश-विज्ञान, व्युत्पत्ति-विज्ञान, भू-भाषा-विज्ञान, भाषा-प्रकार-विज्ञान, शैली-विज्ञान, मनोभाषा-विज्ञान, प्रगैतिहासिकअनुसन्धान, लिपिविज्ञान आदि अनेक शाखाओं की ओर संकेत किये हैं। परन्तु यह स्मरण रखना चाहिए कि भाषा के चार प्रमुख अंग होते हैं- ध्वनि, रूप, वाक्य और अर्थ। अतः भाषा के इन चार प्रमुख अंगों के आधार पर भाषाविज्ञान की चार प्रमुख शाखाएँ ठहरती हैं-

1. ध्वनिविज्ञान (Phonology),
2. रूपविज्ञान (Morphology),

3. वाक्यविज्ञान (Syntax),

4. अर्थविज्ञान (Semantics)।

2.3.1. ध्वनिविज्ञान(Phonology)-

इसे आजकल स्वन्- विज्ञान के नाम से भी पुकारते हैं। इस शाखा के अंतर्गत वाक्य-ध्वनियों का वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन किया जाता है। ध्वनि को भाषा की लघुतम इकाई माना गया है और विभिन्न ध्वनियों के संयोग से भाषा का निर्माण होता है।वाग्यन्त्र से निःसृत ध्वनियाँ विविध प्रकार की होती हैं। इनमें से कुछ नाद एवं कुछ श्वास ध्वनियाँ कहलाती हैं। ध्वनिविज्ञान के अंतर्गत स्वराघात एवं बलाघात का भी सम्यक् अध्ययन किया जाता है। ध्वनिविज्ञान के अंतर्गत उन ध्वनि-नियमों का अध्ययन भी अत्यन्त विशदता एवं वैज्ञानिकता के साथ किया जाता है, जो विविध प्रकार के ध्वनि-परिवर्तनों को देखकर बनाये जाते हैं। इस प्रकार ध्वनिविज्ञान में ध्वनि के उत्पादन, संवाहन एवं ग्रहण सम्बन्धी तीन कार्यों का विशाद अध्ययन किया जाता है।

2.3.2. रूपविज्ञान (Morphology)-

भाषाविज्ञान की यह शाखा आजकल दो उपशाखाओं में विभक्त हो गयी है- शब्दविज्ञान और पदविज्ञान। विभिन्न ध्वनियों के मिलन से 'शब्द' बनता है और जब कोई शब्द वाक्य में प्रयुक्त होने की योग्यता धारण करलेता है, अथवा जब वह सुबन्त (विभक्त) या तिड्न्त (क्रिया-चिह्न) से युक्त हो जाता है, तब वह पद कहलाने लगता है - जैसे 'राम','रावण' और 'मारना' आदि तो 'शब्द' हैं, किन्तु जब वाक्य में प्रयोग करने के लिए इनके साथ विभक्तियों क्रिया-चिन्हों आदि का योग कर दिया जाता है, तब ये 'पद' बन जाते हैं। जैसे- 'राम ने रावण को मारा'। यहाँ 'राम ने','रावण को' और 'मारा' तीनों 'पद' हो गये हैं। इसी कारण 'रूप-विज्ञान' की दो उप-शाखाओं में से एक को 'शब्द-विज्ञान' और दूसरी को 'पद-विज्ञान' कहते हैं।

2.3.2.1. (क) शब्द-विज्ञान

भाषा-विज्ञान की इस उप-शाखा के अन्तर्गत भाषाओं में व्यवहृत उन शब्दों का वैज्ञानिक अध्ययन किया जाता है, जो बोलचाल में काम आते हैं तथा उनका प्रयोग साहित्य में भी होता है। ये सभी शब्द प्रकृति एवं प्रत्यय के योग से बनाये जाते हैं और वाक्यों में प्रयुक्त होकर विविध प्रकाश केअर्थों की प्रतीति कराते हुए विविध कार्यों का सम्पादन किया करते हैं। अन्य विद्वानों ने शब्दों के दस भेद स्वीकार किये हैं, परन्तुभारतीय विद्वानों ने शब्द के तीन भेद ही स्वीकार किये हैं। कुछ विद्वान तो विशेषण को गुणवाचक संज्ञा भी कहते हैं। क्रिया के अन्तर्गत सभी प्रकार के कार्यों का होना या करना आता है। भारत में अव्ययों का अत्यन्त विस्तृत विभाग स्वीकार किया गया है। अंग्रेजी में शब्द के आठ भेद स्वीकार किये गये हैं........ (संज्ञा), (सर्वनाम), (विशेषण), (क्रिया), (क्रिया विशेषण),

(समुच्चयबोधक), (सम्बन्ध -बोधक) तथा (विस्मयादि-बोधक) । इनमें से संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण तथा क्रिया शब्द तो भारत के ही समान हैं और शेष चार प्रकार के शब्दों को यहाँ अव्यय के अंतर्गत माना जाता है । इसके अलावा शब्दविज्ञान के अंतर्गत विविध व्याकरण शब्दों के अतिरिक्त उन विविध प्रकार के शब्दों का भी अध्ययन किया जाता है, जो या तो किसी भाषा के अन्तर्गत तत्सम रूप में प्रचलित रहते हैं या कुछ विकृत रूप में प्रयुक्त होते हैं अथवा अन्य भाषाओं के आगत शब्द होते हैं । सुविधा की दृष्टि से हिन्दी भाषा के शब्दों को तीन भागों में बांटा जाता है- (1) भारतीय आर्य भाषाओं के शब्द, (2) भारतीय अनार्य भाषाओं के शब्द और (3) विदेशी शब्द । इनमें से भारतीय आर्य भाषाओं के शब्दों को छः भागों में बाँटा जा सकता है- (1) तत्सम, (2) तद्भव, (3) तत्समाभास, (4) तद्भवाभास, (5) देशज और (6) द्विज आदि ।

शब्दविज्ञान में संज्ञा से संबंधित लिंग, वचन और कारक आदि का भी वैज्ञानिक अध्ययन किया जाता है । प्राचीन काल में तीन लिंग-पुल्लिंग, स्त्रीलिंग और नपुंसकलिंग तथा तीन वचन- एकवचन, द्वि-वचन और बहुवचन प्रचलित थे । परन्तु आधुनिक भाषाओं में विशेषतया हिन्दी में केवल दो लिंग- पुल्लिंग और स्त्रीलिंग तथा वचन- एकवचन और बहुवचन का ही प्रयोग होता है । इसके साथ-साथ शब्दविज्ञान के अंतर्गत विविध व्याकरणिक शब्दों के अतिरिक्त उन विविध प्रकार के शब्दों का भी अध्ययन किया जाता है । अंतः शब्दविज्ञान में शब्दों के विविध परिवर्तनों एवं उनके उचित कारणों का भी सम्यक् अध्ययन किया जाता है । इसलिए शब्द-विज्ञान, भाषाविज्ञान का एक महत्वपूर्ण अंग माना जाता है ।

2.3.2.2. (ख) पदविज्ञान

भाषाविज्ञान की इस उप-शाखा के अन्तर्गत पद के स्वरूप एवं निर्माण का विश्व अध्ययन किया जाता है । प्रायः ध्वनियों के समुच्चय से शब्द बनता है और शब्द-समुच्चय से वाक्य बनता है । परन्तु किसी भी वाक्य में केवल शब्दों का समुच्चय ही नहीं होता, अपितु उन शब्दों का परस्पर सम्बन्ध जोड़ने वाली विभक्तियाँ प्रत्यय आदि भी होते हैं जैसे -राम, रावण, वाण और मारना आदि शब्दों का समुच्चय है, परन्तु इसे वाक्य नहीं कह सकते । इतना ही नहीं पदविज्ञान में यह भी अध्ययन पदविज्ञान के अन्तर्गत किया जाता है । इतना ही नहीं पदविज्ञान में यह भी अध्ययन किया जाता है कि विविध प्रकार के सम्बन्ध-तत्वों द्वारा शब्द किन-किन भावों का बोध कराया करते हैं जैसे- प्रायः भाषाओं के अन्तर्गत सम्बन्ध-तत्व के द्वारा कारक, काल, लिंग, वचन, प्रेरणार्थक क्रिया आदि का बोध भी होता है।

2.3.3. वाक्य-विज्ञान(Syntax)-

भाषाविज्ञान की इस शाखा के अन्तर्गत विविध पदों से निर्मित वाक्य का वर्गीकरण एवं विश्लेषण करके वैज्ञानिक अध्ययन किया जाता है । भाषा की न्यूनतम सार्थक इकाई वाक्य

माना गया है। इसका प्रमाण यह है कि एक अबोध बालक सर्वप्रथम वाक्य में ही बोलता है। उसका 'अट्टी' और 'आनी' आदि शब्द संक्षिप्त होते हुए भी क्रमशः 'मुझेरोटी दो' और 'मुझे पानी दो' के द्योतक होते हैं। इसके अलावा वाक्यविज्ञान में वाक्य का पदविन्यास सम्बन्धी अध्ययन भी वैज्ञानिक ढंग से करते हैं। प्रत्येक वाक्य में दो बातें अपेक्षित होती हैं- 'उद्देश्य' एवं 'विधेय'। वाक्य में जिसके विषय में कुछ कहा जाता है वह 'उद्देश्य' कहलाता है और जिसके द्वारा उद्देश्य के विषय में कुछ कहा जाता है उसे 'विधेय' कहते हैं जैसे- 'मोहन गाँव जाता है'। इस वाक्य में 'मोहन' उद्देश्य है और 'गाँव जाता है' विधेय है। साथ ही वाक्य के निर्माण के लिए पद-विन्यास सम्बन्धी 'क्रम' को ध्यान में रखना जरूरी होता है।

वाक्य निर्माण के पद-विन्यास के अंतर्गत 'क्रम' से अभिप्राय यह है कि वाक्य में कर्ता, क्रिया और कर्म आदि को किस ढंग से रखना चाहिए। संस्कृत में तो क्रम की तनिक भी आवश्यकता नहीं पड़ती क्योंकि वहाँ तो 'अहं ग्राम गच्छामि','ग्रामं अहं गच्छामि','गच्छामिग्रामंअहम्' और 'गच्छाम्यहंग्रामम्' आदि सभी वाक्य ठीक है और एक ही अर्थ बोधक हैं। परन्तु हिन्दीतथा अंग्रेजी भाषाओं में 'क्रम' का अधिक ध्यान रखना पड़ता है। हिन्दी में पहले कर्ता, फिर कर्म और अन्त में क्रिया आती है जैसे मोहन (कर्ता), रोटी (कर्म), खाता है (क्रिया)। ऐसे ही अंग्रेजी में पहले कर्ता, फिर क्रिया और फिर कर्म आता है जैसे- मोहन (कर्ता) खाता है (क्रिया) रोटी (कर्म)। निकटस्थ अवयवों से अभिप्राय उन शब्दों से है, जो कर्ता तथा कर्म के साथ प्रयुक्त होते हैं।

अतः वाक्य में पदों का क्रम क्या होता है, पदों का अन्वय कैसे किया जाता है, पदान्वय के आधार क्या हैं, हिन्दी में मोहन जाता है ही क्यों लिखा जाता है, मोहन जाती है, क्यों नहीं लिखा जाता, वाक्य कितने प्रकार के होते हैं आदि-आदि विविध प्रश्नों का समाधान वाक्यविज्ञान के अन्तर्गत किया जाता है। वैसे तो पद-विज्ञान एवं वाक्यविज्ञान दोनों मिलते-जुलते से प्रतीत होते हैं, परन्तु दोनों में पर्याप्त अन्तर है - जैसे – पदविज्ञान में केवल इकाई के रूप में प्रयुक्त पदों का अध्ययन किया जाता है, जबकि वाक्यविज्ञान में उन पदों के समूह का अध्ययन किया जाता है। दूसरे, पदविज्ञान में सम्बन्ध-तत्वों द्वारा निर्मित एकाकी पद का ही अनुशीलन किया जाता है, जबकि वाक्यविन्यास में वाक्य के अंगों का पारस्परिक सम्बन्ध, उनके रूपान्तर, क्रम, वाक्य-भेद एवं वाक्य-निर्माण की पद्धति आदि का सम्यक् अध्ययन किया जाता है। यही कारण है कि वाक्यविज्ञान भी भाषा की यथेष्ट जानकारी के लिए अत्यन्त उपयोगी है।

2.3.4. अर्थ-विज्ञान(Semantics)-

जिस प्रकार मानव शरीर का सारा भाग आत्मा है, उसी प्रकार भाषारूपी शरीर की आत्मा अर्थ है। अर्थ- विज्ञान को, अर्थ-विचार भी कहते हैं। इसमें अर्थ किसे कहते हैं? शब्द और अर्थ का क्या संबंध है? अर्थ का निर्धारण कैसे हुआ? अर्थ-परिवर्तन क्यों और कैसे होता

है? अर्थ- परिवर्तन की क्या दिशाएँ हैं? अर्थ- परिवर्तन के क्या कारण हैं? इत्यादि बातों पर विचार किया जाता है। इसका भी समकालीन, ऐतिहासिक और तुलनात्मक तीनों रूपों में अध्ययन हो सकता है। इसमें पर्यायवाची शब्द, नानार्थक शब्द, विलोम शब्द आदि का भी विवेचन किया जाता है।

अर्थविज्ञान के अध्ययन की दो पद्धतियाँ अधिक प्रचलित हैं- प्रथम तो वर्णनात्मक पद्धति कहलाती है, जिसके अन्तर्गत किसी भाषा के शब्दार्थों में जो अर्थ-संकोच, अर्थ विस्तार और अर्थादेश आदि पाया जाता है, उनका सम्यक् अध्ययन किया जाता है। जैसे- 'मृग' शब्द पहले सभी जंगली जानवरों के लिए प्रयुक्त होता था, परन्तु अब हिन्दी में अर्थ-संकोच के फलस्वरूप केवल 'हिरन' के अर्थ का द्योतक हो गया है। ऐसे ही 'गोली' शब्द पहले किसी गोल पदार्थ का ही वाचक था, परन्तु अब अर्थ-विस्तार हो जाने के कारण चूर्ण की गोली, दर्जी की गोली, बंदूक की गोली, खेलने की काँच की गोली आदि अनेक अर्थों का द्योतक हो गया है। ऐसे ही 'महाराज' शब्द पहले किसी बड़े राजा या श्रेष्ठ व्यक्ति के लिए प्रयुक्त होता था, किन्तु अब अर्थादेश के फलस्वरूप रसोइया का वाचक हो गया है। अर्थविज्ञान के अध्ययन की वर्णनात्मक पद्धति के अन्तर्गत शब्दार्थों का तुलनात्मक अध्ययन भी किया जाता है।

अर्थविज्ञान के अध्ययन की दूसरी पद्धति ऐतिहासिक अर्थविज्ञान के नाम से प्रसिद्ध है। इनके अन्तर्गत किसी शब्द के अर्थ की ऐतिहासिक परम्परा का पता लगाया जाता है। जैसे- 'कुशल' शब्द का प्रयोग पहले ऐसे व्यक्ति के लिए प्रयोग होता था कि जो बड़ी चतुरता के साथ बिना हाथ में घाव हुए कुशाएँ तोड़कर लाता था। लेकिन धीरे-धीरे यह शब्द अपने मूल अर्थ से हटकर केवल चतुरता, दक्षता का वाचक हो गया। इस तरह अर्थविज्ञान अपनी ऐतिहासिक पद्धति के द्वारा शब्दार्थों का ऐतिहासिक काल-क्रम की दृष्टि से भी सम्यक् अध्ययन करता है।

अतः यह कह सकते है कि अर्थविज्ञान के अंतर्गत अर्थ क्या है, शब्द और अर्थ का सम्बन्ध क्या है, किन-किन बौद्धिक कारणों से वस्तुओं के अर्थ निश्चित किये जाते हैं, कौन-कौन सी अर्थ- परिवर्तन की दिशाएँ होती है, अर्थ-परिवर्तन के कौन-कौन से कारण होती हैं आदि-आदि इन सभी शब्दार्थ सम्बन्धी विविध समस्याओं का समाधान किया जाता है। यही कारण है कि अर्थविज्ञान भी भाषाविज्ञान का अत्यन्त महत्वपूर्ण अंग है।

2.4. भाषाओं का आकृतिमूलक वर्गीकरण:

भाषाओं के आकृतिमूलक वर्गीकरण से पहले हम भाषा का वर्गीकरण के बारे में भी जानकारी प्राप्त करेंगे। भाषा मनुष्य की अभिव्यक्ति का आधार है और दुनिया भर में खुद को अभिव्यक्त करने के लिए मनुष्य के पास डेरों भाषाएँ हैं।ऐसे में सवाल आता है कि इतनी सारी भाषाएँ आखिर कैसे अस्तित्व में आयी, क्या सभी भाषाएँ एक-दूसरे से संबंधित हैं, इन

भाषाओं का वर्गीकरण कैसे किया जाता होगा? ऐसे डेरों सवाल भाषा के संबंध में हमारे मन में आ सकता है, भाषा विद्वानों के पास भी इस तरह की समस्याएँ आयी और उन लोगों ने अपनी-अपनी समझ के अनुसार विभिन्न आधारों पर भाषाओं का वर्गीकरण किया, जैसे कि- देश, काल, धर्म, महाद्वीप, आकृति और परिवार आदि।

हालांकि इनमें से बहुतों को स्वीकार नहीं किया जाता है क्योंकि उसका वर्गीकरण तर्कसंगत नहीं लगता है; उदाहरण के लिए-देश के आधार पर भाषा के वर्गीकरण को लें तो इसके अंतर्गत मात्र एक देश के अंदर बोलनेवाला भाषा आता है ।लेकिन ये इसलिए असंगत लगता है क्योंकि प्रवास के कारण आज एक देश की भाषाएँ दूसरे देश में भी बोली जाने लगी है । दूसरी बात कि ये जरूरी भी तो नहीं है कि एक देश में सिर्फ एक ही भाषा बोली जाती हो, जैसे कि -भारत को ही ले लें तो यहाँ इतनी भाषाएँ बोली जाती है कि, ये कहना कि ये अमुक भाषा सिर्फ इस देश की भाषा है; असंभव है।

इसी तरह धार्मिक आधार पर, काल के आधार पर एवं महाद्वीप के आधार पर भाषा का वर्गीकरण असंगत लगता है। लेकिन वहीं आकृति के आधार पर और परिवार के आधार पर भाषा का वर्गीकरण आज मान्य है। ये दो महत्वपूर्ण भाषा का वर्गीकरण है जो कि भाषा के बारे में बहुत सारी चीज़ें पूर्ण रूप से स्पष्ट कर देती है।

2.4.1. आकृतिमूलक वर्गीकरण:

आकृतिमूलक वर्गीकरण में समान आकार वाले भाषा को रखा जाता है। ऐसा नहीं है भाषा का ये वर्गीकरण संपूर्णता को प्रदर्शित करता है लेकिन फिर भी ये भाषा के विकास संबन्धित प्रक्रिया को बहुत हद तक स्पष्ट करता है।आकृति अर्थात् शब्द या पद के रचना के आधार पर जो वर्गीकरण किया जाता है, उसे आकृतिमूलक वर्गीकरण कहा जाता है। चूंकि पद में लगने वाले प्रत्ययों का दूसरा नाम रूपतत्व भी है । इसीलिए इसे रूपात्मक वर्गीकरण भी कहा जाता है। इसके साथ ही इसे पदात्मक या वाक्यमूलक वर्गीकरण भी कहा जाता है। इसे इंग्लिश में morphological या syntactical classification कहा जाता है।

आकृतिमूलक वर्गीकरण मुख्य रूप से विश्लेषण पर आधारित है । इसीलिए इसका महत्व स्वयं सिद्ध है। कुल मिलाकर आकृतिमूलक वर्गीकरण में विभिन्न भाषा में प्रयुक्त पद की आकृति अर्थात रूप रचना पर ध्यान दिया जाता है। आकृतिमूलक आधार पर किया गया वर्गीकरण दो प्रकार का होता है; **1. अयोगात्मक भाषा (Isolation Language)** और **2. योगात्मक भाषा (Agglutinating language)**।

2.4.1.1. अयोगात्मक भाषा(Isolation Language) -

अयोगात्मक भाषाओं की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इन भाषाओं में संज्ञा, विशेषण आदि जैसे- व्याकरणिक कोटियां (classes) नहीं होती। एक शब्द कहीं पर संज्ञा, कहीं पर विशेषण, तो कहीं पर क्रिया बन जाता है। अर्थात् इन भाषाओं में वाक्य में शब्द का स्थान ही उसके संबंध को अभिव्यक्त करता है। चीनी अयोगात्मक भाषाओं का उत्तम उदाहरण है। उदाहरणार्थ चीनी भाषा में 'बबबब'का उच्चारण बलाघात के स्थान-परिवर्तन से इस प्रकार किया जा सकता है कि इसके चार भिन्न अर्थ; 'स्त्री', 'राजा', 'खुशामदी'और 'कान उमेठना'हो सकते हैं। प्रकृत्या अंग्रेजी एवं हिंदी अयोगात्मक भाषाएं नहीं हैं किंतु समझने के लिए उनसे भी उदाहरण दिए जा सकते हैं । यथा अंग्रेजी का fish (फ़िश) 'मछली'शब्द तीन भिन्न स्थितियों में मात्र स्थान के आधार पर संज्ञा, विशेषण एवं क्रिया के तीन भिन्न अर्थ दे सकता है।

(1) .This is a golden fish. 'यह सुनहली मछली है।'

(यहां fish संज्ञा का अर्थ देता है ।)

(2).I fish in the pond. 'मैं तालाब में मछली मारता हूं।'

(यहां fish क्रिया का अर्थ देता है।)

(3).He is a fishman. 'वह एक मछली मारनेवाला (मछुआ) आदमी है।'

(यहां fish विशेषण का अर्थ देता है।)

यहां एक उदाहरण हिंदी का भी दिया जा सकता है।

(1) .शेर जंगल का राजा है।

(2). मैंने जंगल में शेर देखा ।

पहले वाक्य में शेर कर्ता का अर्थ देता है और दूसरे वाक्य में कर्म का। अर्थ की यह भिन्नता प्रत्यक्ष रूप से स्थान परिवर्तन के कारण ही है।

ऐसी भाषाओं में संबंध अभिव्यक्ति का दूसरा साधन होता है 'रागात्मक प्रभाव' (Prosodic Effect) रागात्मक प्रभाव के अंतर्गत 'आघात' (स्वराघात, बलाघात) का समावेश होता है । आघात के परिवर्तन से वाक्य में शब्दों की स्थिति बदल जाती है । उदाहरणार्थ अंग्रेजी शब्द Present में यदि आधात प्रथम-r-पर होगा तो शब्द Pr'esentसंज्ञा का अर्थ देगा (अर्थ-'उपहार) और यदि आघात -s-पर होगा तो शब्द Pres'entक्रिया का अर्थ (प्रस्तुत करना) देगा।

2.4.1.2. योगात्मक भाषाएँ (Agglutinating language)-

योगात्मक भाषाओं में प्रकृति तत्व एवं संबंध तत्व का परस्पर योग होता है। यह योग भी कई तरह का हो सकता है। प्रकृति तत्व एवं संबंध तत्व के योग के आधार पर योगात्मक भाषाओं को निम्नलिखित तीन मुख्य उपवर्गों में विभाजित किया जाता है :

(क). अश्लिष्ट (Agglutinative) (ख). श्लिष्ट (Inflectional) (ग). प्रश्लिष्ट (Incorporating) । 'शिलष्ट'शब्द 'चिपकने' के भाव को अभिव्यक्त करता है। इस दृष्टि से इन शब्दों का अर्थ होगा-अश्लिष्टनचिपका हुबा, श्लिष्ट = चिपका हुआ और प्रश्लिष्ट = अच्छी तरह से चिपका हुआ।

2.4.1.2.1. (क) अश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ :(Agglutinative)

अश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ उन भाषाओं को कहते हैं, जिनमें संबंध तत्व प्रकृति तत्व से चिपका हुआ न हो। यहाँ चिपकने का अर्थ है'विकृत'अथवा 'परिवर्तित' होना। जब यह कहा जाता है कि अश्लिष्ट भाषाओं में संबंध तत्व प्रकृति तत्व से नहीं चिपकता, तब उसका तात्पर्य यह है कि प्रकृति तत्व एवं संबंध तत्व के योग होने पर भी दोनों की स्वतंत्र सत्ता स्पष्ट रूप से बनी रहती है तथा न तो प्रकृति तत्व में कोई विकार अथवा परिवर्तन होता है और न ही संबंध तत्व में कोई विकार उत्पन्न होता है । एक उदाहरण लीजिए।

(क) सांप ने फुफकारा।

(ख) मैंने सांप को मारा।

'सांप'शब्द के साथ (क) वाक्य में 'ने'और (ख) वाक्य में 'को' संबंध तत्व जुड़ा हुआ है। संबंध तत्व के जुड़ने के बावजूद प्रकृति तत्व 'सांप'एवं संबंध तत्व 'ने'अथवा 'को' स्पष्ट रूप से अलग दिखाई पड़ते हैं। साथ ही न तो 'सांप'के रूप में और न ही 'ने'अथवा 'को' के रूप में कोई विकार अर्थात परिवर्तन उत्पन्न हुआ है। अतः ये वाक्य अश्लिष्टत्व की प्रकृति को अभिव्यक्त करते हैं।

अश्लिष्ट भाषाएं प्रायः प्रत्यय प्रधान होती हैं । अर्थात संबंध बताने के लिए प्रायः प्रकृति तत्व में प्रत्यय (Affix) जोड़ा जाता है। प्रत्यय यदि प्रकृति के आगे अर्थात पूर्व जोड़ा जाता है तो भाषाएँ'पूर्वयोगी', प्रत्यय यदि प्रकृति के अंत में जोड़ा जाता है तो भाषाएँ'अंतयोगी'कही जाती हैं । अफ्रिका की बांट भाषाएँ पूर्वयोगी भाषाएँ हैं । यद्यपि संस्कृत अश्लिष्ट भाषा नहीं है तथापि इसमें धातु में पूर्वयोग का उदाहरण मिल जाता है । संस्कृत में धातु के पूर्व प्रत्यय 'अ' जोड़ने से भूतकाल का बोध होता है । यथा, पठ् = पड़ना और अपठत= पढ़ा ।

मुंडा परिवार की भाषाएँ मध्ययोगी भाषाएँ हैं । मुंडा परिवार की संथाली भाषा में 'दल' का अर्थ है 'मारना' एवं 'दपल' शब्द का अर्थ है 'परस्पर मारना' । कहना न होगा कि 'दपल' शब्द के मध्य पड़ा हुआ-प-प्रप्ययही 'परस्पर' का संबंध बताता है । मध्ययोग के उदाहरण हिंदी में भी मिल जाते हैं । उदाहरणार्थ 'दौड़ना' का अर्थ है 'खुद दौड़ना'किंतु 'दौड़ाना' का अर्थ है दूसरे से दौड़ने का कार्य करवाना। 'दौड़ना'के मध्य आया हुआ -आ-प्रत्ययही क्रिया को प्रेरणार्थक बनाता है।

हिंदी तथा अन्य भारतीय आर्य भाषाएँ मुख्य रूप से अंतयोगी हैं। हिन्दी में लिंग, वचन, कारक, काल, अर्थ आदि अर्थों को अभिव्यक्त करने के 'अंत प्रत्यय' का ही प्रयोग होता है। यथा 'राम'में 'ने'अंत प्रत्यय जोड़ने में'रामने'रूप बनता है । यहां 'ने'प्रत्यय से 'कर्ता'का अर्थ ज्ञात होता है।

2.4.1.2.2. (ख) श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ:(Inflectional)

यह पहले ही कहा जा चुका है कि श्लिष्ट का अर्थ है 'चिपका हुआ'। 'श्लिष्ट'भाषाओं में संबंध तत्व प्रकृति तत्व से चिपका रहता है, अर्थात संबंध तत्व के जुड़ने से प्रकृति तत्व अथवा संबंध तत्व अथवा दोनों तत्वों में विकार अथवा परिवर्तन आ जाता है। लेकिन फिर भी दोनों तत्वों की स्पष्ट अनुभूति होती है। उदाहरणार्थ हिंदी में'-इक'एक प्रत्यय है। 'धर्म'में '-इक' जोड़ने पर 'धार्मिक'बनता है। मूलरूप शब्द 'धर्म'में '-इक'जोड़ने पर 'धर्म' में विकार आ गया है और 'धर्म'का 'धार्म'बन गया है । 'धर्म'एवं 'धार्मिक' शब्दों से यह स्पष्ट मालूम पड़ता है कि 'धर्म'में'-इक'प्रत्यय जुड़ा हुआ है । इस प्रकार यह उदाहरण भाषा की श्लिष्ट प्रकृति का द्योतक है । श्लिष्ट भाषाओं को विभक्ति-प्रधान भाषाएँ भी कहते हैं क्योंकि ऐसी भाषाओं में संबंध बतलाने का मुख्य कार्य विभक्तियों द्वारा होता है ।

श्लिष्ट भाषाएँ भी दो प्रकार की होती हैं । एक ऐसी भाषा होती है जिसमें संबंध तत्व प्रायः अंत में लगते हैं। ऐसी भाषाओं को 'बहिर्मुख'कहते है। संस्कृतऔरहिंदीऐसी ही भाषाएँ हैं। दूसरे प्रकार की श्लिष्ट भाषाओं में संबंध तत्व मध्य में कहीं भी जुड़ जाता है। ऐसी भाषाओं को 'अंतर्मुख' कहते हैं । अरबी भाषा अंतर्मुख भाषा है। अरबी में तीन व्यंजन

ध्वनियों के मध्य स्वरों के माध्यम से संबंध तत्व की अभिव्यक्ति की जाती है। जैसे 'क....त....ब' तीन-व्यंजन धातु में से'किताब' = 'लिखित रचना', 'कातिब' – 'लिखनेवाला अर्थात विद्यार्थी', 'मकतब'= 'जहां लिखने का काम सिखाया जाये अर्थात 'स्कूल' आदि विभिन्न अर्थ विभिन्न स्वरों के माध्यम से अभिव्यक्ति किए जा सकते हैं।

2.4.1.2.3. (ग) प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ :(Incorporating)

तीसरेप्रकारकीयोगात्मक भाषाओं को 'प्रश्लिष्ट'भाषाएँ कहते हैं । इन भाषाओं में संबंध तत्व प्रकृति से ऐसे चिपक जाता है कि दोनों को एक-दूसरे से अलग कर पाना कठिन होता है। ऐसी भाषाओं में अनेक शब्द परस्पर चिपककर एक शब्द का सा रूप धारण कर लेते हैं । इस प्रकार की भाषाओं को समास प्रधान भाषाएँ भी कहा जाता है क्योंकि समास के द्वारा एक से अधिक शब्द एक-दूसरे से मिलकर सर्वथा भिन्न शब्द का निर्माण कर लेते हैं। संस्कृत मुख्य रूप से प्रश्लिष्ट भाषा ही है । संस्कृत का एक उदाहरण देखिए : 'सृज्' + 'क्तिन्' = 'सृष्टि' में से 'सृज्-'धातु और '-ति' संबंध तत्व को अलग कर पाना कठिन है। प्रश्लिष्टता का एक अच्छा उदाहरण सिंधी का भी लिया जा सकता है। सिंधी में 'मूहुनखेमार्यो' । 'मैंने उसको मारा' । यह पूरा वाक्य प्रश्लिष्टि होकर 'मार्योमांसि'बन सकता है जिसका अर्थ भी ठीक यही है 'मैंने उसे मारा' । 'मार्योमांसि'में 'मार्यो-'क्रिया के पीछे '-मां' एवं '-सि' प्रत्यय जोड़े गए हैं जो क्रमशः 'मूं'एवं 'हुनखे'रूपों का प्रतिनिधित्व करता हैं ।

आवश्यकता पड़ने पर उपर्युक्त उपवर्गों के और अधिक भेद-उपभेद किए जा सकते हैं।भाषाओं की सामान्य प्रवृत्ति प्रश्लिष्ट से अश्लिष्ट होने की है। संस्कृत प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषा थी। प्राकृत एवं अपभ्रंश भाषाएँ मुख्य रूप से श्लिष्ट थी; हिंदी एवं अन्य आधुनिक आर्य-भाषाएँ श्लिष्ट से अश्लिष्ट की ओर बढ़ रही है ।अर्थात हिंदी में कुछ विशेषताएँ श्लिष्ट भाषाओं जैसी हैं एवं बहुत-सी विशेषताएँ अश्लिष्ट भाषाओं जैसी हैं। किसी भी भाषा में अश्लिष्टता, श्लिष्टता तथा प्रश्लिष्टता के उदाहरण मिल सकते हैं किंतु उसको मुख्य प्रवृत्ति के अनुसार ही उसका वर्ग निर्धारित किया जाता है।

2.5. सारांश :

सारांश रूप में कह सकते हैं कि 'भाषाविज्ञान' एक अतिव्यापक संकल्पना है । भाषाविज्ञान का स्वरूप उसके अध्ययन-क्षेत्र के विस्तार के कारण अधिक व्यापक होता गया । जो भाषाविज्ञान अपने पूर्व रूप 'भाषाविज्ञान' के रूप में भाषाओं के ऐतिहासिक, सामाजिक और सांस्कृतिक आदि संदर्भों का अध्ययन करता था, वही भाषाविज्ञान आधुनिक युग में 'भाषा' काअध्ययन उसके भाषिक संदर्भों में करने लगा । अतः भाषिकविज्ञान के अंग विकसित होकर अपने सबल रूप का परिचय देने लगे । तथा ध्वनि-विज्ञान, शब्द-विज्ञान, रूप-विज्ञान, वाक्य-विज्ञान और अर्थ-विज्ञान आदि । भाषा-विज्ञान की शाखाओं को और भाषाओं का आकृतिमूलक वर्गीकरणों को अति व्यापक बना दिया ।

2.6. स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न :

1. भाषा-विज्ञान की शाखाओं के बारे में सविस्तार रूप से बताइए।
2. भाषाओं का आकृतिमूलक वर्गीकरणों के बारे में विस्तार रूप से बताइए।
3. भाषा विज्ञान की अर्थ और परिभाषाओं के बारे में बताइए।
4. भाषा विज्ञान को कितने शाखाओं में विभक्त किया गया है।

सहायक ग्रंथ:

1. भाषा एवं हिन्दी भाषा- डॉ. सतीशकुमाररोहरा, हिन्दी प्रचार संस्थान, पिशाचमोचन, वाराणसी।
2. आधुनिक हिन्दी व्याकरण और रचना- डॉ. वासुदेवनन्दन प्रसाद, भारती भवन, पब्लिशर्सएण्डडिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली।
3. भाषा-विज्ञान के सिद्धान्त और हिन्दी भाषा- डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ।
4. सामान्य भाषा विज्ञान-बाबूराम सक्सेना, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।
5. भाषा-विज्ञान एवं भाषा-शास्त्र- डॉ. कपिलदेवद्विवेदी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।

डॉ. सूर्य कुमारी .पी.

3. भाषाविज्ञान का इतिहास- मुनित्रय

उद्देश्य :

जिनभाषाविदों की ज्ञान-साधना ने 'भाषा' कीसूक्ष्म स्तर से जांच-पड़ताल करते हुए प्रत्यक्ष जीवन-क्षेत्र में उस भाषा के विशिष्ट ज्ञान के महत्व को स्थापित कर दिया, उन भाषाविदों के परिचय, उनके प्रदेय तथा उनकी ऐतिहासिक भाषा-ज्ञान यात्रा का परिचय विद्यार्थियों को करवाना ही इस इकाई का प्रमुख उद्देश्य है। प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने पर –विद्यार्थि भाषाविज्ञान को प्राप्त भारतीय भाषाविदों के प्रदेय को जान सकेंगे। भाषा को जानने के यूरोपीय प्रयासों से वे परिचित होंगे। प्रमुख भाषाविदों का अवधान बताने में समर्थ होंगे।

इकाई- III

3.1. प्रस्तावना :
3.2. भाषाविज्ञान का इतिहास:
    3.2.1. मुनित्रयों का जीवन-परिचय :
3.3. भारतीय भाषाविज्ञान की विकास-यात्रा :
3.4. प्रमुख भारतीय भाषाविद-मुनित्रय:
    3.4.1. पाणिनि:
    3.4.2. कात्यायन :
    3.4.3. पतंजलि :
3.5. सारांश :
3.6. स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न :

3.1. प्रस्तावना :

भाषा विज्ञान का अध्ययन-अस्तित्व यूरोप, अमेरिका और चीन तथा जापान में मिलता है। किंतु एशियाई महाद्वीप में भारत ही वह प्राचीन देश है, जहाँ प्रकंडभाषाविद हुए। इन्होंने न केवल भाषाशास्त्र की स्थापना की, प्रयुक्त भाषाशास्त्र को परिपक्वता के शिखरों पर लाकर खड़ा किया। संस्कृताचार्यपाणिनि की 'अष्टाध्यायी' को आज भी पाश्चात्य वैज्ञानिक वर्णनात्मक भाषाविज्ञान का ऐसा ग्रंथ मानते हैं, जो अपनी उत्कृष्ठता में 'न भूतो न भविष्यति' है। भाषाविज्ञान की इतिहास-यात्रा का विस्तारपूर्वक विवेचना प्रस्तुत है।

3.2. भाषाविज्ञान का इतिहास :

भाषा विज्ञान नाम आधुनिक है। पाश्चात्य जगत से Philology या Linguistics के अनुवाद के रूप में भारत में आया है। पश्चिम में भाषाविज्ञान संबंधी अध्ययन 18वीं शताब्दी

के अन्तिम चरण में ही प्रारम्भ हुआ परन्तु भारत में भाषा संबंधी चिन्तन बहुत प्राचीन काल में ही प्रारम्भ हो गया था । डॉ. कपिलदेवद्विवेदी ने कालीन चिन्तन का बहुत शोधापूर्णविविरण प्रस्तुत किया है । भाषाविज्ञान का इतिहास के बारे में 1.प्राचीन अध्ययन में, 2.मध्यकालीन भाषाओं का अध्ययन और 3.आधुनिक भाषाओं का अध्ययन में सोदाहरण रूप से समझाया गया है । प्राचीन अध्ययन के अंतर्गत खासकर प्राचीन भाषाओं का अध्ययन किया गया है ।

1. प्राचीन भाषाओं का अध्ययन को फिर से तीन काल-खंडों में विभाजित किया गया है । वे-
(क) पाणिनि से पूर्व का अध्ययन ।
(ख) पाणिनि कालीन अध्ययन ।
(ग) पाणिनि के पाश्चात का अध्ययन ।

2. मध्यकालीन भाषाओं का अध्ययन को तीन प्रकार विभाजित किया गया है । वे-
(य) पालि का अध्ययन ।
(र) प्राकृत एवं अपभ्रंश का अध्ययन ।
(ल) अन्य ।

3. आधुनिक भाषाओं का अध्ययन को विस्तार रूप से विश्लेषण किया गया है ।

भारत में भाषाशास्त्रीय चिन्तन करनेवालों के बारे में वैदिक काल के वेदों में और ब्राह्मण ग्रंथों में भाषाशास्त्रों का उल्लेख हमें स्पष्ट रूप से दिखाई देता है । भाषाविज्ञान का इतिहास में ही अपने मुनित्रय का उल्लेख भी हम देख सकते हैं । उनमें सर्वप्रथम **पाणिनि** हैं- आचार्य पाणिनि विश्व के सबसे बड़े वैयाकरण हैं । भाषा-शास्त्र के इतिहास में इनका नाम मूर्धन्य है । भारतीय एवं पाश्चात्य सभी भाषाशास्त्रियों का इस विषय में एक मत हैं कि पाणिनि ने ही सर्वप्रथम भाषाशास्त्र की सर्वांगीण व्याख्या की है । उन्होंने संस्कृत भाषा का जितना सूक्ष्म विवेचन किया है, उतना विश्व की किसी भाषा का व्यापक अध्ययन नहीं हुआ है । पाणिनि का व्याकरण पाश्चात्य भाषाशास्त्रियों के लिए भी आदर्श ग्रन्थ रहा है । अतएव सभी मूर्धन्य भाषाशास्त्रियों ने पाणिनि के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की है । पाणिनि ने भाषाशास्त्र के विभिन्न अंगों-ध्वनि-विज्ञान, पद-विज्ञान, वाक्य-विज्ञान अर्थविज्ञान और तुलनात्मक व्याकरण-को बहुत आगे बढ़ाया है ।

3.2.1. मुनित्रयों का जीवन-परिचय :

पाणिनि के जीवन-चरित का प्रामाणिक विवरण अप्राप्त है । कुछ प्राप्तविवरणों के अनुसार इनकी माता का नाम 'दाक्षी' था महाभाष्य (1-1-20) में पाणिनि को दाक्षीपुत्र कहा गया है । कैयट के अनुसार 'पाणिनि' के पिता का नाम पाणिनि था । पाणिनि का एक नाम 'शालातुरीय' है । इससे ज्ञात होता है कि इनके पूर्वज शलातुर ग्राम (पेशावर में कटक के

समीप लाहुर ग्राम, प्राचीन नाम शलातुर) के निवासी थे । इनकी मृत्यु के विषय में 'सिंहोव्याकरणस्य' श्लोक के आधार पर किंवदन्ती है कि पाणिनि को एक शेर ने मारा था ।

- **पाणिनि की रचनाएँ- अष्टाध्यायी:**

यहपाणिनि की सर्वोत्कृष्ट रचना है । इसमें लौकिक संस्कृत के साथ ही वैदिक व्याकरण भी दिया गया है । सूत्र-पध्दति से लिखा गया है । इसमें आठ अध्याय हैं, अतः ग्रन्थ का नाम 'अष्टाध्यायी' पड़ा । इसमें सूत्रों की संख्या 3997 है । इसके विभिन्न अध्यायों में इन विषयों का विवेचन है- संधि, कारक, कृत और तध्दित प्रत्यय, समास, सुबन्त और तिङन्त प्रकरण, प्रक्रियाएँ, परिभाषाएँ, दिरुक्त कार्य तथा स्वर-प्रक्रिया । इनके अतिरिक्त पाणिनि की अन्य रचनाएँ ये मानी जाती हैं- 1. धातु-पाठ, 2. गणपाठ, 3. उणादिसूत्र, 4. लिंगानिशासन । ये चारों अष्टाध्यायी के परिशिष्ट के रूप में हैं । इनके अतिरिक्त दो अन्य ग्रंथ पाणिनि के नाम से मिलते हैं, परन्तु इनकी प्रामाणिकता संदिग्ध है । ये ग्रन्थ हैं 1. जाम्बवती-विजय या पाताल-विजय (महाकाव्य), 2. द्विरुपकोष (कोषग्रन्थ) ।

- **कात्यायन:**

पाणिनि के परवर्ती वैयाकरणों में कात्यायन का स्थान प्रथम है । कात्यायन ने अष्टाध्यायी के सूत्रों पर वार्तिक की रचना की है । अष्टाध्यायी के सूत्रों में आवश्यकता संशोधन, परिवर्तन और परिवर्धन के लिए कात्यायन ने जो नियम बनाएँ हैं, उन्हें वार्तिक कहते हैं । वार्तिक का लक्षण है-

उक्तानुक्तरुक्त-चिन्ता वार्तिकम् (काव्यमीमांसा प. 5)

इसमें **उक्त** का अर्थ है- वर्णित नियमों के अपवाद नियमों का वर्णन, **अनुक्त**छुटे हुए नियमों का उल्लेख **दुरुक्त**-भूलचूक का सुधार । इससे ज्ञात होता है कि कात्यायन ने पाणिनि के सूत्रों से छूटे हुए नियमों का उल्लेख किया है, अपवादों का वर्णन किया है और भूलचूक का सुधार किया है । वार्तिक की दूसरी व्याख्या भी है-

'वत्तेर्व्याख्यान'वार्तिकम्–

सूत्रों के तात्पर्य को बताने वाली व्याक्या को वत्ति कहते हैं और वत्ति के विशद विवेचन को वार्तिक कहते हैं । कात्यायन ने अपने वार्तिकों में इन लक्ष्यों की पूर्ती की है । अतएव कात्यायन को वार्तिककार भी कहा जाता है ।

- **पतंजलि:**

पाणिनीय व्याकरण में मुनित्रय का उल्लेख है । इसमें तीन मुनि आते हैं- पाणिनि, कात्यायन और पतंजलि । इनमें भी पूर्व की अपेक्षा बाद वाला आचार्य अधिक प्रामाणिक है ।

'यथोत्तरंमुनीनांप्रमाण्यम्' ।पतंजलि ने पाणिनि की अष्टाध्यायी और कात्यायन के वार्तिकों का आश्रम लेते हुए अष्टाध्यायी पर महाभाष्य नाम की सर्वांगीण व्याख्या की है। भाषा की सरलता, विशदता, स्वाभाविकता और विषय-प्रतिपादन की उत्कृष्ट शैली के कारण महाभारत सारे संस्कृत वाङ्मय में आदर्श ग्रन्थ है। व्याकरण के दार्शनिक तत्वों को भी सरल और सुबोध भाषा में समझाया गया है। यह व्याकरण का ही ग्रन्थ न होकर एक विश्वकोष है। इसमें तत्कालीन ऐतिहासिक, सामाजिक, भौगोलिक, धार्मिक और सांस्कृतिक तथ्यों का भण्डार है। इसमें भाषा शास्त्र के सभी पक्षों पर विशद चिन्तन हुआ है।

पतंजलिपुष्यमित्र (150 ई.पू.) के समय में हुए थे। ये पुष्यमित्र के अश्वमेध यज्ञ में ऋत्विज् थे। अतः इनका समय 150 ई. पू. के लगभग है। इनकी प्रमुख रचनाएँ हैं – 1. अष्टध्यायी की विस्तृत व्याख्या-महाभाष्य, 2. योगसूत्र (योगदर्शन), 3. सामवेदीय निदान-सूत्र, 4. महानन्द-काव्य, 5. चरकसंहिता का परिष्कार।

पतंजलि के अनुसार कात्यायन दाक्षिणात्य थे। इनका दूसरा नाम वररूचि भी है। कात्यायन का समय 350 ई. पू. लगभग माना जाता है। वार्तिकों के अतिरिक्त इनकी एक काव्य-रचना **'स्वर्गारोहण'** भीमानी जाती है।

3. 3. भारतीय भाषाविज्ञान की विकास-यात्रा :

भाषा-विज्ञान का बीजारोपणशताब्दियों पूर्व भारत में संपन्न हो चुका। वेद, प्रतिशाख्य और पाणिनि आदि इसके पुरोधा हैं। पाणिनि के पूर्व ऋग्वेद में वाक्-उत्पत्ति की प्रक्रिया का वर्णन है। अतः भाषा-चिंतन के अंतर्गत, शब्द-निर्वचन से संबंधित अभिव्यक्ति कौशल्य का विश्लेषण विश्व के प्राचीनतम ग्रंथ 'ऋगवेद' सेही प्रारंभ हो चुका था। अर्थवेद में भाषा का व्युत्पत्तिपरक पक्ष विवेचित है। ब्राह्मण एवं आरण्यक ग्रंथ में शब्द-निर्वाचन तथा शब्द-व्युत्पत्ति का विश्लेषण तो अपने परिपक्व अवस्था तक पहुँच गया था। पद-पाठों में संधि और समास-विग्रह द्वारा श्लिष्ट वाक्यों तथा वाक्यों के श्लिष्ट शब्दों को अलग करने एवं सुराघात द्वारा अर्थोत्पत्ति की प्रक्रिया पर चिंतन हुआ। वैदिक ऋषियों ने 'शिक्षा' नामक वेदांत रचा 'शिक्षा' को इस प्रकार परिभाषित किया गया-वह विद्या जो स्वर और वर्ण आदि उच्चारण के प्रकार का उपदेश दे, वह 'शिक्षा' है। दरअसल उच्चारण की शुध्दता के प्रशिक्षण हेतु शिक्षा ग्रंथों का निर्माण किया गया।

शिक्षा ग्रंथ में प्रातिशाख्य, पाणिनीय शिक्षा, याज्ञवल्कय शिक्षा, वाशिष्ठी शिक्षा, कात्यायनी शिक्षा, मांडव्य शिक्षा, अमोघनंदिनी शिक्षा, केशवी शिक्षा, वर्णरत्नप्रदीपिका, स्वरांकुश शिक्षा, षोडश श्लोकी शिक्षा, स्वर-भक्ति-लक्षण शिक्षा, नारदीय शिक्षा, मंडुकी शिक्षा आदि का समावेश है। वर्ण, स्वर-मात्र, बल, स-तान वेद पाठ करने हेतु ध्वनि के आरोह-अवरोह, उच्चारण के शुध्दता तथा समय-ज्ञान आदि की विधिवत शिक्षा इन शिक्षा-

ग्रंथों के माध्यम से दी गयी ।

'शिक्षा' और 'प्रातिशाख्य' ग्रंथों की भांति 'निघंटु' एवं 'निरुक्त'ग्रंधों का भी अनन्य महत्व है । भाषाविज्ञान पर आधृत भारत के प्राचीनतम ग्रंथ 'निरुक्त' माने जाते हैं । 'निघंटु' में वैदिक शब्दों का संकलन उनके पर्यायवाची शब्दों के साथ है तो निरुक्त में शब्द, अर्थ, क्रिया और कृदंता आदि पर गंभीर विचार के साथ-साथ पदों के नाम, उपसर्ग, निपात और आख्यात आदि के बारे में भाषा-विज्ञान से संबंधित प्रारम्भिक अध्ययन मिलाता है । यास्क ने निघंटु को परिभाषित करते हुए लिखा है – वह शब्द-समूह जो वेदों से चुनकर एकत्र किए हुए शच्दों का अर्थ-दयोतनकरे ।

भाषाविज्ञान के कोश-विज्ञान का अध्ययन करनेवालों के लिए वह एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है । यास्क के अतिरिक्त निघंटुकारों में प्रजापति कश्यप, कौत्स्य, शाकपूणि का समावेश है । 'निरुक्त' की व्याख्या करते हुए सायण ने लिखा है-

'अथर्वबोधेनिरपेक्षतयापद्जातंयत्रउकतंतत्रनिरुक्तं' अर्थात् 'अर्थ की जानकारी के लिए स्वतंत्र रूप से जो पदों का संग्रह है' वही निरुक्त है । निरुक्त में वर्णागम, वर्णविपर्यय, वर्ण-विकार, वर्ण-नाश और धातु के अर्थविस्तार का विवेचन किया गया है । भाषा-विज्ञान की दृष्टि से ध्वनि-विज्ञान, रूप विज्ञान तथा अर्थ विज्ञान का अध्ययन ही निरुक्त का आधारभूत अध्ययन था । इस प्रकार भाषाविज्ञान के मूलभूत तत्वों का विस्तार के विश्लेषण निरुक्तों में समावेश है ।

3. 4. प्रमुख भारतीय भाषाविद- मुनित्रय:

संस्कृत के आचार्यों द्वारा भाषा-चिंतन का कार्य जिस गहराई एवं विस्तार से किया गया, वह अभूतपूर्व हैं । किन्तु इनमें से कुछ नाम ऐसे हैं, इनका योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है, जैसे-यास्क (निघंटु तथा निरुक्त), आपिशति तथा कशकत्स्न (व्याकरण ग्रंथ), पाणिनि (अष्टाध्यायी), कात्यायन (वार्तिक), पतंजलि (महाभाष्य), भर्तृहरि (वाक्य पदीय), भट्टोजी दीक्षित (सिद्धांत कौमुदी) आदि । परंन्तु इनमें से भी युगांतरकारी कार्य करनेवालों में पाणिनि का नाम लिया जाता है । ऐसे सर्वक्षेष्ठ आचार्य के चिंतन की चुनौती देनेवाले 'कात्यायन' तथा कात्यायन के विरोधों का उत्तर देते हुए पुनः पाणिनि के चिंतन की पक्षधरता करनेवालेपतंजलि, ये ऐसे दो प्रतिभावान आचार्य हैं, जिन्होंने भाषा-चिंतन को नए आयाम दिए । इसी पंक्ति में भतृहरि को अधिकांश विद्वानों ने ई. पू. 750 से ई. पू. 500 के मध्य पाणिनि का समय स्वीकारा । इनका नाम भी इस गौरवशाली परंपरा का द्योतक हैं । अतः इन प्राचीन भाषाविदों के योगदान पर विशेष रूप से विचार होना आवश्यक है ।

3.4.1. पाणिनि:

इनका जन्म गांधार के शालातुर नामक स्थान में होने से इन्हें 'शालातुर' नाम से भी संबोधित किया जाता है। इनके अन्य नाम भी मिलते हैं, जैसे शालंकि, आह्निक और दाक्षीपुत्र आदि। पाणिनि कृत 'अष्टाध्यायी' व्याकरण का सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ माना जाता है। इन्होंने 'अष्टाध्यायी' के अलावा जो ग्रंथ लिखे, उनमें हैं- धातु पाठ, गुण पाठ, उणादि सूत्र आदि। पाणिनि तथा उनके 'अष्टाध्यायी' की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं –

1. संपूर्ण व्याकरण को संक्षिप्त शैली में 14 माहेश्वर सूत्रों के आधार पर 4000 सूत्रों में सरलता से प्रस्तपत करने वाले 'अष्टाध्यायी' के कर्ता पाणिनि को ब्लीमफील्ड ने 'न भूतो न भविष्यति' माना।
2. भाषा-विज्ञान के सर्वांगों को इसमें विश्लेषित किया गया है। स्वन विज्ञान, रूप विज्ञान, वाक्य विज्ञान और अर्थ विज्ञान को हम 'अष्टाध्यायी' में निहित ध्वनि-प्रक्रिया, स्वराघात, संधि, रूप-रचना, वाक्य रचना, तथा व्याकरण के विवेच्य पक्ष में पाते हैं।
3. पाणिनि कृत 'अष्टाध्यायी' आधुनिक ध्वनि-विज्ञान के अध्यायन के लिए आज भी आधार ग्रंथ माना जाता है।
4. भाषा का चरम अवयव, पूर्ण इकाई 'वाक्य' को माना गया है, 'शब्द' को नहीं। पाश्चात्य भाषाविदों की भी यही मान्यता है। उन्होंने माना है- Sentence is the unit of language.
5. यास्क ने शब्द भेद चार प्रकार के माने-नाम (संज्ञा), उपसर्ग, निपात (अव्यय), आख्यात (क्रिया), किंतु पाणिनि ने शब्दों को दो श्रेणियों में ही विभाजित किया- सुबन्त और तिङ्न्त। ऐसे माना जाता है कि विश्व में जितने भी वर्गीकरण किए गए हैं, उनमें शब्द बेधों से किया गया यह वर्गीकरण रूपण रूप से वैज्ञानिक है।
6. लौकिक तथा संस्कृत का तुलनात्मक अध्ययन पाणिनि कृत 'अष्टाध्यायी' की महत्वपूर्ण विशेषता है।
7. धातुओं से ही शब्दों की निर्मिति मानी गई। इन धातुओं में उपसर्ग-प्रत्यय लगाकर अपरिमित शब्द निर्मिति की संभावना को पाणिनि ने सिध्द कर दिया।

'अष्टाध्यायी' आठ अध्यायों में रची गई। प्रत्येक अध्याय में चार पाद हैं और प्रत्येक पाद में अनेक सूत्र हैं। कुल मिलकर सूत्र संख्या लगभग चार हज़ार है। ये सूत्र केवल 14 सूत्रों पर आश्रित हैं, जिन्हें पाणिनि ने 'माहेश्वर सूत्र' की संज्ञा दी। तथासारित्यागर में ऐसे उल्लेख है कि पाणिनि'वर्ष' नामक आचार्य के शिष्य थे। अभ्यास में खूब पिछ्ड़े होने के कारण वे दुःखी होकर तपस्या करने चले गए और वहीं से भगवान शिव के आशीर्वाद से कुशाग्र व उद्भट वैयाकरण बनकर लौटे। भगवान माहेश्वर की कृपा से 'अष्टाध्यायी' के 14 आधार-सूत्र रचे जाने से इन्होंने उन सूत्रों का नाम 'माहेश्वर सूत्र' रखा।

पाणिनि का प्रभाव इतना ज़बरदस्त रहा कि संस्कृत के सभी परवर्ती-व्याकरण संप्रदायों ने पाणिनि कृत 'अष्टाध्यायी' को ही आधार बनाकर भाषा-चिंतन को समृध्द किया । एनसाइक्लोपीडियाब्रिटेनिका में उल्लेख है – "Among the Indian grammarians panini ranks first, his work has been called the most complete grammar existing for any language, dead or living" Encyclopaedia Britannica.

'व्याकरण' कोवेदांगों में सबसे अधिक महत्वपूर्ण माना गया है ।आधुनिक काल में भाषा-विज्ञान के अंतर्गत जो अध्ययन किया जाता है, उसी प्रकार का अध्ययन प्राचीन काल में भारत में 'व्याकरण'ग्रंथों के अंतर्गत किया गया ।'व्याकरण'का शाब्दिक अर्थ है - विश्लेषण ।इन ग्रंथों में तत्वों का विवेचन-विश्लेषण इतना व्यापक स्तर पर किया गया है कि भाषा का सटीक तथा शीघ्र ज्ञान प्राप्त करने में ये ग्रंथ अत्यधिक उपयोगी हैं ।

पाणिनि-शिक्षा में वेदांगों के लिए एक रूपक प्रयुक्त किया गया ।वह यह कि वेद भगवान है और इस वेद भगवान की नासिका 'शिक्षा'है, हाथ 'कल्प'हैं, मुख 'व्याकरण'है, कान 'निरुक्त'हैं, पैर 'छंद'हैंऔर आंखें 'ज्योतिष'हैं ।इन वेदांगों का एकमात्र उद्देश्य 'वेदार्थ'की रक्षा करना है।'व्याकरण'ग्रंथ 'वेदार्थ'को स्थायित्व प्रदान करते हुए उनकी रक्षा करते हैं ।तैत्तिरीय संहिता में इंद्र देवता को प्राचीनतम वैयाकरण माना गया है ।उपलब्ध व्याकरण ग्रंथों में सर्वाधिक प्राचीन पाणिनि कृत 'अष्टाध्यायी'है। आचार्य पाणिनि से पूर्ववर्ती आचार्यों में चंद्र, अमर, जैनेंद्र, सारस्वत,बृहस्पति, गार्ग्य, स्फोटायन, शाकटायन, भारद्वाज आदि का तथा परवर्ती आचार्यों में पतंजलि, कात्यायन, जिनेंद्र बुद्धि, भर्तृहरी, कय्यट, विमल सरस्वती, रामचंद्र, भट्टोजि दीक्षित, हेमचंद्र आदि का नाम प्रमुखता से लिया जाता है।

संस्कृत भाषा के इन वैयाकरणों के परिश्रम साध्य, गंभीर-गहन योगदान की प्रशंसा केवल भारत ही नहीं अपितु विश्व के विदों ने की है ।मैकडॉनल ने लिखा है –'भारतीय वैयाकरणों ने ही विश्व में सर्व प्रथम शब्दों का विवेचन किया ।उन्होंने ही शब्दों का विभाजन कर प्रकृति और प्रत्यय का अंतर पहचाना और प्रत्ययों के कार्यों का निर्धारण किया । इस प्रकार सर्वांगपूर्ण और निर्दोष व्याकरण-पद्धति को जन्म देने का श्रेय भारत के वैयाकरणों को है, जिसकी तुलना किसी देश में प्राप्त नहीं है'।भाषा विज्ञान का अध्ययन प्रमुखतः यूरोप, भारत, चीनऔरजापान आदि देशों में हुआ है । प्राचीन काल में भारत और चीन में हुआ ।किंतु भारत के योगदान को पाश्चात्य विद्वानों ने भी सर्वश्रेष्ठ माना ।एनसाइक्लोपीडियाब्रिटेनिका में अंकित है –'The Chinese and Assyrian did not penetrate, so deeply into the understanding and analysis of their own language as did the early Indians, whoes grammatical investigations have had far-reaching influeace on European, philology. We find in India painstaking investigation into Phonetics with a minute description of

each sound and its formation further precise accounts of thechanges of sounds in the inflection and formation of words. Encyclopaedia Britannica.

भारत में जिस प्रकार ज्ञान की गहन जड़ों को पाना हो तो संस्कृत भाषा की ओर उन्मुख होने की प्रवृत्ति है, उसी प्रकार यूरोपकी ग्रीक की ओर है।किंतु भाषा-विज्ञान में दिए योगदान को लेकर सर विलियमजोन्स की प्रशंसक उक्तियाँ हमारे संस्कृताचार्यों के योगदान को सर्वश्रेष्ठ घोषित करती हैं –'The Sanskrit language, whatever be its antiquity, is of a wonderful structure ; more perfect than Greek, more copious than Latin and more exquisitely refined than either; yet bearing to both of them stronger affinity both in the roots of verbs and in the forms of Grammar, than could possibly have been produced by accident ; so strong, indeed, that no philologer could examine them all three without believing them to have sprung from some common source, which ,perhaps, no longer exists.' Sir William Jones.

संस्कृत वैयाकरणों में पाणिनि का स्थान सर्वोपरि है।लौकिक संस्कृत के निर्माण में उनका योगदान इतना अधिक व्यापक-गहन-गंभीर व श्रमसाध्य रहा कि भारतीय प्राचीन भाषाविज्ञान का अध्ययन करते समय 'पाणिनि पूर्व युग','पाणिनि युग'तथा 'पाणिनि परवर्ती युग'विभाजन किया जाता है।पाणिनि कृत अष्टध्यायी को आधार बनाकर कात्यायन एवं पतंजलि ने क्रमशः वार्तिक तथा महाभाष्य का प्रणयन किया। इन दोनों आचार्यों का कार्य भीअत्यंत महत्वपूर्ण माना गया। अतः व्याकरण के इन तीन आचार्यों- पाणिनि-कात्यायन-पतंजलि को 'मुनित्रय'के नाम से प्रसिद्धि मिली।

मुनित्रय के बाद संस्कृत के विकास पर अपने विचार प्रकट करते हुए आचार्यों ने टीकाएँ लिखी।टीकाकारों में वामन तथा जयादित्य कृत 'काशिका' (6 वीं सदी) तथा उस पर आधुत7 वीं सदी में रचित टीकाओं में जिनेंद्र बुद्धि की 'काशिकान्यास'तथा 12 वीं सदी में रचित हरदत्त कृत 'पदमंजरी'ख्यातिलब्ध कृतियाँ हैं।6 वीं सदी में भर्तृहरि कृत 'वाक्य पदीय'भाषा-शास्त्र की अपूर्व कृति है।इसमें भाषा, नाद, स्फोट, ध्वनि, वर्णांतरस्वरूप, शब्द का मुख्य और गौण अर्थ अदि पर गहणता से विचार किया गया है।

इनके पश्चात् व्याकरण को सरलतम रूप में प्रस्तुत करने हेतु कौमुदी ग्रंथ लिखे गए।इन ग्रंथों में संस्कृत भाषा का वर्णमाला पक्ष प्रस्तुत हुआ है।संज्ञा, संधि, सुबंत, अव्यय, कारक, समास, तद्धितऔरकृदंत, अदि शीर्षक युक्त प्रकरणों द्वारा संस्कृत भाषा के व्याकरण पर विस्तार किया गया है।प्रमुख कौमुदीकारों में वरदराज, रामचंद्र औरभट्टोजी दीक्षित अदि के नाम शामिल हैं।14 वीं सदी में विमल सरस्वती कृत 'रूप माला'प्रथम कौमुदी ग्रंथ है।15 वीं सदी में रामचंद्र कृत 'प्रक्रिया कौमुदी'तथा 17 वीं सदी में वरदराज कृत 'सिद्धांत

कौमुदी'के तीन संस्करण –'सिद्धांत कौमुदी','मध्यकौमुदी', व 'लघु कौमुदी'प्रसिध्द ग्रंथ हैं ।किंतु 17 वीं सदी में भट्टोजि दीक्षित कृत 'सिद्धांत कौमुदी', सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ माना जाताहै ।

3.4.2.कात्यायन :

पाणिनि के पश्चात्‌अत्याधिक प्रसिद्ध वैयाकरण कात्यायन माने जाते हैं ।कात्यायन का समय ई.पू.500 से ई.पू. 300 तक माना जाता है ।कात्यायन को प्रसिद्धि उनके वार्तिकों के प्रणयन के कारण वार्तिकों प्राप्त हुई । इन वार्तिकों की संख्या 900 से 9500 तक मानी जाती है ।कात्यायन ने पतंजलि की ही रीति से पतंजलि की आलोचना की है ।'अष्टाध्यायी'में पतंजलि द्वारा जिन बातों के निर्देश देने रह गए, किन्हीं बातों के नियम बनाने रह गए अथवा अधिक उचित पर्याय आदि संबंधी सुधार वार्तिकों का प्रमुख कथ्य था ।

'वार्तिक'की व्याख्या करते हुए कहा है कि - जिसमें कही गई बातों (उक्त), न कही गई बातों (अनुक्त) तथा त्रुटिपूर्ण या अशुद्ध बातों (दुरुक्त) पर विमर्श किया जाता है, उन्हें 'वार्तिक'कहते हैं ।

उक्तानुक्तदुरुक्तानां चिन्ता यत्रप्रवर्तते।
तंग्रन्थंवार्तिकंप्राहार्तिकज्ञाःमनीषिणः ।।

कुछ विद्वान कात्यायन को पाणिनि का समकालीन मानते हैं ।कहा जाता है कि पाणिनि ने 'अष्टाध्यायी'का सृजन होने पर उसे अवलोकनार्थ कात्यायन के पास भेजा था ।कात्यायन ने लगभग 1500 स्थलों पर संशोधन किया । कात्यायन कृत इन्ही संशोधनों को 'वार्तिक'कहा जाता है ।किंतु ऐतिहासिक साक्ष कहते हैं कि कात्यायनपतंजलि के समकालीन नहीं अपितु परवर्तीआचार्य थे ।पतंजलि व कात्यायन के मध्य लगभग 150-200 वर्षों के अंतराल में संस्कृत भाषा में जो परिवर्तन हुए उस आधार पर कात्यायन ने 'अष्टाध्यायी'के सूत्रों में आवश्यक स्थानों पर परिवर्तन किया ।इस प्रकार 'वार्त्तिक'अष्टाध्यायी के संशोधक व पूरक हैं।

संस्कृत भाषा के विकास के परिणाम स्वरूप जो भाषा-प्रयोग अधिक प्रचलित हो गए, जिनकी व्यावहारिक उपयोगिता सिद्ध हो गई, उन्हीं परिवर्तित रूपों का संकलन 'वार्तिक'हैं ।कात्यायन ने आवश्यक स्थानों पर 'अष्टाध्यायी'में निहित सूत्रों में नव परिभाषिक शब्दों का प्रयोग किया । उदाहरणर्थ- पाणिनि द्वारा प्रयुक्त 'अच'के लिए 'स्वर'शब्द का और 'हला' के लिए 'व्यज्जन'शब्द का प्रयोग किया था । 'अदर्शनंलोपः'सूत्र को 'वर्णस्यादर्शनं' कहकर प्रस्तुत किया ।ऐतिहासिक भाषा विज्ञान की दृष्टि से कात्यायन के वार्त्तिक महत्वपूर्ण माने जाते हैं।

3.4.3.पतंजलि :

पतंजलि का काल ई.पू. दूसरी शताब्दी के आस-पास माना जाता है । पतंजलि ने

महाभाष्य, योगसूत्र और चरकसंहिता ग्रंथों की सर्जना की ।'महाभाष्य'के अंतः साक्ष्य के आधार पर पतंजलिशंगवंशी रजा पुष्यमित्र के समकालीन माने जाते हैं ।पुष्यमित्र का काल ई.पू. दूसरी शताब्दी का माना गया ।अतः पतंजलि के काल की भी निश्चिति हो जाती है ।पतंजलि के अन्य नाम भी प्रचलित थे, जैसे- गोनर्दीय, गोणिकापुत्र, अहिपति, नागनाथ औरफणी आदि ।

कात्यायन ने पाणिनि के अष्टाध्यायी-सूत्रों में जो कमियाँ या त्रुटियाँ दिखाते हुए 'वार्त्तिक'लिखकर अपनी असहमति या विरोध दर्ज किया था । उस विरोध के विरोध में अर्थात् पाणिनि की पक्षधरता करते हुए पतंजलि ने 'महाभाष्य'की रचना की ।'महाभाष्य'व्याकरण का स्वतंत्र ग्रंथ न होकर 'अष्टाध्यायी'पर ही आधृत है ।किंतु जिस सूक्ष्मता, गहनता, गंभीरता विस्तार एवं सरलता से पतंजलि ने अपना भाष्य रचा है ,निश्चित रूप से उनका 'महाभाष्य'संबोधन सार्थक सिद्ध हुआ ।

'महाभाष्य'भी 'अष्टाध्यायी'की भाँति आठ अध्यायों में विभक्त है । प्रत्येक अध्याय में चार-चार पाद हैं ।'अष्टाध्यायी'की व्याख्या के साथ-साथ पतंजलि ने ध्वनि, पद, वाक्यऔरअर्थ आदि को लेकर इतना मौलिक भाषा-विमर्श रचा है कि 'महाभाष्य'को एक स्वतंत्र भाषा-दर्शन वाले ग्रंथ का दर्जा प्राप्त हुआ ।ध्वनि, पदऔरवाक्य आदि का स्वरूप क्या है, ध्वनि व अर्थ का संबंध क्या है आदि को लेकर सदियों पूर्व पतंजलि द्वारा की गई । भाषा-मीमांसा आज भी आधुनिक भाषाविदों के लिए आधारस्तंभ बनी हुई है।

'महाभाष्य'पर जो अनेक टीकाएँ लिखी गईं और उन टीकाओं पर टिकाएं लिखने का जो क्रम चलता रहा, इसी सेउक्त ग्रंथ की महत्ता सिद्ध हो जाती है । महाभाष्य पर लिखी गई टीकाओं में भर्तृहरि कृत'महाभाष्य-दीपिका' और कैयट कृत 'महाभाष्य प्रदीप'अधिक महत्वपूर्ण माना गई । अतः 'मुनित्रय'में पतंजलि के योगदान को सर्वाधिक महत्व उनके तार्किक विश्लेषण के कारण ही प्राप्त हुआ ।संस्कृत में उक्ति प्रसिध्द है – 'यथोत्तरमुनीनांप्रामाण्यम'।अर्थात् मुनित्रय में पाणिनि की अपेक्षा कात्यायन तथा कात्यायन की अपेक्षा पतंजलिप्रमाणिक हैं।

3.5. सारांश:

सारांश के रूप में यही कह सकते हैं कि भाषाविज्ञान के क्षेत्र में प्राचीन काल में यदी किसी देश ने अपना अतीत महत्वपूर्ण अवदान दिया है, तो वह भारत वर्ष ही है । भारत ही वह प्राचीन देश है, जहाँ भाषाविद हुए । संस्कृताचार्यपाणिनि की 'अष्टाध्यायी' को आज भी पाश्चात्य वैज्ञानिक वर्णनात्मक भाषाविज्ञान का ऐसा ग्रंथ मानते हैं, जो अपनी उत्कृष्ठता में 'न भूतो न भविष्यति' है । अपने प्रकंड पांडित्य के कारण व्याकरण के इन तीन आचार्यों-पाणिनि-कात्यायन-पतंजलि को 'मुनित्रय' के नाम से प्रसिध्द मिली ।

3.6. स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न :

1. मुनित्रय के बारे में सोदाहरण रूप से लिखिए।
2. भारतीय भाषा विज्ञान की विकास यात्र के बारे में लिखिए।
3. भाषा विज्ञान का इतिहास को संक्षिप्त रूप में बताइए।
4. मुनित्रय का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

सहायक ग्रंथ :

1. भाषाविज्ञान -डॉ. भोलानाथ तिवारी
2. भाषा -विज्ञान एवं भाषा-शास्त्र- डॉ. कपिलदेवद्विवेदी-विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।
3. भाषाविज्ञान की भूमिका- देवेन्द्र शर्मा, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली।
4. भाषा एवं हिन्दी भाषा – डॉ. सतीषकुमाररोहरा, हिन्दी प्रचारक संस्थान, वाराणसी।

डॉ. सूर्य कुमारी. पी.

4. ध्वनि-विज्ञान

उद्देश्य :

इस इकाई में वाग्यंत्र का परिचय प्राप्त कर सकेंगे। स्वर तथा व्यंजन ध्वनियों का अंतर समझ सकेंगे। ध्वनि तथा भाषा ध्वनि में अंतर को समझते हुए ध्वनि यंत्र को किन-किन आधारों पर वर्गीकरण किया जा सकता है और ध्वनि परिवर्तन के कारण क्या हैं, ध्वनि परिवर्तन की दिशाओं को भी सोदाहरण रूप से विश्लेषित कर सकेंगे।

इकाई- **IV**

4.1. प्रस्तावना :

4.2. ध्वनि-विज्ञान :

4.3. ध्वनि यंत्र-

4.4. विभिन्न आधारों पर ध्वनियों का वर्गीकरण :

4.4.1. स्वर तथा व्यंजन में अंतर

4.4.2. स्वर ध्वनियाँ तथा उनका वर्गीकरण

1.जिह्वा का भाग

2. जिह्वा की ऊँचाई

3. ओष्ठों की स्थान

4.4.3. व्यंजन ध्वनियाँ तथा उनका वर्गीकरण

4.4.3.1. स्थान के आधार पर

4.4.3.2. प्रयत्न के आधार पर

1. अभ्यन्तर प्रयत्न2.बाह्य प्रयत्न

4.5. ध्वनि परिवर्तन के कारण :

4.5.1.ध्वनि परिवर्तन

4.5.2. ध्वनि परिवर्तन के कारण

(क). आभ्यन्तर कारण

(ख). बाह्य कारण

4.6. ध्वनि परिवर्तन की दिशाएँ

4.7. सारांश :

4.8. स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न :

4.1. प्रस्तावना :

इस इकाई का प्रमुख उद्देश्य है हिन्दी भाषा की ध्वनि व्यवस्था से परिचय प्राप्त कराना। इसी व्यवस्था के अंतर्गत आपको इस इकाई में हिन्दी के स्वर, व्यंजनों का संक्षिप्त परिचय दिया जाएगा। तथा खंडेतर ध्वनियों का परिचय दिया जाएगा। इसके अतिरिक्त आपको निष्पादक स्वनिम विज्ञान (ध्वनि-विज्ञान) की आधारभूत संकल्पनाओं से परिचित कराते हुए निष्पादक ध्वनि-विज्ञान किन-किन आधारों पर ध्वनियों का वर्गीकरण किया जाता है इसे भी बताया जाएगा। इसके अतिरिक्त इकाई के अंतिम भाग में ध्वनि परिवर्तन के कारण और ध्वनि-परिवर्तन की दिशाओं के विषय में विस्तार से जानकारी दी जाएगी।

4.2. ध्वनि-विज्ञान :

ध्वनि-विज्ञान को स्वनिम-विज्ञान भी कहा जाता है। ध्वनि विज्ञान का अर्थ है- 'ध्वनेःविज्ञानम् ध्वनि-विज्ञानम्' यानी कि जिसमें ध्वनि का वैज्ञानिक अध्ययन किया जाए वह ध्वनि विज्ञान है। इसके लिए अंग्रेजी में दो शब्द प्रचलित है-- (अ) फोनोलॉजी, (ब) फीनेटिक्स।

Phone शब्द का अर्थ है—ध्वनि। Logy व tics ये दोनों प्रत्यय विज्ञान के लिए प्रयुक्त है। आधुनिक विज्ञानों ने ध्वनि विज्ञान का पर्यायवाची 'स्वनिम' व 'स्वनिमी' भी किया है। परन्तु ध्वनि विज्ञान के लिए अंग्रेजी का phonetic शब्द ही अधिक लोकप्रिय है। फोनेटिक्स के अंतर्गत ध्वनि की परिभाषा, भाषा संबंधी ध्वनियों का विवेचन, ध्वनियों के उत्पादन वाक्यन्त्र, ध्वनि का उद्भव-विकास, ध्वनि नियम इत्यादि आते है। ध्वनि का अर्थ प्रत्येक आवाज नही है, बल्कि वह सार्थक आवाज या ध्वनि है जिसका भाषा में प्रयोग किया जाता है। भाषा के दो रूप है-- (अ) ध्वन्यात्मक (ब) लिखित। लिखित रूप ध्वन्यात्मक व उच्चारण के आधार पर प्रस्तुत है और उपयोगी है। उच्चारण के बिना भाषा का लिखित रूप कुछ भी अर्थ नहीं रखता अर्थात् व्यर्थ है।

वस्तुतः ध्वनि भाषा का मूल आधार है क्योंकि ध्वनि चिन्ह ही भाषा को अभिव्यक्त करते है। ध्वनि विज्ञान प्रत्येक ध्वनि का विज्ञान नहीं, बल्कि निरर्थक ध्वनियाँ उसके अध्ययन क्षेत्र में नहीं आती है। मानव अपने भावों की अभिव्यक्ति के लिए जिन भाषिक ध्वनियों का प्रयोग करता है वे ध्वनियाँ ही भाषा विज्ञान के लिए अपेक्षित है। ध्वनि का उत्पादन वक्ता द्वारा होता है व उसका श्रवण श्रोता द्वारा होता है। ध्वनि का आधार वायु है। ध्वनि वक्ता के मुख से निकल कर वायुतरंगों के माध्यम से श्रोता की कर्णोन्द्रिय तक पहुंच जाती है।

भाषा यदि विचारों के आदान-प्रदान का साधन है तो उसका कार्य ध्वनि के माध्यम से होता है। प्राचीनकालमे ध्वनियों का अध्ययन व्याकरण के माध्यम से होता था। शिक्षा शास्त्र व प्रतिशाख्य भी ध्वनि की जानकारी देते थे। संस्कृत वैयाकरणों का स्फोटवाद ध्वनि

के आधार पर ही प्रचलित था। वैयाकरणों के अनुसार 'ध्वनि' शब्द ध्वन् धातु से इन प्रत्यय लगाकर बना है। ध्वन् धातु शब्द करने के अर्थ में प्रयुक्त है। कोश में भी ध्वनि का अर्थ शब्द आवाज व नाद आदि अर्थों में प्रयुक्त है। इस प्रकार ध्वनि विज्ञान ध्वनियों का विज्ञान है।

4.3. ध्वनि यंत्र-

वाग्यंत्र के समस्त अवयवों को कार्य और उपयोगिता की दृष्टि से दो भागों में विभक्त किया जा सकता है।

1. करण (Articulators) वे अवयव जो गतिशील हो सकते हैं, करण कहलातेहैं। ओष्ठ, जिह्वा, कोमल तालु और स्वर-तंत्री करण कहे जाते हैं।

2. स्थान (Points of Articulators) वाग्यंत्र के उन अवयवों को कहते हैं, जो अपने स्थान पर स्थिर रहते हैं और जिह्वा आदि उन स्थानों के पास जाते हैं या उनका स्पर्श करते हैं। दन्त, तालु औरमूर्धा आदि इसी प्रकार के अवयव हैं।

4.4. विभिन्न आधारों पर ध्वनियों का वर्गीकरण :

ध्वनियों के दो प्रसिद्ध भेद हैं-स्वर और व्यंजन। स्वर और व्यंजन में अन्तर प्रायः यह बताया जाता है कि स्वर उसे कहते हैं, जिसका उच्चारण स्वयं हो और व्यंजन वह है जिसके उच्चारण में स्वर की सहायता लेनी पड़े।

- **स्वर तथा व्यंजन में अंतर-**

याज्ञवल्क्य शिक्षा में स्वर के लिए कहा गया है-जिस ध्वनि का उच्चारण स्वतः हो जाता है, उसके उच्चारण के लिए किसी अन्य सहायक ध्वनि की आवश्यकता नहीं पड़ती, उसे 'स्वर'कहते हैं और जिस ध्वनि के उच्चारण के लिए स्वर वर्ण की सहायता लेनी पड़ती है, उसे 'व्यंजन'कहते हैं। पतंजलि ने महाभाष्य में कहा है-'स्वतः राजन्ते इति स्वराःअन्वग्भवतिव्यंजमिति'। पतंजलि की तरह ही, पतंजलि के समकाल में हुए यूनानी वैयाकरण डायोनिशसथैक्स ने भी कहा है- 'स्वर' वे ध्वनियाँ हैं, जिनका उच्चारण अन्य किसी ध्वनि की सहायता के बिना किया जा सकता है और 'व्यंजन' उन ध्वनियों को कहते हैं, जिनका उच्चारण स्वरों की सहायता के बिना नहीं किया जा सकता। प्राचीन भाषाशास्त्रियों के इस विश्लेषण से वर्तमान भाषाशास्त्री अधिकांशतः सहमत नहीं हैं। दरअसल पतंजलि ने संस्कृत भाषा के परिप्रेक्ष्य में ये बातें कहीं हैं। संस्कृत में केवल व्यंजन वाले शब्द नहीं हैं। जबकि हिन्दी में ऐसे बहुत से उदाहरण हैं जिनमें बिना स्वरों की सहायता से ही व्यंजन ध्वनियों का उच्चारण होता है। जैसे 'संयुक्त'शब्द के 'क्' में कोई स्वर नहीं है, फिर भी उसका उच्चारण होता है।

आधुनिक भाषावैज्ञानिकों के अनुसार स्वर वे ध्वनियाँ हैं जिनका उच्चारण करते समय

निःश्वास में कहीं कोई अवरोध नहीं होता। व्यंजन वे ध्वनियाँ हैं जिनकाउच्चारण करते समय निःश्वास में कहीं न कहीं अवरोध होता है। स्वर और व्यंजन में दूसरा भेद यह है कि दोनों की मुखरता (sonority) में अंतर रहता है। जो ध्वनि अधिक दूर तक सुनाई देती है, वह उतनी ही मुखर मानी जाती है। व्यंजनों की अपेक्षा स्वर अधिक मुखर होते हैं। इसीलिए संगीत साधना के समय आलाप में ....आ... का आलाप करते हैं। इसके अतिरिक्त स्वर का उच्चारण अलग से स्वतंत्रतापूर्वक देर तक किया जा सकता है, जबकि कुछ विशेष व्यंजनों को छोड़कर अधिकांश व्यंजनों का उच्चारण स्वतंत्रतापूर्वक देर तक कर पाना सम्भव नहीं। समस्त स्वर प्रायः सघोष होते हैं। स्वर में बलाघात को वहन करने की क्षमता अधिक होती है। स्वर और व्यंजन के अंतर को समझने के लिए यहाँ नीचे कुछ परिभाषाएँ दी जा रही हैं।

4.4.1. स्वरध्वनियों का वर्गीकरण-

स्वर की परिभाषा में कहा गया कि निःश्वास में बिना अवरोध के जो ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं वे स्वर कहलाती हैं। किंतु फिर प्रश्न यह है कि अवरोध के बिना उत्पन्नइन ध्वनियों के बीच अ, इ, उ, ए आदि का भेद कैसे होता है? इस भेद के कारण पर जब हम विचार करते हैं तो हम पाते हैं कि इसके जनक निम्न तीन कारण हैं ।

1. जिह्वा का भाग ।
2. जिह्वा की ऊँचाई ।
3. ओष्ठों की स्थिति ।

4.4.1.1.जिह्वाकाभाग –

स्वरों का प्रथम वर्गीकरण जिह्वा के भागों की दृष्टि से किया जाता है। इस दृष्टि से जिह्वा के तीन भाग होते हैं-अग्र, मध्य और पश्च । मुख में आती वायु में स्वरों के उच्चारण में कोई विशेष बाधा नहीं होती किन्तु जिह्वा का अग्र, मध्य या पश्च भाग ऊपर उठकर मुख में स्वरों के गूंजने के लिए मुख विवर के विभिन्न रूप धारण करने में सहायता करता है।

(क) जब जिह्वा का अग्र भाग ऊपर उठकर स्वर उच्चारण में सहायता करता है, वे हैं- इ, ई, ए, ऐ। इसी से इन्हें अग्रस्वर कहते हैं।
(ख) जिह्वा के मध्यभाग को उठाकर केन्द्रीय स्वर का उच्चारण होता है, जिसका उदाहरण है- अ।
(ग) जिह्वा के पश्च भाग कोउठाकर आ, उ, ऊ, ओ, औ का उच्चारण होता है, जिन्हें पश्चस्वर कहते हैं।

4.4.1.2. जिह्वा की ऊँचाई-

जिह्वा के विभिन्न भागों का उस मात्रा तक उठना जिससे कि मुख विवर से निकलने वाली वायु का कहीं पर अवरोध न हो स्वर सीमा कहलाती है। वस्तुतः स्वरों के उच्चारण में जिह्वा केवल एक निर्दिष्ट सीमा तक उठती है; उससे ऊपर उठने पर निःसृत होने वाली वायु में अवरोध उत्पन्न हो जाएगा। स्वरों के उच्चारण में निःश्वास वायु जब मुख विवर से बाहर

निकलती है, तो उसमें अवरोध तो नहीं किया जाता, किन्तु जिह्वा को ऊपर उठाकर निःश्वास के निर्गम मार्ग को कुछ संकीर्ण अवश्य कर दिया जाता है। यह संकीर्णता कहीं अपेक्षाकृत कम होती है और कहीं अधिक। इस दृष्टि से मुख विवर की स्थिति चार प्रकार की होती है और उसके अनुसार स्वरों के भी चार भेद हो जाते हैं-

(क) संवृत-जब जीभ का विशिष्ट भाग बहुत ऊपर उठता है अर्थात् जिह्वाऔर स्वर सीमा के बीच कम से कम खाली स्थान रहता है। तब मुख विवर अत्यंत संकरा अर्थात संवृत हो जाता है। ऐसी स्थिति में उच्चरित स्वर संवृत स्वर कहलाते हैं।
जैस—अ- अग्रसंवृत-ई, इ ।
ब- पश्चसंवृत-ऊ, उ ।
(ख) अर्द्धसंवृत-जब जिह्वा और स्वर सीमा के मध्य संवृत की अपेक्षा तनिकअधिक स्थान खाली रहता है, तब स्वरों को अर्द्धसंवृत स्वर कहते हैं।
जैसे—अ-अर्द्धसंवृत – ए ।
ब-पश्चअर्द्धसंवृत-ओ ।
(ग) अर्द्धविवृत-जब जिह्वा और स्वर सीमा के मध्य विवृत की अपेक्षा दूरीथोड़ी कम हो जाती है, तब स्वरों को अर्द्धविवृत कहते हैं।
जैसे—अ-अग्रअर्द्धविवृत -ऐ ।
ब-पश्चअर्द्धविवृत- औ ।
(घ) विवृत-विवृत का अर्थ है-खुला। जब जिह्वा और मुखविवर के उपरिभाग के बीच अधिक से अधिक दूरी रहती है, तो विवृत ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं ।
जैसे—अ-अग्र विवृत-हिन्दी में इसका अभाव है।
ब- पश्चविवृत- आ ।

4.4.1.3.ओंष्ठों की स्थिति-

ध्वनि के उच्चारण में ओष्ठों की स्थिति बहुत महत्वपूर्ण है। निःश्वास का नियमन मुख के भीतर जिह्वा करती है और बाहर ओष्ठ। इसीलिए प्रत्यक स्वर के उच्चारण में जिह्वा के साथ ओष्ठों की स्थिति का भी योगदान रहता है। ओष्ठों की स्थिति अनेक प्रकार की होती है, जिनमें प्रमुख निम्नलिखित हैं ।

(क)प्रसृत-ओष्ठोंकीवहस्थितिजिसमेंवेस्वाभाविकरूपसेस्थितरहते हुए खुले होते हैं। इस स्थिति को अंग्रेजी में 'फ्लैट'कहते हैं। इ, ई, ए,ऐ का उच्चारण ओष्ठों की प्रसृत अवस्था में होता है।
(ख) वर्तुल-ओष्ठों को थोड़ा आगे निकालकर जब गोलाकार कर लेते हैंतो वह वर्तुल स्थिति है। उ, ऊ, ओ, औ के उच्चारण में वर्तुल स्थितिसहायक होती है।
(ग) अर्द्धवर्तुल–पूरा गोलाकार न होकर जब ओष्ठ आधे गोलाकार होते हैं तोकुछ स्वरों का उच्चारण होता है; जैसे –'अ'।

4.4.2.व्यंजन ध्वनियों का वर्गीकरण-

स्वरों और व्यंजनों का दो प्रकार से विभाजन किया जाता है :

1. श्रवणीयता के आधार पर ।
2. प्रयत्न के आधार पर।

4.4.2.1. श्रवणीयता का अभिप्राय है-

ध्वनियों के सुने जाने की सामर्थ्य । जो ध्वनियाँ अधिक स्पष्ट सुनी जाती हैं और जिनमें बलाघात वहन करने की क्षमता है, वे ध्वनियाँ स्वर कही जाती हैं। इसके विपरीत जो ध्वनियाँ अधिक दूर से स्पष्ट नहीं सुनी जाती हैं या जो बलाघात को वहन करने में समर्थ नहीं हैं, वे ध्वनियाँ व्यंजन कही जाती हैं। इस दृष्टि से ध्वनियों को तीन भागों में बाँटा जाता है- स्वर, व्यंजन और अन्तस्थ । अन्तस्थ की स्थिति स्वर और व्यंजन के बीच की है। ये श्रवणीयता और बलाघात की दृष्टि से सामान्य व्यंजनों की अपेक्षा अधिक उच्च हैं।

4.4.2.2. प्रयत्न के आधार से अभिप्राय है-

प्रयत्न के आधार पर होने वाले विभाजन का दो प्रकार से वर्णन किया जाता है-प्रयत्न का स्थान और प्रयत्न का प्रकार ।स्थान और प्रयत्न के अपेक्षित महत्व को समझने के लिए कुछ उदाहरण दिए जा सकते हैं। 'क' और 'प' का अन्तर स्थान कृत है, किंतु क और 'ख', 'का' अंतर प्रयत्न कृत है, क्योंकि क और ख का उच्चारण स्थान एक ही है-कण्ठ । एक ही स्थान से उच्चरित होने पर भी क ख में, ख ग में, ग घ में अन्तर हो जाता है। यह अन्तर प्रयत्न के कारण है। किन्तु क, च, ट, त, प का अन्तर प्रयत्न के कारण नहीं, स्थान के कारण है। ये ध्वनियाँ विभिन्न स्थानों से उच्चरित होती हैं। आगे विस्तार से स्थान और प्रयत्न के आधार पर व्यंजन ध्वनियों का विवरण दिया जा रहा है।

1.स्थान के आधार पर-

निःश्वास वायु को जहाँ अवरुद्ध या बाधित करते हैं, उसे स्थान कहते हैं। स्थान सम्बन्धी वर्गीकरण का मुख्य आधार है-अवरुद्ध स्थान। ओंठ से लेकर कण्ठ,पिटक तक मुख्य रूप से सात ऐसे स्थान हैं, जिनसे ध्वनियाँ उच्चरित होती हैं, वे हैं- काकल, कंठ, तालु, मूर्धा, वर्क्स, दन्त और ओष्ठ। इन स्थानों से उच्चरित ध्वनियों को क्रमशः काकल्य, कण्ठ्य, तालव्य, मूर्धन्य, वर्त्य, दन्त्य और ओष्ठ्य कहते हैं।

काकल्य-

जिन ध्वनियों का उच्चारण काकल से होता है, उसे काकल्य व्यंजन कहते हैं। इस ध्वनि के उच्चारण में मुख द्वार खुला रहता है। स्वर-यंत्र से निकलने वाली हवा कण्ठ द्वार से घर्षण कर उसे तेजी से खोलती हुई बाहर निकलती है। जैसे 'ह'या अंग्रेजी का एच (h) काकल्य व्यंजन है।

कण्ठ्य-

जिस व्यंजन का उच्चारण कण्ठ से होता है, उसे कण्ठ्य व्यंजन कहते हैं। इसके उच्चारण में जीभ का पिछला भाग कोमल तालु को छूता है। कवर्ग (क, ख, ग, घ),ह तथा विसर्ग (:) कण्ठ्य व्यंजन हैं।

तालव्य-

जिस व्यंजन का उच्चारण तालु से होता है, उसे तालव्य व्यंजन कहते हैं ।इसके उच्चारण में जिह्वाग्र कठोर तालु का स्पर्श करती है। च-वर्ग (च, छ, ज, झ), तथा श तालव्य व्यंजन हैं।

मूर्धन्य-

जिन ध्वनियों का उच्चारण मूर्धा से होता है, उसे मूर्धन्य व्यंजन कहते हैं। इसके उच्चारण में जीभ की नोंक लगभग उलटकर मूर्धा का स्पर्श करती है। ट-वर्ग (ट, ठ, ड, ढ) र और ष मूर्धन्य व्यंजन हैं।

वर्त्स्य-

जिस व्यंजन का उच्चारण वर्त्स से होता है, उसे वर्ण व्यंजन कहते हैं। इसके उच्चारण में जिह्वा नोंकतालु के अंतिम भाग एवं ऊपरी मसूढ़ों का स्पर्श किया करती है। जैसे-न्हवर्ण्य व्यंजन है।

दन्त्य-

जिन ध्वनियों के उच्चारण में जिह्वानोंक ऊपर की दंत पंक्ति का स्पर्श किया करती है। तवर्ग (त, थ, द, ध) ल और स दन्त्य व्यंजन हैं।

ओष्ठ्य-

जिन व्यंजनों का उच्चारण ओष्ठों से होता है, उन्हें ओष्ठ्य व्यंजन कहते हैं। ओष्ठ्य ध्वनियों के दो भेद होते हैं-द्वयोष्ठ्य और दन्त्योष्ठ्य । जिन व्यंजनों का उच्चारण दोनों ओष्ठों से होता है, वे 'द्वयोष्ठ्य व्यंजन'कहलाते हैं । जैसे- प, फ, ब, भद्वयोष्ठ्य व्यंजन हैं। दन्त्योष्ठ्यध्वनियों के उच्चारण में नीचे का ओंठ ऊपर की दन्त पंक्तियों को छूता है। जैसे - फ़ और व दंत्योष्ठ्य व्यंजन हैं।

जिह्वामूलीय-

जिन व्यंजनों का उच्चारण जिह्वा के मूल से होता है, उन्हें जिह्वामूलीय-व्यंजन कहते हैं। जैसे- क, ख, ग जिह्वामूलीय-व्यंजन हैं।

2.प्रयत्न के आधार पर-

ध्वनियों के उच्चारण के लिए अन्दर से आने वाली निःश्वास वायु को विभिन्न प्रकार के प्रयत्नों से विकृत या परिवर्तित रूप में बाहर आने दिया जाता है, इसी प्रयास को 'प्रयत्न'कहा

जाता है। प्रयत्न मुख्यतः दो प्रकार के हैं-अभ्यन्तर और बाह्य। आभ्यन्तर और बाह्य का संबंध मुखविवर के भीतरी और बाहरी भाग से है। ओष्ठ से कण्ठ तक यानी मुख के भीतर जो प्रयत्न किये जाते हैं, वे अभ्यन्तर कहलाते हैं और कण्ठ के बाद (नीचे) जो प्रयत्न होते हैं, वे बाह्य प्रयत्न कहलाते हैं।

(क)अभ्यन्तर प्रयत्न-

व्यंजनों के उच्चारण में ध्वनियंत्र के विभिन्न अवयवों को अनेक प्रकार से प्रयत्न करने पड़ते हैं। इस प्रयत्न अवधि में निर्गत वायु के अवरोध की क्रिया भी घटित होती है। इस अवरोध की प्रकृति के आधार पर व्यंजनों को दो वर्गों में बाँटा जा सकता है-पूर्णतः अवरोधी और आंशिक अवरोधी।

पूर्णतः अवरोधी-

मुख से बाहर निकलती वायु के पूर्णतः अवरोध द्वारा उत्पन्न ध्वनि पूर्णतः अवरोधी कहलाती है। पूर्णतः अवरोधी ध्वनियों को भी प्रयत्न के आधार पर दो भागों में बाँटा जा सकता है।

(क) स्पर्श (stop or explosive)-

स्पर्शकोस्फोटभीकहाजाताहै।स्पर्शउच्चारणकी वह अवस्था है जिसमें दो उच्चारण अवयव एक दूसरे का स्पर्श करके हवा को अवरुद्ध करते हैं और फिर एक दूसरे से हटकर हवा को जाने देते हैं। इसकी तीन अवस्थाएँ हैं- निःश्वास वायु का आगमन, अवरोध और स्फोट। ये तीनों स्थितियाँ पूर्ण उच्चारण में मिलती हैं। क,ख,ग,घ,औरत,थ,द,ध, औरट,ठ,ड,ढ,प,फ,ब,भ हिन्दी के स्पर्श व्यंजन हैं।

(ख) स्पर्शसंघर्षी (Affricative)-

वेध्वनियाँजिनकाआरम्भतोस्पर्शसेहोताहै, अर्थात् जिह्वा एक खास स्थान पर हवा को क्षणभर के लिए रोक देती है, किन्तु इस अवरोध के पश्चात अवरोधक अंग झटके से अलग नहीं होता और वायु भी झटके से निकलने नहीं पाती अपितु अवरोधक अंग धीरे-धीरे हटता हुआ घर्षण के साथ वायु को बाहर निकल जाने का मार्ग प्रदान करता है। च,छ, ज, झ हिन्दी की स्पर्श संघर्षी ध्वनियाँ हैं।

आंशिक अवरोधी-

जिन व्यंजन ध्वनियों के उच्चारण में निर्गत वायु का पूर्ण रूप से अवरोध नहीं होता, वे आंशिक अवरोधी कहलाती हैं। उन्हें मुख्य रूप से निम्नलिखित भागों में बाँटा जा सकता है।

(क) संघर्षी (Fricative)-

जबध्वनिकेउच्चारणमेंउच्चारणअवयवकेदोअंग एक दूसरे के इतने अधिक समीप आ जाते हैं कि वायु अबाध गति से बाहर नहीं निकल पाती, अपितु वह घर्षण कर धीरे-धीरे

बाहर निकलती है- ऐसी ध्वनि संघर्षी कहलाती है। इस प्रकार की ध्वनियों के उत्पादक कारण हैं- दोनों ओंठ, ऊपर नीचे के दाँत, जीभ एवं वर्त्स । इस प्रकार की हिन्दी ध्वनियाँ हैं । फ, ख, ग, ज, स, श, ष। इन ध्वनियों में एक प्रकार की सीत्कार (hiosing)ध्वनि सुनाई देती है।

(ख) लुण्ठित (Rolled)-

जीभकीनोंककोबेलनकीभाँतिकुछलपेटकरयालोड़ित करके लुण्ठित व्यंजन उत्पन्न किया जाता है। जैसे -र।

(ग) नासिक्य (Nasal)-

जिसमेंदोनोंओंठ, जीभ-दाँत, जीभ-मूर्धा या जीभपश्चऔर कोमल तालु आदि का उसी प्रकार स्पर्श किया जाता है; जैसे स्पर्श व्यंजनों में; किन्तु वायु प्रवाह कोमल तालु के नीचे झुक जाने के कारण नासिका विवरसे निकल जाती है। ङ्,ण्, न् तथा म् इसी कोटि में आते हैं।

(घ) **पार्श्विक (Lateral)-**

पार्श्विकध्वनियोंकेउच्चारणमेंमुखकेमध्यरेखापरकहीं भी जिह्वा के सहारे वायु मार्ग को अवरुद्ध कर दिया जाता है। फलतः हवा जिह्वा के एक या दोनों पार्श्वों से बाहर निकलती है। जैसे- ल।

(ङ) उत्क्षिप्त (Fllapped)-

जीभकीनोंककोउठाकरजिह्वा को कठोर तालु पर करने एवं तुरन्त सीधा कर लेने से उत्पन्न ध्वनि उत्क्षिप्त कहलाती है। हिन्दीके ड़ और ढ़उत्क्षिप्त व्यंजन हैं।

(च) **अर्द्धस्वर (Semi-Vowel)-**

इनकीस्थितिस्वरऔरव्यंजनकेमध्यकीहोतीहै,वैसे इनका झुकाव व्यंजन की ओर अधिक रहता है, क्योंकि ये स्वरों की तुलना में व्यंजन की तरह कम मुखर हैं, कम मात्रा के हैं, साथ ही इन पर बलाघात नहीं पड़ता, फिर भी इन्हें अर्द्धस्वर कहते हैं। इसका कारण यह है कि इनके उच्चारण का आरम्भ स्वर-स्थिति से होता है। ये ध्वनियाँ हैं- य, व। इन दोनों के उच्चारण में क्रम से उच्चारण अवयव पहले इ या उ की स्थिति में आते हैं और वहाँ थोड़ी देर रुकने के बाद आगामी स्थिति में चले जाते हैं। इनके उच्चारण में हवा का प्रवाह बहुत धीमा होता है। संस्कृत में इनको अन्तस्थ कहा जाता है। अन्तस्थ का अभिप्राय यह है कि ये ध्वनियाँ न तो स्वर की तरह पूर्णतया अवरोध-रहित हैं न व्यंजन की तरह पूर्णतया अवरुद्ध ।

(ख)बाह्यप्रयत्न –

बाह्यप्रयत्न में मुख्यतः स्वरतंत्री और अलिजिह्वा के व्यापार लिए जाते हैं। प्राणवायु की गति तथा स्वरतंत्री की अवस्था एवं प्राणवायु की गति के कारण होने वाले घर्षण; के आधार पर बाह्य प्रयत्न ग्यारह होते हैं-विवार, संवार, श्वास, नाद, अघोष, घोष, अल्पप्राण, महाप्राण, उदात्त, अनुदात्त और स्वरित। स्वरतंत्री की अवस्था के आधार पर-विवर एवं

संवार प्रयत्न होते हैं। विवर का अर्थ है-खुलना। जब स्वरतंत्री पूर्णतः खुली रहती है तो विवर प्रयत्न होता है। संवार का अर्थ है-बन्द होना। इसमें स्वरतंत्रियाँ बंद रहती हैं। प्राणवायु की गति के आधार परश्वास एवं नाद प्रयत्न होते हैं। जब स्वरतंत्रियाँविवार की स्थिति में (खुली) रहती हैं, उस समय निःश्वास वायु निर्बाध रूप से चलती है। इसे ही श्वास प्रयत्न कहा जाता है। नाद में स्वर-तंत्रियाँ मिलती है तथा निःश्वास में बाधा उत्पन्न होती है, जिससे नाद या आवाज होती है। दोनों को मिलाकर होने वाले घर्षण के आधार परघोष एवं अघोष प्रयत्न होते हैं। श्वास प्रयत्न में घर्षण के अभाव को ही अघोष कहते हैं। प्रत्येक वर्ग के प्रथम और द्वितीय वर्ण (क ख,च छ, ट ठ,त थप फ) अघोष हैं। नाद प्रयत्न में स्वरतंत्री में होने वाले घर्षण का दूसरा नाम घोष है। नागरी वर्णमाला में प्रत्येक वर्ग के तृतीय, चतुर्थ और पंचम वर्ण (ग घ ड., ज झ ञ, ड ढ ण, द ध न, ब भ म) घोष हैं।

प्राणवायु की मात्रा अल्पप्राण एवं महाप्राण का निर्धारण करती है। कुछ ऐसी ध्वनियाँ हैं जिनमें वायु का प्रयोग अत्यल्प होता है; जैसे-क और प। अल्पमात्रा में वायु के प्रयोग के कारण इन्हें अल्पप्राण कहते हैं। नागरी वर्णमाला के प्रथम, तृतीय और पंचम वर्ण (क ग ड., च ज ञ, ट ड ण, त द न, पब म) अल्पप्राण हैं। महाप्राण में वायु का प्रयोग अधिक होता है। प्रत्येक वर्ग के द्वितीय और चतुर्थ वर्ण (ख घ, छ झ, ठ ढ, थ ध, फ भ) महाप्राण हैं। उदात्त, अनुदात्त और स्वरित का सम्बन्ध केवल सुरों से है। उदात्त का अर्थ है-ऊपर उठा हुआ, अर्थात् आरोही सुर; अनुदात्त का अर्थ है-नीचे गिरा हुआ, अर्थात अवरोही स्वर और स्वरित का अर्थ है-सम अर्थात् जो न आरोही हो और न अवरोही।

4.5. ध्वनि परिवर्तन के कारण-

ध्वनियों का सबसे प्राचीन और प्रचलित वर्गीकरण स्वर(Vowel) और व्यंजन (Consonant) के दो रूप हमें देखने मिलते हैं । 'स्वर' उन ध्वनियों को कहा गया जिनका उच्चारण बिना किसी अन्य ध्वनि की सहायता से किया जा सकता है और 'व्यंजन' उन ध्वनियों को जिनका उच्चारण स्वरों की सहायता से होता है ।

'स्वर' वे ध्वनियाँ हैं जिनके उच्चारण में प्राणवायु मुख-विवर के कंठ, तालु आदि स्थानों से निर्बंध होकर निकलती हो और व्यंजन वे ध्वनियाँ हैं जिनके उच्चारण में प्राणवायु मुख-विवर के कंठ, तालु आदि स्थानों से संबंधित होकर निकलती हैं । कतिपय अपवादों को छोड़कर स्वर व्यंजन में भिन्नता है जो उनकी विशेषता भी मानी जा सकती है ।

1. सभी स्वर आक्षरित होते हैं और सभी व्यंजन अनाक्षरित होते हैं ।
2. मुखरता की दृष्टि से स्वर अपेक्षाकृत अधिक मुखर होते हैं और व्यंजन कम मुखर होते है ।

- **ध्वनि-परिवर्तन के कारण**

ध्वनि- परिवर्तन के कारणों के बारे में जानने से पहिले हम ध्वनि-परिवर्तन के बारे में जानेंगे।

4.5.1. ध्वनि-परिवर्तन (Phonetic Changes)

परिवर्तन इस सृष्टि की विशेषता है। सृष्टि के सभी जड़-चेतन पदार्थ काल क्रम के प्रवाह में परिवर्तित होते रहते हैं। भाषा मनुष्य के विचार-अभिव्यक्ति की संवाहक है। अतः देश-काल के अनुसार उसमें भी परिवर्तन होना स्वाभाविक है। भाषा परिवर्तन को भाषा का विकास भी माना जाता है। जैसा कि आप जानते हैं कि भाषा सार्थक ध्विनयों का समूह है। अतः ध्वनि-परिवर्तन ही भाषागत् परिवर्तन के रूप में दृष्टिगत होता है।

4.5.2. ध्वनि-परिवर्तन के कारण

विश्व की प्रत्येक वस्तु में निरन्तर परिवर्तन होता रहा है, हो रहा है और होता रहेगा। इसको ही वैदिक ऋषि ने 'यत्किं च जगत्यांजगत्' (यज० 40-1) कहा है। संसार की प्रत्येक वस्तु संसरणशील, परिवर्तनशील है। प्रत्येक भाषा की ध्वनियों में भी निरन्तर परिवर्तन होता रहा है। इसी परिवर्तन के कारण एक-एक शब्द के अनेक अपभ्रंश हो जाते हैं। जैसे— मनुष्य, मानुष, मानस और मनुस आदि।

भाषा का प्रमुख तत्त्व ध्वनि है। वक्ता इसका उच्चारण करता है और श्रोता इसे सुनता है। वक्ता की ध्वनि पर दो प्रकार का प्रभाव पड़ता है—1. आभ्यन्तर, 2. बाह्य। वक्ता और श्रोता से संबद्ध कारणों को आभ्यन्तर कारण कहते हैं। जैसे—प्रयत्नलाघव, मुखसुख, अज्ञान, शीघ्रभाषण आदि। इसके अतिरिक्त अन्य कारणों को बाह्य कारण कहते हैं। ये कारण बाहर से ध्वनि को प्रभावित करते हैं। जैसे—सामाजिक, राजनीतिक और भौगोलिक आदि कारण।

इस प्रकार ध्वनि-परिवर्तन के कारणों को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है—

(क) आभ्यन्तर कारण,

(ख) बाह्य कारण।

4.5.2.1. (क) आभ्यन्तर कारण

(1) प्रयत्नलाघव या मुखसुख (Economy of effort)

इसको उच्चारण सुविधा या उच्चारण-सौकर्य भी कहते हैं। यह ध्वनि-परिवर्तन का सबसे प्रमुख कारण है। मनुष्य स्वभाव से ही कम प्रयत्न करके अधिक लाभ उठाना चाहता है। कम प्रयत्न से ही अपने भावों को स्पष्ट करना चाहता है। मुख की सुविधा के कारण इसे मुख-सुख और उच्चारण की सुविधा या सरलता के कारण उच्चारण-सुविधा आदि कहते हैं। मुख-सुख के लिए कठिन शब्दों को सरल बनाया जाता है और क्लिष्ट उच्चारणों को आदि-स्वरागम आदि के द्वारा सरल बनाया जाता है। जैसे—सत्य>सच, कर्म>काम चक्कर. ब्राह्मण>बाम्हन, प्रचार>परचार, स्टेशन>इस्टेशन, हॉस्पिटल>अस्पताल।

पाचीन संस्कृत साहित्य में भी यह प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है । शिलालेखों में शुक्लपक्ष दिवस को शुदि>सुदी, बहुल पक्ष (कृष्ण पक्ष) दिवस को ब दि> बदी लिखा गया है। इससे सुदी और बदी शब्द प्रचलित हुए हैं ।

संस्कृत व्याकरण में प्रत्याहार इसी प्रक्रिया के परिचायक हैं । जैसे-अच्=पूरे स्वर, हल् = पूरे व्यंजन, अल् = पूरी वर्णमाला । इसी प्रकार इक्, यण, एच्, खर और जश् आदि शब्द ।

ध्वनि-परिवर्तन का सबसे प्रमुख कारण प्रयत्नलाघव है । यही समीकरण, विषमीकरण, लोप, आगम और वर्ण-विपर्यय आदि के मूल में है ।

(2) लघूकरण की प्रवृत्ति-

लंबे शब्दों को संक्षिप्त या लघु कर दिया जाता है । इसके मूल में भी प्रयत्नलाघव की प्रवृत्ति है । यह प्राचीन प्रवृत्ति है । वार्तिककारकात्यायन ने भी इसका निर्देश दिया है कि नामों आदि में एक अंग के उच्चारण से काम चलाया जाता है । जैसे—देवदत्तः को, देवः या दत्तः, सत्यभामा को सत्या या भामा । इसी प्रकार उपाध्याय>ओझा>झा, नेफा, पेप्सू, मीसा, यूनेस्को आदि शब्द हैं । अंग्रेजी में पूरे नाम के स्थान पर प्रथम अक्षर ले लिए जाते हैं । जयदेव—ज. दे., रामदत्त>रा. द.। हाई-स्कूल-H.S., मास्टर ऑफ आर्ट्स–M.A. आदि । इसके अलावा भारत-यूरोपीय>भारोपीय शब्द हैं । अंग्रेजी में Breakfast + Lunch = Brunch जस शब्द प्रचलित हो गए हैं । इस प्रकार North East West South से News (समाचार) बना है ।

(3) अनुकरण की अपूर्णता-

अनुकरण के द्वारा ही भाषा सीखी जाती है । वाग्यन्त्र की त्रुटि या अज्ञान आदि के कारण अनुकरण पूर्ण नहीं हो पाता है, अतः कुछ शब्दों में परिवर्तन हो जाता है । र का उच्चारण कठिन है, अत: बच्चे राम को लाम, रोटी को लोटी या नोटी कहते हैं । अपढ़ आदमी ज्वायंट को जैन, इंस्पेक्टर को सिपट्टर, कोर्ट इंस्पेक्टर को कोट साहब आदि कहते हैं । अंग्रेजी के प्रभाव से दीप्ति-शंकर>डिप्टी शंकर हो गया है । ओंनमःसिद्धम्>ओनामासीधम् हो गया है ।

(4) अशिक्षा-

अशिक्षा या अज्ञान के कारण ध्वनियों में परिवर्तन हो जाता है । लैन्टर्न>लालटेन, गार्ड>गारद, लाइन>लैन । यह उपर्युक्त दोनों कारणों के साथ मिलकर भी काम करता है । जैसे—मास्टर साहब>मास्साब, साधु>साहु, साहु>साव, गोस्वामी>गोसाईं । अंग्रेजी और अरबी-फारसी आदि के शब्दों में ज़ का ज, क़ को क, ग़ को ग, त को ट आदि कर देते हैं । वन्द्योपाध्याय>बनर्जी, मुख्योपाध्याय>मुकर्जी, गंगोपाध्याय>गांगुली भी इसी प्रकार बने हैं ।

(5) शीघ्र भाषण-

शीघ्र बोलने के कारण भी ध्वनि में परिवर्तन हो जाता है । इसमें मध्यगत ध्वनियों का प्रायः लोप हो जाता है । इसके साथ लघूकरण की प्रवृत्ति भी देखी जाती है । जैसे—पद्मादत्त

दादा>पद्दा, पदिया (कुमाऊँनी), लालमणि दादा>लल्दा, भ्रातृजाया>भौजी, उन्होंने>उन्ने, किसने>किन्ने, अब ही>अभी, तब ही>तभी, किस ही>किसी, अंग्रेजी में Do not > Don't, Will not > Won't.

(6) भावावेश-

प्रेम और क्रोध आदि भावावेश में शब्दों में ध्वनि-परिवर्तन हो जाता है । राम>रामू, कृष्ण>कान्ह, कन्हैया, लालचन्द>लल्लू, पुरुषोत्तम>परसू, माँ>मम्मी, पिता>पापा, लालित>लाड़ला, बच्चा>बाचा, बचवा, बाबू>बबुआ और बब्बू आदि । ऐसे शब्दों की संख्या न्यून है ।

(7) काव्यात्मकता-

काव्य में छन्द के कतिपय नियमों का पालन करना पड़ता है । इसके लिए कभी ह्रस्व को दीर्घ, दीर्घ को ह्रस्व, कुछ वर्णागम आदि किया जाता है । संस्कृत की सूक्ति है—'अपि माषंमषंकुर्यात्छिन्दोभङ्गं न कारयेत्'- माष (उड़द) को मष कर दे, पर छन्दभंग न करे । हिन्दी के सभी काव्यों में, विशेषकर सूर, तुलसी और रीतिकालीन कवियों के काव्यों में यह प्रवृत्ति बहुत है । फलस्वरूप ध्वनियों में परिवर्तन हो जाता है । लय एवं तुक के लिए बहुत से शब्दों में ध्वनि-परिवर्तन किया जाता है । जैसे—वीर>वीरा, कबीर>कबिरा, सूर>सूरा, नदी>नदिया, देहली>देहरी, द्वार>दुआर, स्थिर>थिर, नहीं>नाहीं ।

(8) बलाघात-

ध्वनिपरिवर्तन में बलाघात का महत्त्वपूर्ण स्थान है । जिस ध्वनि पर बल दिया जाता है, वह शेष रहती है, अन्य निर्बल ध्वनियाँ क्षीण हो जाती हैं । अतएव संस्कृत में चतुरीय और चतुर्य के तुरीय और तुर्य (चतुर्थ) रूप हो जाते हैं । इसी प्रकार अभ्यन्तर>भीतर, उपरि>पर, एकादश>ग्यारह, द्वादश>बारह आदि ।

(9) कृत्रिमता-

आत्माभिव्यक्ति के लिए कुछ व्यक्ति शब्दों को तोड़-मरोड़ कर बोलते हैं । इसे बनावटीपन कह सकते हैं । इसी प्रकार यदृच्छा (बनावटी) शब्द भी गढ़ लिए जाते हैं । इसका स्थायी प्रभाव नहीं होता है । जैसे—भाई>भइया, भ्राता>प्रा (पंजाबी), बैठो>बैटो, उठो>उट्ठो, बहिनों>भैनों, छात्र>क्षात्र, स्मरण>सुमिरन, शुमिरन, स्पष्ट>अस्पष्ट आदि ।

(10) भ्रामक व्युत्पत्ति-

भ्रमवश कुछ शब्दों को स्वभाषा के अनुरूप बना लिया जाता है । अन्य भाषा के शब्दों को दूसरी भाषा में लेते समय प्रायः इस प्रकार के ध्वनि-परिवर्तन होते हैं । मैक्समूलर>मोक्षमूलर, इन्तिकाल (अरबी)>अन्तकाल, प्रोग्राम>पुरोगम, लाइब्रेरी>रायबरेली, आर्ट्स कालेज>आठ कालेज, गोडाउन>गोदाम, बनर्जी>बन्दर जी आदि ।

4.5.2.2.(ख) बाह्य कारण-

बाह्य कारण छः प्रकार के हैं। वे-

(1) भौगोलिक प्रभाव-

भौगोलिक कारणों से ध्वनियों में परिवर्तन हो जाता है। फारसी में 'स' का 'ह' हो जाता है। जैसे—सिन्धु>हिन्दु, सप्ताह>हफ्ता आदि। पहाड़ी जिलों में 'स' को 'श' बोलते हैं। समाचार>शमाचार, सन्देश>शन्देश, सीट> शीट। उच्च जर्मन और निम्न जर्मन में भौगोलिक कारणों से ही ध्वनि-परिवर्तन हुआ है। जैसे—उच्च जर्मन में d > t (द् को त्) drink >trinken, day > tag, आदि के t >z (त् को त्स) two >zwei, thको d (थ्>द्) earth >erde, brother >bruder.

(2) सामाजिक एवं राजनीतिक परिस्थितियाँ-

सामाजिक एवं राजनीतिक उन्नति या अवनति के कारण शब्दों में ध्वनि-परिवर्तन हो जाता है। उन्नति की अवस्था में शब्दों के शुद्धरूप पर बल दिया जाता है और अवनति के समय अपभ्रंश रूपों की अधिकता होती है। पण्डित>पंडा, यजमान>जजमान, दिल्ली>देहली, Delhi, मुंबई>बम्बई, Bombay, कलिकाता>कलकत्ता, बुद्ध>बुद्धू, लुंचितकेश>लुच्चा, आर्डर्ली>अर्दली, वाराणसी>बनारस आदि।

(3) काल-प्रभाव या स्वाभाविक विकास-

काल के प्रभाव से भाषा में विकास या परिवर्तन होता रहता है। फलस्वरूप वैदिक संस्कृत से संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश एवं वर्तमान भारतीय भाषाओं का विकास हुआ। जैसे—दृश् से देखना, अस् से होना, खाद् से खाना, पा से पीना, वर्तते>बाटे, बा, निवर्तते>निबटता है।

(4) लिपि-दोष-

विभिन्न लिपियों की अपूर्णता के कारण भी ध्वनि-परिवर्तन देखा जाता है। अंग्रेजी और उर्दू आदि के प्रभाव के कारण ध्वनियों के उच्चारण में अन्तर हो गया है। जैसे—अंग्रेजी में राम>रामा, कृष्ण>कृष्णा, आर्य>आर्या, बद्ध>बद्धा, गुप्त>गुप्ता, मिश्र>मिश्रा, आदि। उर्दू के प्रभाव के कारण आर्यसमाज>आर्यासमाज, प्रचार>परचार, अर्जुन>अरजुन, इन्द्रजित्>इन्दरजीत, सुरेन्द्र>सुरेन्दर या सुरिन्दर आदि।

(5) अन्य भाषाओं का प्रभाव-

अन्य भाषाओं के प्रभाव के कारण भाषा की ध्वनियों में परिवर्तन देखा जाता है। फारसी और अरबी के प्रभाव के कारण हिन्दी में भी क़,ग़, और ज़ आदि ध्वनियाँ फारसी या उर्दू के शब्दों में लिखी और बोली जाती हैं। यह माना जाता है कि भारोपीय भाषाओं में ट-वर्ग नहीं था। द्रविड़ परिवार की भाषाओं के संपर्क से संस्कृत आदि में ट-वर्ग ध्वनि आई है।

जैसे—प्रकृत>प्रकट, संकृत>संकट, विकृत>विकट। अंग्रेजी के प्रभाव से हिन्दी में ज़ ध्वनि। Is-इज़, His-हिज़ आदि।

(6) सादृश्य-

सादृश्य या समानता के आधार पर कुछ ध्वनियों में परिवर्तन हो जाता है। जैसे—द्वादश के सादृश्य पर एकादश। द्वि का द्वा होता है, पर एक में आ नहीं आ सकता है। यह सादृश्यमूलक है। दण्डिन् + आ = दण्डिना, करिणा आदि में ना ठीक है, पर अग्निना, वारिणा, शुचिना (तृ० एक०) में ना केवल सादृश्य के आधार पर है। तुभ्यम्>तुझे के सादृश्य पर मह्यम्>मुझे हो गया। मह्यम में उ नहीं है। पैंतालीस के सादृश्य पर सैंतालीस में भी अनुनासिकता आई है।

4.6. ध्वनि परिवर्तन की दिशाएँ :

ध्वनि परिवर्तन का अर्थ किसी भी भाषा के विकास पर विचार करते हुए हम देखते हैं कि उसके प्राचीन और नवीन रूप में पर्याप्त अन्तर आ गया है। यह अन्तर उसमें हुए अनेक प्रकार के परिवर्तनों को सूचित करता है। किसी शब्द में कहीं कोई नयी ध्वनि आ मिली है तो कहीं कोई ध्वनि लुप्त हो गई है। किसी ध्वनि का स्थान परिवर्तित हो गया है तो किसी ध्वनि का घोष से अघोष हो जाना अथवा अघोष ध्वनि का घोष हो जाना सभी परिवर्तन भाषा में ध्वनि-परिवर्तन कहे जाते हैं। बहुत काल तक किसी शब्द का प्रयोग होते रहने पर उसकी कई ध्वनियाँ अल्पप्राण हो जाती हैं तो कोई-कोई अल्पप्राण ध्वनि महाप्राण ध्वनि का रूप ले लेती है। इन सभी को ध्वनि-परिवर्तन की दिशाएँ कहा जाता है। ध्वनि परिवर्तन की दिशाओं को हम निम्नलिखित नामों से पुकारते हैं-

1. आगम –

किसी शब्द में पहले से कोई ध्वनि जब अविद्यमान रहती है और बाद में उसमें वह आ मिलती है तो चाहे वह स्वर हो, व्यंजन हो अथवा अक्षर हो वह नवीन आई ध्वनि 'आगम' कहलाती है। यह ध्वनि का आगमन शब्द के प्रारम्भ, मध्य अथवा अन्त में कहीं भी हो सकता है। इस प्रकार यह स्वरागम भी तीन प्रकार का होता है, (आदि, मध्य, अन्त) व्यंजनागम भी तथा इसी प्रकरअक्षरागम भी। इससे स्पष्ट होता है कि आगम नौ रूपों में दिखाई पड़ता है अथवा इसके नौ भेद कहे जा सकते हैं। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं- स्वर्ण से सुवर्ण, शाप से श्राप, वधू से वधूटी, स्कूल से इस्कूल, वरयात्रा से बारात, प्यारा से पिआरा औरप्रिय से पिया आदि।

2. लोप –

किसी शब्द में पहले विद्यमान ध्वनि का उसके परिवर्तित रूप में न पाया जाना ध्वनि का लोप कहलाता है। जैसे- स्कंध से कंधा, स्नान से नहाना, शिक्षा से सीख, ग्राम से गाँव, सर्प से साँप आदि स्नेह से नेह, वाष्प से भाँप, दूर्वा से दूब, भगिनी से बहिन, भण्डागार से भाण्डार और फिर भण्डार, सूची से सूई, अभ्यन्तर से भीतर आदि उदाहरण में कभी आदि में, कभी मध्य में और कभी अन्त में ध्वनि का लोप हो गया है।आगम की ही भाँति लोप के भीठीक

उसी प्रकार नौ भेद होते हैं। स्वर, व्यंजन औरशब्द इन तीनों के आदि ।मध्य और अंत के लोप नौ प्रकार के हो गए। लोप का दसवाँ रूप है समान अक्षरका लुप्त होना जैसे-नाक कटा से नकटा आदि।

3. विपर्यय–

किसी शब्द में न तो कोई नयी ध्वनि जुड़ी हो और न लुप्त हुई हो अपितु शब्द की ध्वनियाँ अपना स्थान बदल कर आगे-पीछे हो गई हो, उसे विपर्यय कहा जाता है। उदाहरण के लिए अदरक से अदकर, लखनउ से लखलऊ, ससुर से सुसर, पागल से पगला औरमतलब से मतबलआदि। कभी-कभी शब्द या शब्दांश का भी विपर्यय हो जाया करता है जैसे आगे-पीछे से पीछा-आगा, रात-दिन से दिन-रात, ओखल-मूसल से मूखल-ओसलआदि ।

4. समीकरण –

किसी शब्द में जहाँ दो ध्वनियाँ हों जिनमें एक सशक्त ध्वनि दूसरी ध्वनि को अपने अनुरूप परिवर्तित कर लेती है इसे समीकरण कहा जाता है। जैसे संस्कृत का अग्नि प्राकृत में अग्गि हो जाता है, धर्म (संस्कृत) से धम्म (प्राकृत)हो जाता है। समीकरण स्वर का व्यंजन का दो प्रकार का हुआ । इस प्रकार समीकरण चार प्रकार का हो जाता है।

5. विषमीकरण –

जहाँ दो एक ही प्रकार की ध्वनियाँ धीरे-धीरे असमान होकर विषमता में बदल जाएँ वहाँ विषमीकरण कहा जाता है जेसेकंकन से कंगन। समीकरण की भाँति इसके भी स्वर विषमीकरण, व्यंजन-विषमीकरण, अग्र और पश्च इस प्रकार चार भेद होते हैं।

6. सघोषीकरण–

जहाँ एक अघोष ध्वनि अपने साथ की ध्वनि के प्रभाव से घोष में बदल जाए वहाँसघोषीकरण कहा जाता है ।

जैसे- शकुन से सगुन, शाक से साग, अर्क से आख औरहस्त से हाथ प्रकट से प्रगट आदि।

7. अघोषीकरण–

जहाँ शब्द में कोई घोष ध्वनि अघोष ध्वनि में बदल जाए उसे अघोषीकरण कहा जाता है, जैसे, फारसी के मदद से हिन्दी का मदत।

8. मात्रा-भेद –

जब किसी शब्द में कोई दीर्घ मात्रा ह्रस्व में अथवा ह्रस्व मात्रा दीर्घ में बदल जाती है उसे मात्रा भेद कहा जाता है, जैसे- संस्कृत का दुग्ध से दूध, पुत्र से पूत, अग्नि से आग औरआषाढ़ से असाढ़ आदि।

9. अल्पप्राणीकरण–

जहाँ कोई महाप्राण ध्वनि परिवर्तित होकर अल्प प्राण ध्वनि हो जाए उसे अल्पप्राणीकरण कहते हैं । उदा-सिन्धु से हिन्दू भगिनी से बहिन।पाद से पाँव, कर्ण से कान आदि।

10. महाप्राणीकरण -

जब किसी शब्द में अल्पप्राण ध्वनि महाप्राण में परिवर्तित हो जाए उसे

महाप्राणीकरण कहा जाता है जैसे- गृह से घर, वन से बन, वाटिका से बाग, पादप से पेड़ औरवट से बड़।

11. ऊष्मीकरण–

जब किसी शब्द में पहले से जो ध्वनि ऊष्म न हो और वह ऊष्म में परिवर्तित हो जाए तो उसे ऊष्मीकरण कहते हैं।'क' और 'श' या 'स'ध्वनियाँऊष्ममेंपरिवर्तितहोगईहैं।

12. अनुनासिकीकरण–

किसी शब्द में जो ध्वनि पहले अनुनासिक न हो किन्तु बाद में उसमें अनुनासिकता का समावेश हो जाए उसे अनुनासिकीकरण कहा जाता है ।जैसे- ग्राम शब्द से गाँव, छाया शब्द से छाँव, सर्प से साँप, वाष्प से भाँप, श्वास से साँस, अश्रु से आँसू औरहास्य से हँसी आदि।

13. सन्धि–

जहाँ अलग-अलग ध्वनियों में मेल या संधि हो जाताी है उसे सन्धि का ध्वनि परिवर्तन कहा जाता है जैसे- नइन (नैन) बइन (बैन) कउन (कौन)। सन्धि तीन प्रकार की होती है-

1. अच् या स्वर सन्धि।
2. हल् अर्थात् व्यंजन सन्धि।
3. विसर्ग सन्धि।संधि की चार दिशाएँ हैं- लोप, आगम, विकार तथा प्रकृतिभाव।

14. भ्रामक व्युत्पत्ति –

जब अज्ञानवश किसी अन्य भाषा के शब्द को अपनी भाषा की ध्वनियों में मनगढ़ंत ढंग से प्रयोग किया जाए उसे भ्रामक व्युत्पत्ति कहा जाता है । जैसे-अंग्रेजी भाषा का कण्डक्टर हिन्दी में 'कनक्टर' कलक्टर को 'कलट्टर', लार्ड से लाट आदि। भाषा वैज्ञानिकों ने अभी तक ध्वनि परिवर्तन की ऊपर निर्दिष्ट 14 दिशाओं का ही अध्ययन किया है । यद्यपि ध्वनि परविर्तन की असंख्य दिशाएँ हो सकती हैं ।

4.7. सारांश :

ध्वनि विज्ञान को अब स्वनविज्ञान के नाम से जाना जाता है । स्वनविज्ञान मानवीय उच्चारण अवयवों की औच्चारिककार्यविधि के आधार पर वाग्ध्वनियों के भौतिक गुणों का विवेचन करता है । उच्चारण स्थान और प्रयत्न का ठीक-ठीक ज्ञान होने से किसी भी ध्वनिका शुद्ध उच्चारण सीखा जा सकता है । स-श और व-ब का अंतर समझा जा सकता है । सर (तालाब)को शर (बाण) कहने के अनर्थ से बचा जा सकता है । विश्व की अन्य भाषाओं को सीखने में भी इससे मदद मिलती है । वाग्यंत्र की रचना और उसके कार्यों को जानने से हम विदेशी ध्वनियों का विश्लेषण कर सकते हैं । सूक्ष्म विश्लेषण के कारण वाग्यंत्र के द्वारा उन बनियों का सूक्ष्मातिसूक्ष्म उच्चारण कर सकते हैं । भाषा मात्र के सभी अंगों उपांगों का

अध्ययन करना भाषा-विज्ञान का विषय है। सामान्यतया भाषा के आंतरिक और बाह्य दोस्तर होते हैं। बाह्य के अंतर्गत ध्वनि, पद और वाक्य होते हैं तथा आंतरिक के अंतर्गत अर्थ आताहै। इसके आधार पर भाषा-विज्ञान के चार प्रमुख अंग या शाखाएँ निर्धारित की गई हैं। ध्वनि-विज्ञान या स्वन-विज्ञान, रूप विज्ञान, वाक्य विज्ञान और अर्थ विज्ञान। भाषा-ध्वनियों के अध्ययन-विश्लेषण और वर्गीकरण करने वाले विज्ञान का अभिधान ध्वनि विज्ञान है। ध्वनि-विज्ञान भाषा विज्ञान की वह शाखा है जिसमें भाषाई बनियों का बारीकी से वर्णन, विश्लेषण व वर्गीकरण किया जाता है। विश्व की समस्त भाषाओं में प्राप्त ध्वनियों के सूक्ष्म अंतरों को ज्ञात करना, इन ध्वनियों के उच्चारण स्थान और उनके लिए अपेक्षित प्रयत्नों को जानना तथा उनका स्पष्ट उल्लेख करना और इन ध्वनियों को स्थान और प्रयत्न की दृष्टि से वर्गीकृत करना ध्वनि विज्ञान का उद्देश्य एवं क्षेत्र है।

4.8. स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न

1. ध्वनि-विज्ञान का महत्व के बारे में सोदाहरण से बताइए ?
2. विभिन्न आधारों पर ध्वनियों का वर्गीकरण ?
3. ध्वनि-परिवर्तन के कारण ?
4. ध्वनि-परिवर्तन की दिशाएँ ?

सहायक ग्रंथ

1. भाषा-विज्ञान के सिद्धांत और हिन्दी भाषा- डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना, मीनाक्षी प्रकाशन, मीरठ।
2. भाषा-विज्ञान और हिन्दी – डॉ. सरयूप्रसादअग्रवाल, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।
3. भाषा-विज्ञान की भूमिका- देवेन्द्रनाथ शर्मा, राधा कृष्ण प्रकाशन, दिल्ली।
4. सामान्य भाषा विज्ञान-सबाबूराम सक्सेना, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।
5. भाष-विज्ञान एवं भाषा-शास्त्र- डॉ. कपिलदेवद्विवेदी, विशविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।
6. हिन्दी भाषा की संरचना- डॉ. भोलानाथ तिवारी, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली।

डॉ. सूर्य कुमारी. पी.

5. ध्वनि गुण एवं ध्वनि नियम

उद्देश्य

इस इकाई में आप जान पाएंगे

1. भाषा विज्ञान में ध्वनि की उपयोगिता को जानेंगे।
2. भाषा में ध्वनि गुणों के महत्व को जान पाएंगे।
3. ध्वनि नियम कौन-कौन से होते है उसे जान पाएंगे।
4. पाश्चात्य तथा भारतीय ध्वनि नियमों से परिचित हो जाएंगे।
5. ध्वनि नियमों को समझकर लिखने में आसानी रहेगी।

इकाई-V

5.0. उद्देश्य

5.1. प्रस्तावना

5.2. ध्वनि विज्ञान सामान्य परिचय

5.3. ध्वनि गुण

5.4. ध्वनि नियम

5.4.1. ग्रिम नियम

5.4.2. ग्रासमैन नियम

5.4.3. बर्नर नियम

5.4.4. तालव्य नियम

5.4.5. मूर्धन्य नियम

5.5. निष्कर्ष

5.6. स्वयं बोध प्रश्न

5.1. प्रस्तावना

शब्द का आधार ध्वनि है। ध्वनि विज्ञान के अंतर्गत ध्वनियों का अनेक प्रकार से अध्ययन किया जाता है। भाषा विज्ञान किसी भाषा के अध्ययन की उस भाषा को कहते हैं जिसमें उस भाषा की उत्पत्ति, स्वरूप, विकास आदि का वैज्ञानिक तथा विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जाता है। भाषा विज्ञान किसी भाषा का अध्ययन भाषा की विविध शाखाओं अथवा अंगों जैसे ध्वनि विज्ञान, रूप विज्ञान, वाक्य विज्ञान और अर्थ विज्ञान के आधार पर किया जाता है।

ध्वनि विज्ञान में किसी भाषा की ध्वनियों तथा उनकी उच्चारण प्रक्रिया, प्रकृति व भेदो का अध्ययन किया जाता है। व्यक्ति ध्वनि का उच्चारण करता है वह ध्वनि वायु तरंगों के रूप में श्रोता के कानों तक पहुँचती है, श्रोता इन्हें ग्रहण करता है और हमारे कान ही इन ध्वनियों को मस्तिष्क तक पहुँचाते हैं। ध्वनि एक यांत्रिक तरंग है जिसके संचरण के लिए माध्यम की आवश्यकता होती है। ध्वनि का सामान्य अर्थ है – आवाज नाद, गूँज आदि जैसे पक्षियों की चहचहाहट, मेघ गर्जन आदि रूप कोलाहल के हैं परंतु भाषा विज्ञान की दृष्टि से यह ध्वनि नहीं है क्योंकि जब तक यह ध्वनि सार्थक पदों अथवा वाक्यों के निर्माण में सहयोगी नहीं होगी तब तक वह केवल शोर की ही श्रेणी में आएगी परंतु यही ध्वनियाँ जब

सार्थक रूप में प्रयुक्त होती है तब वह भाषा विज्ञान की ध्वनियों के रूप में पहचानी जाती हैं। दूसरे शब्दों में मनुष्य के मुख से उच्चरित होने वाली ध्वनियाँ जब सार्थक पदों का निर्माण करें तब ही भाषा विज्ञान की दृष्टि से वह ध्वनि कहलाएगी। भाषा का आधार मानव समाज होता है। मानव में निरंतर परिवर्तन होता है, उसकी परिस्थितियों में परिवर्तन होता रहता है। पहनावे, वेशभूषा, खान पान सभी चीजों के परिवर्तन का असर भाषा पर ही पड़ता है। भाषा का ही एक अंग ध्वनि है भाषा में होने वाला परिवर्तन ध्वनियों में होने वाले परिवर्तन के कारण भी होता है। प्रत्येक भाषा में किसी कार्य विशेष में कुछ ध्वनि संबंधी परिवर्तन घटित होते हैं उन्हें हम व्यवहारिक दृष्टि से ध्वनि नियम कहते हैं।

5.2. ध्वनि विज्ञान सामान्य परिचय

ध्वनि के अध्ययन से संबंध शास्त्र या विज्ञान के लिए अंग्रेजी में आज प्रमुखतः फोनेटिक्स और फोनॉलजि (Phonetics, Phonology) ये दो शब्द चल रहे हैं। यह स्पष्ट है कि इन दोनों का संबंध ग्रीक शब्द 'Phone' से है, जिसका अर्थ 'ध्वनि' है। 'टिक्स' और 'लजि' प्रयोगतः 'विज्ञान' या 'शास्त्र' के समानार्थी हैं। इस प्रकार दोनों ही एक प्रकार से ध्वनि के विज्ञान या शास्त्र हैं, किन्तु प्रयोग की दृष्टि से इनमें थोड़ा अंतर है। 'फोनेटिक्स' या (Phonics) ध्वनियों के अध्ययन के शुद्ध सैद्धांतिक पक्ष का विज्ञान है। इस विज्ञान में हम सामान्य रूप से ध्वनि की परिभाषा, भाषा ध्वनि, ध्वनियों के उत्पन्न करने के अंग, ध्वनियों का वर्गीकरण और उनका स्वरूप, उनकी लहरों का किसी के मुंह से चलकर किसी के कान तक जाना तथा सुना जाना, एवं उनमें विकार आदि बातों पर विचार करते हैं। इस प्रकार 'फोनेटिक्स' का इस रूप में किसी भाषा-विशेष से संबंध नहीं है। यह ध्वनि के अध्ययन का सामान्य विज्ञान है जो अपने अध्ययन के लिए सामग्री, संसार की सभी भाषाओं से लेता है और ऊपर कहीं गयी बातों से संबंध सामान्य बातों का विवेचन करता है। 'फोनॉलजि' इसके विरुद्ध भाषा-विशेष से संबंध है। इसमें हम किसी एक भाषा या बोली की ध्वनियों का विचार करते हैं और फोनेटिक्स द्वारा निरूपित सिद्धांतों के आधार पर उस भाषा की ध्वनियों के स्वरूप, वर्गीकरण आदि पर विभिन्न दृष्टियों से विचार करते हैं। उसके बाद एक-एक ध्वनि को लेकर उसके इतिहास और विकास आदि को देखते हैं, तथा उसके नियमों का निर्धारण करते हैं। इस प्रकार 'फोनेटिक्स' मात्र सैंद्धान्तिक और सार्वभाषिक है, किन्तु 'फोनॉलजि' उसका व्यावहारिक रूप है, किसी एक भाषा से संबद्ध है, साथ ही ध्वनियों के विकास पर विचार करने के कारण मात्र वर्णनात्मक या विश्लेषणात्मक न होकर ऐतिहासिक भी है।

संस्कृत में ध्वनि विज्ञान का पुराना नाम 'शिक्षाशास्त्र' था। हिन्दी में इस प्रसंग में 'फोनेटिक्स' के लिए ध्वनि-तत्व, ध्वनि-शिक्षा, ध्वनि-विचार, ध्वनि-विज्ञान, ध्वनि-शास्त्र, वर्ण-विज्ञान आदि। तथा 'फोनॉलजि' के लिए ध्वनि-विकार, वर्ण-विचार, ध्वनि-विचार, ध्वन्यालोचन, ध्वनि विज्ञान, ध्वनि-जात, ध्वनि-प्रक्रिया, ध्वनि-प्रक्रिया-विज्ञान आदि नाम प्रयुक्त हुए हैं। एक रूपता की दृष्टि से फोनेटिक्स के लिए ध्वनि विज्ञान, या ध्वनिशास्त्र और 'फोनॉलजि' के लिए 'ध्वनि-प्रक्रिया' या 'ध्वनि-प्रक्रिया-विज्ञान' का प्रयोग किया जा सकता है। इन दोनों के लिए 'ध्वनिविज्ञान' नाम ही वैज्ञानिक माना गया है। भाषाविज्ञान की अन्य शाखाओं की भाँति ध्वनिविज्ञान भी वर्णनात्मक, ऐतिहासिक और तुलनात्मक तीनों प्रकारों का हो सकता है। दूसरे शब्दों में भाषा-ध्वनि का सर्वांगीण अध्ययन ही ध्वनिविज्ञान है।

5.3. ध्वनि गुण

भाषा का आधार 'ध्वनि' है और 'ध्वनि' से आशय प्रायः स्वर और व्यंजन का लिया जाता है किन्तु भाषा केवल स्वर और व्यंजन का ही योग नहीं है। इन दोनों के अतिरिक्त मात्रा और सुर-बलाघात आदि भी उनके साथ काम करते हैं। इन तीनों का अलग अस्तित्व नहीं है। ये स्वर-व्यंजन पर ही आधारित हैं। यद्यपि इनके कारण उनकी प्रकृति या गुण में अंतर रहता है। सुर-बलाघात दोनों को एक नाम 'अघात' (accent) से भी अभिहित किया जाता है। ध्वनिगुण के अंतर्गत बलाघात या सुर भी सम्बन्ध तत्व का काम करते हैं। सुर का उदाहरण चीनी तथा अफ्रीकी भाषाओं में मिलता है। अफ्रिका की 'फुल' भाषा से एक उदाहरण लिया जा सकता है। उनमें 'मिरवत' यदि एक सुर में कहा जाए तो अर्थ होगा 'मैं मार डालुँगा' पर यदि 'त' का सुर उच्च हो तो अर्थ होगा 'मैं नहीं मारूँगा'। बलाघात तथा स्वराघात का संस्कृत,

स्लैवोनिक, लिथुआनिअन तथा ग्रीक में भी काफी महत्वपूर्ण स्थान रहा है। ग्रीक का एक उदाहरण लिया जा सकता है। 'प्रेत्रोक्तोद' में यदि पहले 'ओ' पर स्वराघात होगा तो अर्थ होगा 'पिता द्वारा मारा गया' पर यदि दूसरे 'ओ' पर होगा तो अर्थ होगा 'पिता को मारने वाला' अंग्रेजी में कनडक्ट (Conduct) में यदि 'क' पर बलाघात होगा तो यह शब्द संज्ञा होगा, पर यदि 'ड' पर होगा तो क्रिया। इसी प्रकार प्रजेंट (Present) में 'र' पर होने से संज्ञा और 'जे' पर होने से क्रिया।

इसके अतिरिक्त कुछ अन्य प्रकार के भी संबंध तत्व मिलते हैं, पर अधिक प्रचलित उपर्युक्त ही है। उपर्युक्त दस में दो या दो से अधिक को एक साथ सम्मिलित कर भी संबंध तत्व का काम लिया जाता है, जैसे क़तल (मारना) से मक्तूल (जो मारा जाए) तक़ातुल (एक दूसरे को मारना), कुत्ताल (क़तल करने वाला) (मुक़ातला) आपस में लड़ना और तक़्लील (बहुत क़तल करना) आदि। ध्वनिगुण के अंतर्गत प्रमुखतः ये दो ही 'मात्रा' और 'आघात' ही आते हैं।

5.3.1. मात्रा

किसी भी ध्वनि के उच्चारण में या उच्चारण छोड़कर मौन रहने में, समय की जो मात्रा लगती है। उसे भाषा के अध्ययन में 'मात्राकाल' कहते हैं। किसी ध्वनि के उच्चारण में समय कम लगता है किसी में ज्यादा, किसी में बहुत कम और किसी में बहुत ज्यादा। कम समय वाली मात्रा ह्रस्व, अधिक समय वाली दीर्घ और उससे से भी प्लुत कहलाती है। इसी आधार पर मात्रा के मोटे रूप से पाँच भेद- ह्स्वार्द्ध (Half short), ह्रस्व (short), ईपत्-दीर्घ (half long), दीर्घ (long), प्लुत (overlong) आदि भेद किए जा सकते हैं। यों तो सूक्ष्मता से विचार करने पर ये भेद और अधिक हो सकते हैं। मशीनों के आधार पर तो पचासों भेद किए जा सकते हैं।

प्राचीन भारत में मात्रा का अध्ययन अच्छी तरह किया गया था। भारतीय भाषाशास्त्री इसके महत्व से पूर्ण परिचित थे। इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि सिर्फ इसी विषय को लेकर लिखा गया 'काल-निर्णय-शिक्षा' नाम का एक स्वतंत्र ग्रंथ मिलता है। भारतीय प्रातिशाख्र, शिक्षा या व्याकरण-ग्रंथों में मात्रा के भेद के रूप में केवल तीन- ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत का ही प्रायः उल्लेख मिलता है। परंपरागत रूप में ह्रस्व एकमात्रिक, दीर्घ, प्लुत त्रिमात्रिक है, या कुछ लोगों के अनुसार एक बार चिटकी बजाने में जितना समय लगता है, उतना समय ह्रस्व का है और उससे दुगना तथा तीन गुना क्रम से दीर्घ तथा प्लुत का। बात ऐसी नहीं है ह्रस्व से दीर्घ में अधिक समय तो लगता है किन्तु दुगना नहीं। संस्कृत में सामान्यतः प्रथम दो ह्रस्व, दीर्घ का ही प्रयोग मिलता है। प्लुत का प्रयोग बहुत कम मिलता है। पूरे ऋग्वेद में इसका प्रयोग दो-तीन बार से अधिक नहीं हुआ है। 'ओ3म्' में 'ओ' प्लुत है। इसीलिए ओ के बाद 3 लिखते हैं जो ह्रस्व के तीन गुने का प्लुत का द्योतक है। किसी को बुलाने में इसका प्रायः प्रयोग होता है 'ओर$$$म'। यहाँ 'रा' का 'आ' प्लुत है।

मात्रा स्वर, अर्द्ध स्वर और व्यंजन सभी की होती है। कुछ लोगों का विचार है कि भारत में व्यंजन की मात्रा नहीं मानी जाती थी, किन्तु अथर्ववेद प्रातिशाख्र तथा वाजसनेयी प्रातिशाख्र आदि कई ग्रंथों में व्यंजन की मात्रा का उल्लेख मिलता है। वाजसनेयी प्रातिशाख्र व्यंजन की मात्रा आधी (व्यंजनमद्ध मात्रा) मानता है। व्यंजन की मात्रा के आधार पर कई वर्ग बनाये जा सकते हैं। स, श, ज आदि ऐसे व्यंजन जिनका उच्चारण देर तक किया जा सकता है, अपेक्षाकृत देर तक बोले जा सकते हैं। इनकी मात्रा घट-बढ़ सकती है, किन्तु स्पर्श आदि में सामान्यतः ऐसा होना संभव नहीं होता। इसका अर्थ यह नहीं कि उनकी मात्रा कभी दीर्घ हो ही नहीं सकती। व्यंजन का द्वित्व वस्तुतः दो व्यंजन में न होकर व्यंजन का, मात्रा की दृष्टि से दीर्घ रूप ही है। 'गुड्डी', 'बग्गी', 'सच्चा', 'धक्का' जैसे शब्दों में यदि ध्यान दिया जाये तो 'ड', 'ग', 'च', 'क' दो नहीं हैं, अपितु एक ध्वनि के ही ये दीर्घ रूप हैं। इसका अर्थ यह भी हुआ कि स्पर्श व्यंजनों में मात्रा की दीर्घता के कारण बीच की स्थिति ही लम्बी हो जाती है। वायु के आने और स्फोट या निकलने में कोई अन्तर नहीं पड़ता। कहना न होगा कि इस बात को दृष्टि में रखते हुए इस प्रकार की ध्वनि को दो चिन्हों के योग से लिखना भ्रामक है। वस्तुतः स्वर और व्यंजन दोनों के लिए मात्रा की दीर्घता को व्यक्त करने के लिए एक चिन्ह का प्रयोग अधिक वैज्ञानिक है।

स्वरों में ह्रस्व स्वरों की मात्रा ह्रस्व तथा दीर्घ की दीर्घ होती है। संयुक्त स्वरों के उच्चारण में दीर्घ से अधिक समय लगता है। इस प्रकार उन्हें 'प्लुत' या अतिरिक्त दीर्घ कहा जा सकता है। प्रायः सभी भाषाओं में ह्रस्व और दीर्घ स्वर पाये जाते हैं। किन्तु ऐसी भाषाएँ बहुत अधिक नहीं हैं, जिनमें सच्चे अर्थों में एक ही स्वर के ह्रस्व और दीर्घ दोनों रूप हो। अफ्रीका में ईव आदि भाषाओं में सच्च अर्थों में ह्रस्व के दीर्घ स्वर हैं जैसे ba (कीचड़) baa (खुला) आदि। जिनमें ह्रस्व

स्वरों के ही दीर्घ रूप वर्तमान हैं। हिन्दी आदि में अ आ, इ ई, उ ऊ में प्रथम के दूसरे, मात्र दीर्घ रूप नहीं हैं, जैसा कि प्रायः माना जाता है। कहना न होगा कि इनमें मात्रा के अतिरिक्त स्थान का भेद है। यों स्थान के आधार पर ह्रस्व के ह्रस्वार्द्ध या दीर्घ के ह्रस्व रूप अवश्य उपलब्ध हैं। कमल में 'क' और 'म' के 'अ' बराबर नहीं हैं, और न 'ओर' और 'ओखली' के 'ओ' भी मात्रा की दृष्टि से समान नहीं है।

मात्रा के अंकन के लिए कई पद्धतियों का प्रयोग होता है। अंतर्राष्ट्रीय लिपि चिन्ह में दीर्घ के लिए दो बिन्दु (a:) उससे कुछ ह्रस्व के लिए एक बिन्दु (a.) और ह्रस्व को बिना किसी चिन्ह के (a) लिखते हैं। कुछ लोग ऊपर छोटी लकीर के द्वारा दीर्घता (ا) व्यक्त करते हैं। नागरी लिपि में अ आ, इ ई, उ ऊ में कई प्रकार के चिन्हों का दीर्घता के लिए प्रयोग होता है। व्यंजनों के साथ भी 'ह्रस्व-दीर्घ' के चिन्ह अलग-अलग (क का, गि गी) हैं।

5.3.2. आघात

यहाँ 'आघात' शब्द अंग्रेजी शब्द 'ऐक्सेंट' (accent) के प्रतिशब्द के रूप में प्रयुक्त किया जा रहा है। वैसे तो हिन्दी में 'ऐक्सेंट' के लिए 'बल', 'स्वर', 'स्वराघात' आदि का भी प्रयोग किया गया है। अंग्रेजी 'ऐक्सेंट' शब्द का प्रयोग भाषाविज्ञान में प्रमुखतः तीन अर्थों में मिलता है- 1). पामर आदि कुछ भाषा वैज्ञानिक इसे बहुत विस्तृत अर्थ में लेते हैं और उनके अनुसार मात्रा (mora), सुरलहर (intonation), बलाघात (stress), ध्वनि-प्रक्रिया (आगम, लोप, समीकरण, विषमीकरण आदि) तथा ध्वनि प्रकृति (स्थान, प्रयत्न या संवृतता-विवृतता आदि) आदि अनेक चीजें इसके अन्तर्गत आती है। 2). दूसरे अर्थ में 'ऐक्सेंट' बहुत सीमित है और उसे मात्र बलाघात (stress) समानार्थी मानते हैं। प्रेटर, पेइ, गेनर आदि भाषा वैज्ञानिकों ने इसी अर्थ में इसका प्रयोग किया है। 3). तीसरे अर्थ में 'ऐक्सेंट' इन दोनों अर्थों के बीच में है और उसमें बलाघात (stress) और सुर या सुराघात (pitch) केवल ये दो चीजें आती हैं। यही अर्थ अधिक प्रचलित एवं मान्य है। मुख्य रूप से आघात के दो भेद माने जाते हैं 1. बलाघात (accent) और 2. सुर (pitch accent).

5.3.2.1. बलाघात

बलाघात से तात्पर्य यह है कि बोलने में प्रायः ऐसा देखा जाता है कि वाक्य के सभी अंशों पर बराबर बल या जोर नहीं दिया जाता। कभी वाक्य के एक शब्द पर बल अधिक होता है तो कभी दूसरे पर। इसी प्रकार एक शब्द की भी सभी ध्वनियों पर बराबर बल या आघात नहीं पड़ता। 'शब्द जब एक से अधिक अक्षरों का होता है, तब इन अक्षरों पर भी बल बराबर नहीं पड़ता। एक पर अधिक होता है तो दूसरों पर कम। इसी बल, जोर या आघात को 'बलाघात' कहते हैं।' यह ध्यान देने की बात है कि भाषा की कोई ध्वनि पूर्णतः बलाघातशून्य नहीं होती। जिन ध्वनियों, अक्षरों या शब्दों को हम बलाघातशून्य समझते हैं उन पर केवल अपेक्षाकृत कम बलाघात होता है। कुछ लोग बलाघात को केवल 'अक्षर' पर मानते हैं, किन्तु ऐसी मान्यता के लिए संपुष्ट आधार का अभाव है। व्यावहारिक रूप से अक्षर बलाघात का प्रयोग अधिक दिखाई पड़ता है। इसलिए केवल मोटे रूप से तो ऐसा माना जा सकता है परंतु तत्वतः जब सभी भाषा ध्वनियाँ किसी न किसी अंश में बलाघात से युक्त होती है तो फिर 'बलाघात' को मात्र अक्षर तक कदापि सीमित नहीं माना जा सकता। मूलतः बलाघात का कुछ आधिक्य एक ध्वनि पर दिखाई पड़ता है। जब हम उसकी तुलना आसपास की कम बलाघातयुक्त ध्वनियों से करते हैं, दूसरे स्तर पर बलाघाताधिक्य अक्षर की तुलना आसपास के शब्दों से करते हैं और चौथे स्तर पर यह वाक्य पर दिखाई पड़ता है, तब हम एक वाक्य की तुलना आसपास के वाक्यों से करते हैं।

भाषा के स्तर पर बलाघात के भेद

सभी भाषा विद्वानों ने बलाघात के दो ही भेद माने हैं- शब्द बलाघात और वाक्य बलाघात।

5.3.2.1.1. शब्द बलाघात-

एक सामान्य वाक्य में सभी शब्दों पर लगभग बराबर बलाघात रहता है। 'राम ने मोहन को डंडे से मारा' एक इसी प्रकार का सामान्य वाक्य है। किन्तु आवश्यकतानुसार इसके किसी शब्द पर अपेक्षाकृत अधिक बलाघात डाला जा

सकता है और तब स वाक्य के अर्थ में थोड़ा परिवर्तन आ जायेगा। वाक्य गठन में जैसे कभी-कभी वाक्य के सबसे महत्वपूर्ण शब्द को नियमतः ठीक न होते हुए भी पहले रख देते हैं ('मोहन को तुमने मारा', या 'डंडे से तुमने मारा', इन दोनों में बल देने के लिए 'मोहन' और 'डंडे' को अनियमित होते हुए भी पहले रख दिया गया है) उसी प्रकार बल देने के लिए शब्द विशेष पर 'बलाघात' भी डाला जाता है। ऊपर के वाक्यों में प्रमुख अर्थ बोधक शब्द राम, मोहन, डंडे, मारा, ये चार हैं। इन चारों में किसी पर भी बलाघात डाल कर अर्थ की विशेषता प्रकट की जा सकती है। 'राम' पर बल देने का अर्थ होगा कि 'राम' ने मारा अन्य किसी ने नहीं, इसी प्रकार 'डंडे' पर बल देने का अर्थ होता कि 'डंडे' से मारा किसी और चीज से नहीं। इसी प्रकार औरों पर भी बल देने से अर्थ बदल जाएगा। यहाँ दो बातें ध्यान देने की है – 1. इस रूप में बलाघात निश्चित न होकर मुक्त या अनिश्चित है, और वक्ता अपनी आवश्यकतानुसार किसी भी शब्द पर उसे डाल सकता है। 2. इस बलाघात का सीधा संबंध अर्थ से है। थोड़ा भी हेर-फेर करने से अर्थ बदल जाएगा।

जिसे यहाँ 'शब्द बलाघात' कहा गया है, उसे भाषा वैज्ञानिकों ने 'वाक्य-बलाघात' (sentence stress) कहा है। यह इसलिए कि वाक्य में प्रयुक्त होने पर ही इस प्रकार के बलाघात का प्रयोग होता है, किन्तु वस्तुतः इसे शब्द-बलाघात कहना ही उचित है। वाक्य बलाघात की संकल्पना अलग है-

5.3.2.1.2. वाक्य बलाघात –

यों तो सामान्य बातचीत में प्रायः सभी बलाघात की दृष्टि से लगभग बराबर होते हैं, किन्तु कभी-कभी आश्चर्य, भावावेश, आज्ञा या प्रश्न आदि से संबंध होने पर कुछ वाक्य अपने आसपास के वाक्यों से अधिक जोर देकर बोले जाते हैं। ऐसे वाक्यों में कभी-कभी तो बल कुछ ही शब्दों पर होता है, किन्तु कभी-कभी पूरे वाक्य पर भी होता है। आसपास के अन्य वाक्यों की तुलना में अधिक बलाघातयुक्त वाक्य के प्रयोग के कारण इस स्तर के बलाघात को 'वाक्य बलाघात' कहा जा सकता है।

उदा. राम-तुम जो भी कहो, मैं नहीं जा सकता।

श्याम- वाह! यह तो अच्छी रही ! जिस पतरी में खाओ, उसी में छेद करो, और उस पर कहो कि नहीं जा सकता, जाओगे कैसे नहीं ? (हाथ उठाकर भगाने की दिशा में फेंकते हुए) भाग जाओ नालायक कहीं के।

यहाँ कहना न होगा कि श्याम द्वारा कहे गए वाक्यों में 'भाग जाओ' पर बलाघात अन्यों की तुलना में अधिक है।

5.3.2.2. सुर-

सुर का स्वरूप और उसमें उतार-चढ़ाव का कारण- बलाघात में हम देख चुके हैं कि सभी ध्वनियाँ बराबर से नहीं बोली जाती। उसी प्रकार वाक्य की सभी ध्वनियाँ सर्वदा एक सुर में नहीं बोली जाती . संगीत के सरगम की तरह उनमें सुर ऊँचा-नीचा होता रहता है। 'आप जा रहे हैं' वाक्य की सभी ध्वनियों को एक सुर में बोलने से इसका सामान्य अर्थ होगा, जिसका उद्देश्य होगा मात्र सूचना देना। किन्तु यदि 'आप' के बाद की ध्वनियों का सुर बढ़ाते जायें और अंत में 'है' को बहुत ऊँचे सुर पर बोले तो इस वाक्य में एक संगीत सा आरोह या चढ़ाव सुनाई देगा और वाक्य सामान्य से बदल कर प्रश्न सूचक हो जाएगा, जिसका अर्थ होगा, 'क्या आप जा रहे हैं ?' इस वाक्य को आश्चर्य सूचक बनाने के लिए इसी प्रकार एक विशेष प्रकार के 'सुर' की जरूरत होगी।

'बलाघात' की तरह 'सुर' भी मूलतः एक मनोवैज्ञानिक चीज है जो स्वर-तंत्रियों के कंपन द्वारा प्रकट किया जाता है। घोष ध्वनियों के उच्चारण में स्वरतंत्रियों से कंपन होता है। यही कंपन जब अधिक तेजी से होता है तो ध्वनि ऊँचे सुर में होती है। और जब धीमी गति से होता है तो नीचे सुर में होती है। 'सुर' स्वरतंत्रियों की प्रति सेकंड कंपनावृत्ति पर निर्भर करता है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि बलाघात की तरह सुर घोष-अघोष दोनों प्रकार की ध्वनियों में संभव नहीं। अघोष ध्वनि की तो यही विशेषता है कि उसके उच्चारण में स्वरतंत्रियों में कंपन होता ही नहीं, अर्थात् 'सुर' केवल घोष या सघोष ध्वनियों से संबंध रखता है अघोष से इसका कोई संबंध नहीं है।

5.3.2.2.1. सुर के भेद –

आरोहण-अवरोहण के आधार पर हर व्यक्ति वैज्ञानिक दृष्टि से ठीक एक सुर पर नहीं बोलता भाषा की स्वाभाविक गति में प्रयुक्त सुर-उच्चता या सुर-निम्नता, तथा भावात्मक स्थिति के कारण सुर का आरोह, अवरोह एक व्यक्ति की भाषा में भी अलग मिलता है। इस आरोह-अवरोह का अनुपात एक भाषा-भाषी लोगों में प्रायः समान होता है।

प्रत्येक व्यक्ति की सुर की दृष्टि से अपनी निम्नतम और उच्चतम सीमा होती है। उसके सुर का उतार-चढ़ाव उसी के बीच होता रहता है। सूक्ष्म दृष्टि से इसके अनेक भेद किए जा सकते हैं। यों इसके उच्च (high), मध्य, मिश्र या सम (mid या level) तथा निम्न (low) ये तीन भेद अधिक प्रचलित रहें हैं। वैदिक संस्कृत में लगभग ये तीन उदात्त, स्वरित एवं अनुदात्त हैं।

5.3.2.2.1.1. स्वरित-

इसका शाब्दिक अर्थ है 'उच्चरित' या 'ध्वनित'। तैतिरीय प्रतिशास्त्र तथा अष्टाध्यायी आदि में आता है – 'समाहारः स्वरितः', वाजसनेयी प्रातिशास्त्र में आता है 'उभयवान् स्वरितः', आपिशलि शिक्षा में आता है 'उदात्तानुदात्तस्वर सन्निपातान् स्वरितः', अर्थात् स्वरित्, उदात्त और अनुदात्त का मेल या समाहार है। इस मेल का अर्थ संधि है या समन्वय, यह प्रश्न महाभाष्यकार ने उठाया है। पाणिनी ने कहा है- तस्यादित उदात्तमर्धह्रस्वम् (1.2.32.) अर्थात् स्वरित के आदि ह्रस्वार्द्ध मात्रा उदात्त होती है और शेष अनुदात्त। स्वरों के भेद और उसके स्वरूप के संबंध में अनेक प्रकार के मत व्यक्त किए गए हैं। पाणिनी के अनुसार इसके स्वतंत्र दो भेद माने जाते हैं – 1. उदात्त, 2. अनुदात्त।

5.3.2.2.1.1.1. उदात्त -

उदात्त का शाब्दिक अर्थ है 'उठा हुआ' जो सुर उठा हुआ या ऊँचा हो, उसे उदात्त कहते हैं। तैत्तिरीय प्रतिशास्त्र, वाजसनेयी प्रतिशास्त्र तथा अष्टध्यायी आदि में इसे स्पष्ट किया गया है, 'उच्चैरुदात्तः' अर्थात् उदात्त उच्च होता है। इसमें 'उच्च' का अर्थ क्या है, इसे पंतजलि ने स्पष्ट किया है- 'आयोमोदारुप्यं अणुता खस्य इति उच्चैः कराणि शब्दस्य।' इस आधार पर उदात्त में आयाम या अंग-संकोच दारुण्य अर्थात् रूखापन, तथा अणुता अर्थात् कंठ या स्वरयंत्र की संवृत्तता, ये तीन बातें मानी जा सकती है।

5.3.2.2.1.1.2. अनुदात्त-

ऐसा स्वर जो 'उदात्त' न हो। अनुदात्त को तैत्तिरीय प्रातिशास्त्र, वाजसनेयी प्रातिशास्त्र तथा पाणिनि के अष्टाध्यायी आदि में 'नीचैरनुदात्तः' रूप में स्पष्ट किया गया है, अर्थात् यह 'निम्न सुर' या 'नीचा सुर' था। अनुदात्त का प्रयोग कदाचित एक से अधिक अर्थों में हुआ है। कभी तो इसका अर्थ 'उदात्त नहीं' अर्थात् 'उदात्त से थोड़ा निम्न' ज्ञात होता है। इस रूप में यह ग्रीक ग्रेब का समानार्थी है और कभी सुरविहीन का समानार्थी है। आपिशलि शिक्षा में आता है- 'सर्वांङ्गनुसारी प्रयत्नस्तीव्रो भवति, तमुदात्तमाक्षते।' अर्थात् अब शरीर के सर्वांङों का प्रयत्न तीव्र हो, अंग शिथिल न हो, कंठ संकुचित हो तथा ध्वनि उत्पादक वायु तीव्र हो जो रूक्ष ध्वनि निकलती है, उसकी रूक्षता उदात्त है। इसके विरुद्ध 'यदातु मन्दः प्रयत्नो भवति, तदा गात्रस्य स्त्र सनं कंठबिलस्य महत्वं स्वरस्य च वायोर्मन्दगतित्वात् स्निग्धता भवति, तमनुदात्तं प्रचक्षते।' अर्थात् जब प्रयत्न मंद हो तो जो स्निग्ध ध्वनि निकलती है, उसकी स्निग्धता अनुदात्त है।

5.4. ध्वनि नियम –

भाषा का मूल आधार ध्वनि के चिन्ह हैं। ध्वनि चिन्हों को समष्टि को ही भाषा कहा जाता है। भाषा के चारों अंगों ध्वनि, अर्थ, पद और वाक्य में परिवर्तन होता रहता है। भाषा परिवर्तन का प्रारंभ प्रमुख रूप से ध्वनि से ही होता है। भाषा परिवर्तन में शब्दों में वर्ण विचार संबंधी परिवर्तन या ध्वनि ही मुख्य कारण होता है, जिसके कारण एक मूल शब्द समयानुसार दूसरे शब्द को धारण कर लेता है।

भाषा का परिवर्तनशीलता के साथ-साथ भाषा की ध्वनियों में भी परिवर्तन होते रहते हैं। सभी देश कालों में समान परिस्थितियों में समान रूप से घटित क्रिया को नियम कहा जाता है। जैसे विज्ञान के नियम गति का नियम आदि। उसी प्रकार भाषा के भी कुछ नियम भाषा वैज्ञानिकों द्वारा बनाए गए हैं। यह नियम भौतिक पदार्थों से संबंधित होते है इसलिए इन्हें हम प्राकृतिक नियम कहते हैं। यद्यपि भौतिक पदार्थों में घटित प्राकृतिक नियमों जैसे नियमितता असंदिग्धता का भाषा (ध्वनि) के क्षेत्र में मिलना असंभव है क्योंकि भाषा का संबंध चेतन मानव से है और उसकी परिस्थितियों में निरंतर परिवर्तन होता रहता है। अनेक विद्वानों ने भाषा ध्वनियों में होने वाले परिवर्तनों का अध्ययन करके कुछ ऐसे ध्वनि नियम बनाए हैं।

ध्वनि नियमों को भाषा वैज्ञानिकों ने इस प्रकार परिभाषित किया है।

पी. जी. टकर के अनुसार ध्वनि नियम की परिभाषा - "किसी भाषा का ध्वनि नियम वह कथन है जिसका संबंध भाषा विशेष की किसी एक ध्वनि या ध्वनि समूह में विशेष काल और विशेष परिस्थिति में होने वाले नियमित विकार होते हैं।"

डॉ. भोलानाथ तिवारी ने अपने भाषा विज्ञान से संबंधित ग्रंथ 'भाषाविज्ञान' में ध्वनि नियम के विषय में लिखा है-

"किसी विशिष्ट भाषा की कुछ विशिष्ट ध्वनियों में किसी विशिष्ट काल और विशिष्ट दशाओं में हुए नियमित परिवर्तन अथवा विकार को उस भाषा का ध्वनि नियम कहते हैं।"

ध्वनि नियम की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं-

1. ध्वनि परिवर्तन किसी अमुक भाषा के लिए ही निर्धारित किए जाते हैं, दूसरी भाषा पर वह नियम लागू नहीं होते हैं।
2. प्रत्येक ध्वनि नियम देश विशेष से संबंध रखता है वह अन्य भाषाओं पर लागू नहीं होता है और इसका संबंध काल विशेष से भी होता है। काल के अनुसार परिवर्तन होने पर वह नियम उसी भाषा पर लागू हो यह भी संभव नहीं है।
3. ध्वनि नियम भौतिक विज्ञान आदि के नियमों की ही भाँति सुनिश्चित और व्यापक नहीं होते हैं परंतु फिर भी ध्वनियों में होने वाले यह परिवर्तन बहुत सीमा तक नियमित ही होते हैं। इसीलिए इन्हें ध्वनि विज्ञान अथवा विज्ञान की संज्ञा दी जाती है।
4. ध्वनि नियम किसी अमुक काल में ही प्रवृत्त होते हैं यह भविष्य में उस भाषा पर लागू होंगे अथवा नहीं यह स्पष्ट तौर पर नहीं कह सकते जबकि विज्ञान के नियम सार्वकालिक व सार्वभौतिक होते हैं। जबकि भाषा के नियम सार्वकालिक व सार्वभौतिक नहीं होते हैं।

उपर्युक्त वर्णन के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि प्रत्येक ध्वनि नियम किसी भाषा को ध्यान में रखकर ही बनाए जाते हैं और वह उसी भाषा पर ही लागू होते हैं। उस विशेष काल और परिस्थिति में, यदि वह नियम धीरे-धीरे उस भाषा विशेष में स्थाई बन जाते हैं तो यह नियम का रूप ले लेते हैं। किसी भाषा के ध्वनि नियम उस भाषा और समय के अनुसार विशिष्ट ध्वनियों से संबंधित होते हैं जिनका प्रयोग सीमित परिस्थितियों में ही उपयोगी होता है।

महाभाष्यकार पतंजलि ने भाषा की लघुतम इकाई ध्वनि इकाइयों को स्वीकार किया है। यह ध्वनि इकाइयाँ ही वर्ण है। यह वर्ण अपने आप में सार्थक नहीं होते अपितु मिलकर सार्थक शब्दों का निर्माण करते हैं जैसे 'क', 'औ', 'आ' यह तीन ध्वनियाँ अपना अलग-अलग अर्थ प्रस्तुत नहीं करती परंतु एक साथ होने पर संगठित होकर 'कौआ' सार्थक अर्थ की उत्पत्ति करती हैं। यह ध्वनियाँ ही मनुष्य के चिंतन की अभिव्यक्ति का उपाय हैं, जिनके माध्यम से मनुष्य अपने भावों की अभिव्यक्ति करता है। भाषा विज्ञान में भाषा से संबंधित मानवीय वाणी ही ध्वनि कहलाती है। ध्वनि इकाइयों से शब्दों का निर्माण होता है। शब्दों में ध्वनि इकाइयों की व्यवस्था रहती है और शब्दों की अभिव्यक्ति के लिए स्वर यंत्र (में व्यवस्थित) ध्वनि इकाइयों का क्रमशः उच्चारण करता है।

भाषा विज्ञान में ध्वनि नियम से तात्पर्य हैं "मानव भाषा में प्रयुक्त ध्वनियों के परिवर्तन से संबंध रखने वाले नियमों से हैं।" जो इस प्रकार हैं –

1. ग्रिम नियम

2. ग्रासमैन नियम
3. बर्नर नियम
4. तालव्य नियम
5. मूर्धन्य नियम

5.4.1. ग्रिम नियम –

ध्वनि नियमों में सबसे प्रसिद्ध ग्रिम नियम है। जर्मन के प्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक प्रो. याकूब ग्रिम के नाम से यह नियम प्रसिद्ध है। सन् 1882 ई. वीं. में याकूब ग्रिम द्वारा जर्मन भाषा में लिखे अपने व्याकरण ग्रंथ में इसका वर्णन किया गया है। इनकी पुस्तक का नाम 'जर्मन भाषा का व्याकरण' है। मैक्स मूलर ने इनके ध्वनि नियम को ग्रिम नाम दिया। इस जर्मन विद्वान का समय 1785-1863 ई. है। ग्रीम बॉप के समकालीन थे। अतः अब तक ग्रीक, लैटिन और संस्कृत आदि भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन के निष्कर्ष रूप में कुछ नियमों की रचना ग्रिम महोदय द्वारा की गयी थी। जिसके कारण यह नियम आज भी ग्रिम नाम से जाना जाता है। परंतु इस नियम को रैज्मस रैस्क (Rasmus Rask) और इहरे (Ihre) ने पहले ही खोज लिया था परंतु विस्तृत व्याख्या ग्रिम महोदय द्वारा की गयी है इसलिए यह नियम उनके नाम से जाना जाता है।

ग्रिम नियम दो भागों में विभक्त है जिसे हम प्रथम वर्ण परिवर्तन और द्वितीय वर्ण परिवर्तन के नाम से जानते हैं।

अ. प्रथम वर्ण परिवर्तन –

यह वर्ण परिवर्तन ईसा के जन्म से पूर्व हो गया था। इसका प्रभाव गॉथिक, निम्न जर्मन, अंग्रेजी और डच आदि भाषाओं पर पड़ा। इस वर्ण परिवर्तन में संस्कृत, लैटिन, ग्रीक, स्लावोनिक आदि भाषाओं में मूल ध्वनियाँ सुरक्षित हैं। दूसरी और गॉथिक, निम्न जर्मन, अंग्रेजी और डच आदि भाषाएँ जिनमें परिवर्तन हुआ। प्रथम वर्ण में परिवर्तन में मूल भाषा से जर्मनिक भाषा अलग हुई थी। ग्रिम नियम के अनुसार मूल भारोपीय भाषा की घ्, ध्, भ्, ग्, द्, ब्, का, त्, प् आदि नौ स्पर्श ध्वनियाँ अंग्रेजी और जर्मन भाषा में निम्न रूप से परिवर्तित हो जाती हैं- क्, त्, प् के स्थान पर ख्, थ्, फ्। घ्, ध्, भ्, के स्थान पर ग्, द्, ब् और ग्, द्, ब्, के स्थान पर क्, त्, प्।
प्रथम वर्ण परिवर्तन का क्रम –

अघोष अल्पप्राण -	क्, त्, प्	
घोष अल्पप्राण -	ग्, द्, ब्	
महाप्राण –		ख्, थ्, फ्
		घ्, ध्, भ्

आ. द्वितीय वर्ण परिवर्तन –

ग्रिम नियम के प्रथम वर्ण परिवर्तन में मूल भाषा से जर्मनिक भाषा अलग हुई थी। लेकिन दूसरे वर्ण परिवर्तन में यह परिवर्तन जर्मन भाषा के ही दो रूपों में हुआ – उच्च जर्मन और निम्न जर्मन। निम्न जर्मन की कुछ ध्वनियाँ उच्च जर्मन से अलग हो गई। जर्मन के उत्तरी भाग समतल और नीचा है इसीलिए वहाँ बोली जाने वाली भाषा निम्न जर्मन कहलाती है। निम्न जर्मन की विविध शाखाएँ हैं – अंग्रेजी, डच, डैनिश, नावेंइ, स्वीडिश आदि। जर्मनी में दक्षिणी पहाड़ी भाग में प्रयोग की जाने वाली भाषा उच्च जर्मन के नाम से जानी जाती है। क्योंकि यह भाषा उच्च पर्वतीय भाग में प्रयुक्त होती है। द्वितीय वर्ण परिवर्तन का उद्देश्य केवल यह प्रदर्शित करना है कि उच्च जर्मन भाषा निम्न जर्मन भाषा से कैसे अलग हुई है। निम्न जर्मन की प्रतिनिधि भाषा अंग्रेजी है परिणाम स्वरूप निम्न जर्मन अर्थात् अंग्रेजी वाले आदि वहाँ उपस्थित रहे जिसके कारण परिवर्तन का प्रभाव उच्च जर्मन पर पड़ा क्योंकि निम्न जर्मन वाले वहाँ पर अनुपस्थित रहें। द्वितीय वर्ण

परिवर्तन का संबंध केवल जर्मनिक भाषाओं से है। इस वर्ण परिवर्तन में निम्न जर्मन भाषा के घोष अल्पप्राण ग्, द्, ब्, उच्च जर्मन में अघोष अल्पप्राण क्, त्, प् में परिवर्तित हो जाते हैं। इसी प्रकार अघोष अल्पप्राण क्, त्, प्, अघोष महाप्राण ख्, थ्, फ, में तथा अघोष महाप्राण घ्, ध्, भ् ध्वनियाँ उच्च जर्मन भाषा में घोष महाप्राण ग्, द्, ब् ध्वनियों में परिवर्तित हो जाती है। जैसे-

द्वितीय वर्ण परिवर्तन का क्रम-

ख्	थ्	फ	ग्,	द्	-	ब्,	क्	त्	प्
ग्	द्	ब्	क्	त्	-	प्	ख्	थ्	फ्

5.4.2. ग्रासमैन नियम –

ग्रासमैन का पूरा नाम हरमन ग्रासमैन था। इनका समय 1809-1877 ई. माना जाता है। ग्रासमैन ने ग्रिम नियम का संशोधन प्रस्तुत किया है। ग्रासमैन ने इसका कारण यह बताया है कि भारोपीय भाषा में दो सन्निकट महाप्राण ध्वनियाँ साथ नहीं रह सकती उनमें प्रथम ध्वनि अल्पप्राण हो जाती है। जैसे ध् धातु से धधाति होना चाहिए लेकिन रूप बनता है दधाति। इसी प्रकार भृ, धातु से भभार के स्थान पर बभार बना। ग्रासमैन महोदय ने ग्रिम नियम के अनुसार ब् को प् और द् को त् होना चाहिए था परंतु गॉथिक में भी ब् और द् ही मिलते हैं। प्रो. ग्रासमैन ने संस्कृत और ग्रीक भाषाओं का परीक्षण करने पर यह निष्कर्ष निकाला है कि संस्कृत ग्रीक भाषाओं में दो अव्यवहित सोष्म ध्वनियों में से सामान्यता प्रथम उष्म ध्वनि (ह् ध्वनि) निकल जाती है। जहाँ पर द्वितीय वर्ण से उष्म ध्वनि निकलती है वहाँ पर प्रथम वर्ण में उष्म ध्वनि समाहित हो जाती है। ग्रासमैन नियम जो कि ग्रिम नियमों के संशोधन हेतु प्रस्तुत किए गए थे जिससे ग्रिम नियमों के अपवादों का निराकरण हो जाता है।

उदा.	संस्कृत	गॉथिक
	बोधित	Biudan, बिउदन
	दभ	Daubs, दउस्स
	धधामि	दधामि.

5.4.3. बर्नर नियम –

कॉल बर्नर एक जर्मन भाषाशास्त्री थे। जिनका ध्वनि नियम बर्नर नियम के नाम से प्रचलित है। महोदय बर्नर का समय 1846-1896 का रहा है। इस नियम के अनुसार मूल भारोपीय भाषा शब्दों के क्, त्, प् (k t p) को जर्मनिक भाषाओं में ह्, थ्, फ्, (h th f) है, जब मूल भाषा में अ-व्यवहित पूर्व में कोई उदात्त (accent) स्वर होता है 'उदात्त' का चिन्ह (') होता है।

संस्कृत	लैटिन	गॉथिक	ध्वनि परिवर्तन
युवक 'स्	Juvencus	Juggs	क् > ग्
शत'म्	Centum	Hund	त् > द्

5.4.4. तालव्य नियम

तालव्य नियम का आविष्कार 1875 ई. वीं. में थॉमसन तथा कालिट्स भाषा वैज्ञानिकों द्वारा किया गया है। सामान्यतः यह माना जाता है कि मूल भारोपीय भाषा की स्वर और व्यंजन ध्वनियाँ संस्कृत भाषा में सबसे अधिक सुंदर रूप में सुरक्षित हैं, परंतु जब भाषा वैज्ञानिकों द्वारा संस्कृत, लैटिन और ग्रीक भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन किया गया तब वह इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि मूल भारोपीय भाषा की व्यंजन ध्वनियाँ संस्कृत में अधिक प्रामाणिक तौर पर सुरक्षित हैं। केवल व्यंजन ध्वनियाँ जब कि मूल स्वर ध्वनियाँ ग्रीक और लैटिन में ज्यादा प्रामाणिक और सुरक्षित है। इसका कारण उन्होंने यह माना कि ग्रीक और लैटिन जिन स्थानों पर ह्रस्व a, c, o, पृथक ध्वनियाँ मिलती हैं वहाँ पर संस्कृत में केवल

'अ' ध्वनि मिलती है। तुलना करने से ज्ञात होता है कि जहाँ पर ग्रीक और लैटिन में ह्रस्व a और o ध्वनि है वहाँ संस्कृत में 'अ' ध्वनि हुई है। तो वहाँ पर क् ग् के तालव्य च् ज् हो जाता है। इसे तालव्य नियम कहा जाता है। अर्थात् इस नियम के अनुसार मूल भारोपीय भाषा की कण्ठ्य (क्, ख्, ग्, घ्) तथा कण्ठ्योष्ठ (क्व्, ख्व्, ग्व, ध्व्) ध्वनियाँ भारत ईरानी शाखा में 'च' वर्ग एवं 'क' वर्ग में परिवर्तित हो जाती है।

उदा.	मूल भारोपीय भाषा	भारतीय ईरानी भाषा
	किंवक्वे	पच्चः
	अउगेस	ओजः

5.4.5. मूर्धन्य नियम-

मूर्धन्य नियम का संकेत संस्कृत भाषा में पाणिनी की अष्टाध्यायी में हम देख सकते हैं। इस नियम से 'र्' और 'ष्' के बाद 'न्' का 'ण्' होता है। उसके बाद 'इ', 'ए', 'ओ' आदि स्वर तथा 'क्' आदि व्यंजनों के बाद 'स' का 'ष्' होता है। मूर्धन्य नियम की खोज प्रो. पॉट तथा रूसी भाषा वैज्ञानिक प्रो. फोर्तनातोव ने की थी . फोर्तनातोव के नियमानुसार 'र्' और 'ल्' के बाद 'त' वर्ग आने पर उसका 'ट' वर्ग हो जाता है। जैसे-

उदा. 1. कृत से कट
2. विकृत से विकट
3. संस्कृत से संकट आदि।

उपर्युक्त ध्वनि नियम मुख्य ध्वनि नियम हैं। इसके अतिरिक्त अन्य नियम लैटिन नियम, ग्रीक, नियम, फारसी-नियम, प्राकृत नियम आदि भी है। परंतु उपरोक्त ध्वनि नियम ही प्रमुख है।

5.5. निष्कर्ष –

भाषा विज्ञान में मनुष्यों द्वारा अपने भावों की अभिव्यक्ति के लिए जिस वाणी का प्रयोग किया जाता है उसे ही हम ध्वनियों के रूप में जानते हैं प्रत्येक भाषा के ध्वनि समूह अथवा अपनी वर्णमाला होती है। इस पाठ के में जिन विषयों पर प्रकाश डाला गया है उन विषयों से आप अवगत हो ही गए होंगे। इस पाठ में ध्वनि विज्ञान के सामान्य परिचय से लेकर ध्वनि गुणों की विशेषताएँ दिखाने का प्रयास किया गया है। इसमें ध्वनि गुण के अंतर्गत मात्रा और आघात पर विस्तार से समझाने की कोशिश की गयी है। उसके साथ-साथ ध्वनि नियम का संबंध किसी विशेष भाषा से होता है, वह नियम किसी दूसरी भाषा पर लागू नहीं होते हैं। ये ध्वनि नियम किसी काल विशेष से संबंधित नहीं होते हैं, वह सर्व कालिक भी नहीं होते हैं क्योंकि समय के अनुसार इनमें परिवर्तन होता रहता है। ये नियम किन्हीं विशेष परिस्थितियों में ही प्रयुक्त किए जाते हैं, इन्हें हर परिस्थिति में प्रयोग कर पाना सरल नहीं होता है। ध्वनि नियम विशेष ध्वनियों को ही प्रभावित करते हैं। इस प्रकार इस पाठ में ध्वनि विज्ञान के सामान्य परिचय से लेकर ध्वनि नियमों को लेकर अध्ययन किया गया है जिससे आप सहज रूप में समझ पाएंगे।

5.6. स्वयं बोध प्रश्न

1. ध्वनि गुण को सुविस्तार रूप से लिखिए।
2. ध्वनि नियमों को सोदाहरण रूप से लिखिए।

सहायक ग्रंथ

1. भाषा-विज्ञान -डॉ. भोलानाथ तिवारी, किताब महल, नई दिल्ली।
2. भाषा-विज्ञान के सिद्धांत और हिन्दी भाषा- डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना, मीनाक्षी प्रकाशन, मीरठ।
3. भाषा-विज्ञान और हिन्दी – डॉ. सरयूप्रसाद अग्रवाल, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।
4. भाषा-विज्ञान की भूमिका- देवेन्द्रनाथ शर्मा, राधा कृष्ण प्रकाशन, दिल्ली।

5. सामान्य भाषा विज्ञान-सबाबूराम सक्सेना, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।
6. भाष-विज्ञान एवं भाषा-शास्त्र- डॉ. कपिलदेव द्विवेदी, विशविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।
7. हिन्दी भाषा की संरचना- डॉ. भोलानाथ तिवारी, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली।

डॉ. सोनकांबळे पिराजी मनोहर

6. रूप विज्ञान

उद्देश्य

भाषा की संरचना को हम मुख्य रूप से दो भागों में बाँटते हैं।रूप विज्ञान में विभिन्न रूपों से शब्दों की रचना की जाती है। वाक्य विज्ञान इन शब्दों से पद बंध की रचना करते हैं जिससे वाक्य का एक समन्वित अर्थ प्रकट होता है। पद, रूप विज्ञान और वाक्य विज्ञान का सेतु है जो वाक्यों में शब्दों के प्रयोग की स्थिति स्पष्ट करता है। इस इकाई में हम रूप, शब्द आदि की संकल्पनाओं पर चर्चा करेंगे साथ ही रूप और शब्द में क्या अंतर होते हैं उसे जानेंगे और रूप परिवर्तन के कारण और दिशाओं पर विस्तार से विचार करना ही इस पाठ का मुख्य उद्देश्य है। यह विषय अपने आप में बहुत विशाल है जिससे इस पाठ के माध्यम से महत्वपूर्ण बातें संक्षेप में बताई जाएंगी। इस पाठ के माध्यम से आप हिन्दी व्याकरण का सामान्य परिचय प्राप्त करेंगे।

1. रूप की संकल्पना को विस्तार से समझ सकेंगे।
2. शब्द और रूप के संबंध की व्याख्या कर सकेंगे।
3. रूप परिवर्तन को समझ सकेंगे।
4. रूप परिवर्तन के क्या-क्या कारण हो सकते हैं उसे जान सकेंगे।

6.0. उद्देश्य

6.1. प्रस्तावना

6.2. रूप विज्ञान की संकल्पना

6.3. रूप की परिभाषा

6.4. रूप के प्रकार

6.5. शब्द और रूप

6.6. शब्द और रूप में अंतर

6.7. रूप परिवर्तन

6.8. रूप परिवर्तन के कारण

6.8.1. सरलता

6.8.2. एक रूप की प्रधानता

6.8.3. अज्ञान

6.8.4. नवीनता

6.9. रूप परिवर्तन की दिशाएँ

6.10. निष्कर्ष

6.11. स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न

6.1. प्रस्तावना

भाषा की संरचना के संदर्भ में यह कहा जाता है कि अर्थहीन ध्वनियों से रूप नामक सार्थक ध्वनियों से खण्डों की रचना होती है। इन रूपों से शब्दों का निर्माण किया जाता है जो वाक्य में पद के रूप में अर्थ प्रदान करते हैं। इस तरह ध्वनि विज्ञान भाषा का प्रारंभिक स्तर है जिसमें अर्थ का द्योतन नहीं होता। अर्थ युक्त भाषा की शुरुआत रूपों से ही होती है। इस तरह रूप विज्ञान भाषा में शब्द रचना का परिचय देने वाला प्रारंभिक स्तर है। इस इकाई में आप रूप और शब्द के संबंध को समझेंगे साथ ही रूप परिवर्तन के कारण और दिशाएँ कौन-कौन सी है उसे जान पाएंगे।

वाक्य भाषा में उक्ति या अभिव्यक्ति का तत्व होता है जो शब्दों को व्याकरणिक नियमों के अनुसार प्रस्तुत करता है। जिससे इन शब्दों के परस्पर संबंध से वाक्य का एक समन्वित अर्थ निकल सके। यदि कोई व्यक्ति भाषा के व्याकरण से परिचित न हो और 8-10 शब्दों का उच्चारण कर देगा तब वह वाक्य नहीं बनेगा। लेकिन कहीं न कहीं इससे अर्थ का थोड़ा आभास हो जाता है जैसे लड़का, डंडा, कुत्ता और मार्ग आदि शब्दों का एक संदर्भ संबंध है लेकिन अक्सर ऐसे शब्दों को साथ रखने पर कोई अर्थ नहीं निकलता है। उदा. मैं किताब लिखी, आप हो आते। इस तरह के गूढ़ विचारों को प्रकट करने के लिए हमें वाक्यगत संबंधों को स्पष्ट करना होगा। जैसे मैंने वह किताब पढ़ी जो आपने मुझे दी थी आदि। इस संदर्भ में पद शब्द का महत्व है। शब्द वाक्य में जिस रूप में प्रयुक्त होते हैं उन्हें हम रूप या पद कहते हैं।

6.2. रूप विज्ञान की संकल्पना

जिस प्रकार वाक्य विज्ञान में वाक्य का विभिन्न दृष्टियों से अध्ययन किया जाता है। उसी प्रकार 'रूप विज्ञान' या 'पद विज्ञान' में 'रूप' या 'पद' का विभिन्न दृष्टियों से अध्ययन किया जाता है। वर्णनात्मक रूप विज्ञान में किसी भाषा या बोली के किसी एक समय के रूप या पद का अध्ययन होता है इसकी ऐतिहासिकता में उसके रूप-रचना का इतिहास या विकास प्रस्तुत किया जाता है।

अब यहाँ 'पद' या 'रूप' क्या है ? इसे समझना बहुत जरूरी है। भाषा की इकाई वाक्य है। अर्थात् भाषा को वाक्य में तोड़ा जा सकता है। उसी प्रकार वाक्य के खंड शब्द होते हैं और शब्द की ध्वनियाँ। एक ध्वनि या एक से अधिक ध्वनियों से शब्द बनता है और एक शब्द या एक से अधिक शब्दों से वाक्य बनता है। यहाँ 'शब्द' शब्द का सामान्य शिथिल प्रयोग है। थोड़ी गहराई में उतरकर देखा जाए तो कोश में दिए गए सामान्य 'शब्द' और वाक्य में प्रयुक्त 'शब्द' एक नहीं है। वाक्य में प्रयुक्त शब्द में कुछ ऐसा भी होता है, जिसके आधार पर वह अन्य शब्दों से अपना संबंध दिखला सके या अपने को बाँध सके। लेकिन 'कोश' में दिए गए 'शब्द' में ऐसा कुछ नहीं होता। यदि वाक्य के शब्द एक दूसरे से अपना सम्बन्ध न दिखला सके तो वाक्य बन ही नहीं सकता। इसका आशय यह है कि शब्दों के दो रूप हैं। एक शुद्ध रूप या मूल रूप है जो कोश में मिलता है। दूसरा वह रूप है जो किसी प्रकार के सम्बन्ध तत्व से युक्त होता है। यह दूसरा वाक्य में प्रयोग के योग्य रूप ही 'पद' या 'रूप' कहलाता है। संस्कृत में शब्द या मूल रूप को 'प्रकृति' या 'प्रतिपादक' कहा गया है और समन्वय स्थापन के लिए जोड़े जाने वाले तत्व को 'प्रत्यय'। महाभाष्यकार पतंजलि कहते हैं कि 'नापि केवला प्रकृतिः प्रयोक्तव्या नापि केवला प्रत्ययः'। अर्थात् वाक्य में न तो केवल 'प्रकृति' का प्रयोग हो सकता है न केवल 'प्रत्यय' का। दोनों मिलकर प्रयुक्त होते हैं। दोनों के मिलने से जो बनता है वही 'पद' या 'रूप' है। पाणिनी के 'सुप्तिडन्तपदं' (सुप और तिडः जिनके अंत में हो वे पद है) में भी पद की परिभाषा यही है। यहाँ प्रत्यय या विभक्ति को सुप और तिडः कहा गया है। उसी तरह शब्द को भी परिभाषित किया जाता है। एक या अधिक अक्षरों से बनीं हुई स्वतंत्र, सार्थक ध्वनि को शब्द कहते हैं, जैसे- राम, स्कूल, आत्मा आदि।

'ध्वनि' भाषा की लघुतम इकाई है। ध्वनियों के समूह से 'शब्द' का निर्माण होता है तथा शब्दों के समूह से वाक्य का और सार्थक वाक्यों के समुच्चय का नाम भाषा है। परंतु शब्द तथा वाक्य के मध्य रचना प्रक्रिया की दृष्टि से

एक और सीढ़ी है जिसका नाम है 'रूप'। 'रूप' शब्द का सीधा अर्थ है पैर। पैर का काम है चलना। एक प्रकार से हम कह सकते हैं कि जब मूल शब्द वाक्य में चलने लगता है। अर्थात् एक निश्चित अर्थ देने लगता है तब 'पद' बन जाता है। इस प्रकार वाक्य केवल शब्दों का समूह मात्र ही नहीं होता अपितु उन शब्दों में एक निश्चित अर्थ के बोध के लिए परस्पर संबंध भी स्थापित होना चाहिए। इसके लिए शब्दों में प्रत्यय, विभक्ति आदि के योग विकार उत्पन्न हो जाता है। तब वे 'रूप' या 'पद' कहलाते हैं। उदाहरण के लिए 'विनोद', 'रोहन', 'आम', 'देना' इन चार शब्दों को ले सकते हैं इन शब्दों का अपना-अपना एक निश्चित अर्थ है जो मूलार्थ है। बिना कोई परिवर्तन लाये ही, इन शब्दों से हम वाक्य बनाना चाहें तो असफल रहेंगे और यह स्पष्ट करने में भी कुछ परिवर्तन करेंगे और इसे इस तरह लिखेंगे 'विनोद ने रोहन को आम दिया' तब यह एक पूर्ण वाक्य हो सकता है। जिसके अंदर प्रयुक्त शब्दों का अर्थ के साथ पारस्परिक संबंध भी स्पष्ट होगा। उपर्युक्त वाक्य में 'को' विभक्ति-चिन्ह (परसर्ग) है तथा 'अ' भूत कालिक प्रत्यय है जिसने 'देना' क्रिया में जुड़कर उसका रूप 'दिया' बना दिया है। विनोद, रोहन, आम, देना, जैसे मूल शब्द अर्थ तत्व कहलाते हैं। तथा ने, को, जैसे विभक्त चिन्ह तथा 'आ' जैसे प्रत्यय 'संबंध' तत्व कहलाते हैं। इस प्रकार अर्थ तत्व का संबंध तत्व के योग से बने शब्द 'रूप' कहलाते हैं। रूप विज्ञान के अंतर्गत उन विविध सम्बन्ध तत्वों का अध्ययन होता है जो पद निर्माण में सहायक होते हैं। विविध संबंध तत्व, उनके विभिन्न कार्य, उनका परस्पर संबंध आदि का विशद तथा वैज्ञानिक अध्ययन रूप विज्ञान के अंतर्गत होता है।

जैसे- 'शब्द'- शब्द एक या अधिक अक्षरों या वर्गों से बनी स्वतंत्र, सार्थक ध्वनि है-

उदा. 1. राम, 2. स्कूल, 3. बुद्धिमान आदि।

शब्दों के भेद – अविकारी शब्द

1. क्रिया विशेषण
2. समुच्चय बोधक
3. संबंध बोधक
4. विस्मयादिबोधक

विकारी शब्द –

1. संज्ञा
2. सर्वनाम
3. क्रिया
4. विशेषण

6.3. रूप की परिभाषा

'रूप' से हमारा तात्पर्य शब्द के ध्वन्यात्मक रूप से नहीं है। इस अर्थ में हम भाषा में स्वरांत शब्द व्यंजनांत शब्द आदि की चर्चा कर सकते हैं।

रूप विज्ञान के संदर्भ में 'रूप से हमारा तात्पर्य सार्थक शब्द खंडों से है। शब्द एक या अधिक रूपों से निर्मित होता है।' उदा. घोड़ा, सड़क, आम आदि शब्दों में केवल एक ही रूप है, क्योंकि इन शब्दों को हम सार्थक खंडों में विभाजित नहीं कर सकते। अन्य शब्दों में एक से अधिक खंड होते हैं। जैसे :

दो रूप : लघुता, बचपन

यहाँ 'ता', 'पन' आदि रूप क्रमशः लघु होने या बच्चा होने का भाव सूचित करते हैं।

तीसरा रूप : भावुकता, क्रमिकता, अनेकता, अशक्तता

यहाँ /उक/`~/इक/ प्रत्यय संज्ञा को विशेषण बनाते हैं और ता/ भाववाचक संज्ञा का निर्माण करता है। अंतिम दो शब्दों में /अन् और अ/क्रमशः 'एकता' और 'शक्तता' का विलोम बनाते हैं।

चौथा रूप : अन्यायपूर्वक (अ+न्याय+पूर्व+क)
गैर-जिम्मेदारी (गैर+जिम्मा+दार+ई)

ऊपर के उदाहरणों में हमने जितने रूप पहचाने हैं, वे सभी सार्थक है और लघुतम हैं, क्योंकि इनका फिर सार्थक खंडों में विभाजन नहीं हो सकता इस तरह रूप की परिभाषा यों है : 'भाषा के लघुतम सार्थक खंडों को हम रूप कहते हैं।'

इस अर्थ में / बच्चा / और / पन / दोनों ही रूप हैं, भले हम 'बच्चा' को शब्द भी कहें। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि सारे स्वतंत्र या मुक्त रूप शब्द भी हैं। जो रूप स्वतंत्र या मुक्त नहीं हैं, वे अन्य रूपों के साथ आकर बड़े शब्दों की रचना करते हैं।

यदि वाक्य के शब्द एक दूसरे से अपना सम्बन्ध न दिखला सके तो वाक्य बन ही नहीं सकता। इसका आशय यह है कि शब्दों के दो रूप हैं। एक शुद्ध रूप या मूल रूप है जो कोश में मिलता है। दूसरा वह रूप है जो किसी प्रकार के सम्बन्ध तत्व से युक्त होता है। यह दूसरा वाक्य में प्रयोग के योग्य रूप ही 'पद' या 'रूप' कहलाता है।

जब शब्द वाक्य में प्रयुक्त होता है तब ये स्वतंत्र शब्द न रहकर लिंग, वचन, क्रिया, विशेषण, कारक आदि के नियमों से अनुशासित हो जाते हैं अर्थात् व्याकरणिक नियमों से बंध जाते हैं।

उदा. 1. राम वनवास को गए।
2. आज स्कूल को छुट्टी है।
3. बुद्धिमान होने के साथ-साथ विवेक भी होना चाहिए।

6.4. रूप के प्रकार

भाषाविज्ञान की दृष्टिकोण से रूप के दो ही प्रकार बताए गए हैं। पहला है रचना के आधार पर और दूसरा है प्रकार्य के आधार पर इन दो रूपों की चर्चा की जाती है।

6.4.1. रचना के आधार पर

हमने ऊपर देखा था कि एक या अधिक रूपों से शब्दों की रचना होती है। जैसे 'घोड़ा', 'सड़क', 'पेड़' आदि शब्द एक ही रूप से निर्मित हैं। इस कारण ये रूप शब्द के तौर पर स्वतंत्र रूप से व्यवहृत होते हैं। इसकी तुलना में 'ता', 'पन' आदि रूप स्वतंत्र रूप से व्यवहृत नहीं हो सकते। इन्हें शब्द निर्माण के लिए अन्य किसी रूप का सहारा चाहिए होता है। इन्हें हम बद्ध (अस्वतंत्र) रूप कहते हैं। प्रायः सभी प्रत्यय बद्ध रूप होते हैं। शब्द रचना में यह भी देखा गया है कि किन्हीं शब्दों की रचना में स्वतंत्र, मूल रूप भी बद्ध रूप की तरह व्यवहृत होता है। जैसे-

मूल रूप	बद्ध रूप	व्युत्पन्न शब्द
घोड़ा	घुड़	घुड़सवार, घुड़साल
बच्चा	बच	बचपन, बचकाना

इस तरह मुक्त और बद्ध रूपों से शब्द निर्माण की प्रक्रिया में कई प्रकार के संयोजन संभव हैं। जैसे-

मुक्त	+	मुक्त	देशप्रेम	(तत्पुरुष समास)
बद्ध	+	मुक्त	निर्बल	(उपसर्ग से विलोम की रचना)
मुक्त	+	बद्ध	लघुता	(प्रत्यय से भाववाचक संज्ञा की रचना)

बद्ध + बद्ध अनुज, विवाह

6.4.2. प्रकार्य के आधार पर

दो मुक्त रूपों से बनने वाले शब्दों में हम समस्त शब्द या संयुक्त शब्द कह सकते हैं। इनकी रचना और प्रयोग की विशेषताओं के बारे में चर्चा करेंगे।

बद्ध रूपों से निर्मित शब्दों में हम प्रायः एक मूल शब्द के साथ प्रत्ययों का उपयोग करते हैं। प्रत्यय वास्तव में बद्ध रूपों का पर्याय है। भाषाविज्ञान ऐसे प्रत्ययों को स्थान की दृष्टि से तीन वर्गों में बाँटता है :

प्रत्ययः तीन प्रकार हैं

पूर्व प्रत्यय	मध्य प्रत्यय	अंत प्रत्यय
(prefix)	(infix)	(suffix)
अ धर्म	....	लघुता

हिन्दी में मध्य प्रत्यय नहीं है और परंपरा से पूर्व प्रत्यय को उपसर्ग कहा जाता है। हम परंपरा का निर्वाह करते हुए आगे की चर्चा करेंगे। जिसमें उपसर्ग और प्रत्यय शब्द का ही प्रयोग करेंगे और दोनों के लिए 'रूप' शब्द का प्रयोग करेंगे।

हिन्दी के रूप दो प्रकार के हैं। 'कर' धातु से 'करें', 'किया', 'करता' आदि क्रिया रूपों का निर्माण होता है। 'लड़की' शब्द से बहुवचन 'लड़कियाँ', कारक युक्त शब्द 'लड़कियों' आदि का निर्माण होता है। इस तरह संज्ञा, क्रिया आदि शब्दों से वचन, कारक आदि व्याकरणिक सूचनाएँ प्रकट करने के लिए निम्नलिखित रूप के भेद का प्रयोग करते हैं – जैसे

रूप के भेद

संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया, विशेषण, अव्यय।

1. **संज्ञा** – 'संज्ञा' (सम+ज्ञा) शब्द का अर्थ है सही ज्ञान कराने वाला। अतः वह शब्द जो किसी स्थान, वस्तु, प्राणी, व्यक्ति, गुण, भाव आदि के नाम का ज्ञान कराता है। उसे संज्ञा कहा जाता है। उदा. दिल्ली, नगर, पुस्तक, मेज, तितली, कृष्ण, सर्दी और सौंदर्य आदि।

संज्ञा के भेद-

हिन्दी में संज्ञा के मुख्य रूप से तीन ही भेद माने गये हैं- व्यक्तिवाचक संज्ञा, जातिवाचक संज्ञा, भाववाचक संज्ञा।

1. **व्यक्तिवाचक संज्ञा**- जिन संज्ञा शब्दों से किसी एक ही व्यक्ति, वस्तु या स्थान विशेष का पता चलता है उन शब्दों को 'व्यक्तिवाचक संज्ञा' कहते हैं। उदा. राम, दक्षिण, यमुना, दिल्ली।
2. **जातिवाचक संज्ञा**- जिन संज्ञा शब्दों से एक जाति के सभी प्राणियों, पदार्थों या संपूर्ण जाति, वर्ग या समुदाय का बोध होता है, उन्हें 'जातिवाचक संज्ञा' कहते है। उदा. मनुष्य, घोड़ा, स्कूल, फूल, पुस्तक, पशु, छात्र आदि।
3. **भाववाचक संज्ञा** – जिन संज्ञा शब्दों से किसी व्यक्ति वस्तु और स्थान के गुण, दोष, भाव, दशा आदि का बोध होता है, उन्हें भाववाचक संज्ञा कहते हैं। उदा. मीठा, सुंदर, बचपन, सफलता, बुरा आदि।

2. **सर्वनाम-** संज्ञा के नाम पर प्रयोग किए जाने वाले शब्दों को 'सर्वनाम' कहते है। सर्वनाम का अर्थ है सब का नाम। जो सब के नाम के स्थान पर आए, वे सर्वनाम कहलाते हैं। उदा. मैं, तुम, आप, यह, वह, हम, उसका, उसकी, वे, क्या, कुछ, कौन आदि।

सर्वनाम भाषा को सहज, सरल, सुंदर एवं संक्षिप्त बनाते हैं। उदा. राम विद्यालय गया, राम विद्यालय से आते ही मित्र का काम करेगा फिर राम और मित्र आराम करेंगे। यह वाक्य अटपटा और अनगढ़ है। अब यदि इस वाक्य में संज्ञा के स्थान पर सर्वनाम का प्रयोग करते हैं तब यह वाक्य सुंदर हो जाता है।

उदा. राम स्कूल गया है। वहाँ से आते ही वह अपने मित्र के घर जाएगा। फिर दोनों अपना-अपना काम करेंगे।

3. **विशेषण** – संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता गुण, दोष, संख्या, रंग आकार-प्रकार आदि बताने वाले शब्दों को विशेषण कहते हैं। उदा. मोटा, पतला, कौन आदि।
4. **क्रिया**- जिन शब्दों से किसी काम के होने या करने का बोध होता हो, उन्हें क्रिया कहते हैं। उदा. राम खाना खाता है। क्रिया वाक्य का अनिवार्य अंग है। बिना क्रिया के वाक्य की रचना संभव नहीं है। क्रिया के बिना वाक्यांश हो सकता है परंतु वाक्य नहीं।
5. **अव्यय**- जिन शब्दों के रूप में लिंग, वचन, क्रिया, कारक आदि के कारण कोई विकार उत्पन्न नहीं होता उन्हें अव्यय शब्द कहते हैं। 'अव्यय' का शाब्दिक अर्थ होता है जो व्यय नहीं होता है अर्थात् वे अविकारी होते हैं। ये शब्द जहाँ भी प्रयुक्त होते हैं वहाँ एक ही रूप में रहते हैं। उदा. अन्दर, बाहर, अनुसार, अधीन, इसलिए, यद्यपि, तथापि, परंतु आदि।

6.5. शब्द और रूप –

साधारण बोलचाल की भाषा में 'शब्द' और 'पद' में अंतर नहीं माना जाता परंतु 'व्याकरण' तथा 'भाषा विज्ञान' की दृष्टि से दोनों में अंतर माना जाता है। 'सार्थक ध्वनि समूह को 'शब्द' कहा जाता है।' उसी प्रकार जब 'शब्द को वाक्य में प्रयोग करते हैं तब उसे 'पद' कहा जाता है।' जब वाक्य की आवश्यकता अनुसार अपने रूप में वाक्य प्रयुक्त होता है उसे 'पद' या 'रूप' कहते हैं।

शब्द भाषा की अपने आप में स्वतंत्र, सार्थक इकाई होते हैं। वाक्य में प्रयुक्त शब्द स्वतंत्र नहीं होते हैं। बल्कि परस्पर संबंध होकर अर्थ की रचना करते हैं। ऐसे शब्द पद कहलाते हैं। उदाहरण के लिए 'कमरा' अपने आप में एक स्वतंत्र शब्द है और घर के एक कक्ष का अर्थ देता है, किन्तु 'राम कमरे में है।' जैसे वाक्य में प्रयुक्त कमरा पद है क्योंकि वह अपना निजी अर्थ देने के साथ ही अन्य पदों के साथ अपने संबंध का द्योतन भी करता है। उसका कर्ता 'राम' और क्रिया 'होना' के साथ अधिकरण के रूप में संबंध होता है। संबंध के द्योतन के लिए शब्द किसी प्रत्यय के योग से एक रूप धारण करता है। वह प्रत्यय कहीं अलक्षित रहता है। जैसे- उपर्युक्त वाक्य में 'राम' में और कहीं प्रत्यक्ष होता है जैसे 'कमरा' के साथ अधिकरण सूचक में है।

6.6. शब्द और रूप में अंतर

शब्द	रूप
1. शब्द वर्गों की स्वतंत्र एवं सार्थक इकाई है।	वाक्य में प्रयुक्त शब्द रूप या पद कहलाते हैं।
2. शब्द का मात्र अर्थ परिचय होता है।	रूप का व्याकरणिक परिचय होता है।

3. शब्द स्वतंत्र होते हैं।	रूप या पद वाक्य में विभिन्न व्याकरणिक कोटियों में बँध जाते हैं।
4. जैसे लड़का एक शब्द है।	'लड़का' खेल रहा है यहाँ वाक्य में प्रयुक्त होने के कारण 'लड़का' शब्द न रहकर 'पद' बन गया है।
5. लिंग, वचन, क्रिया और कारक से शब्द का किसी भी प्रकार का संबंध नहीं होता।	लिंग, वचन, कारक और क्रिया से रूप का संबंध होता है।
6. सार्थक और निरर्थक दोनों में शब्द होता है।	वाक्य के अर्थ को संकेत देने के लिए रूप का उपयोग होता है।
7. वर्णों की स्वतंत्रता और सार्थकता को शब्द कहते हैं।	वाक्य में प्रयुक्त शब्द को रूप कहते हैं।
8. शब्द कोई भी शाब्दिक इकाई हो सकते हैं जेसे-संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, अव्यय आदि।	रूप या पद वाक्य में रहने के कारण किसी एक शाब्दिक इकाई का काम करता है। उदा. फल पक्का है, इसमें फल एक पद है।
9. वर्णों से शब्द बनते हैं	शब्दों के रूप बनते हैं।
10. शब्द का मूल स्वरूप कायम रहता है।	एक शब्द में प्रत्यय जोड़कर अनेक शब्द बनाए जा सकते हैं। जैसे- खा, खाना, खाया, खाकर, खाए आदि।
11. शब्द के साथ व्याकरण के नियम नहीं जुड़ते।	रूप के साथ व्याकरण के अनेक नियम जुड़ जाते हैं। जैसे वाक्य में बच्चे संज्ञा जातिवाचक बहुवचन आदि।
12. शब्द का मूल अर्थ एक होता है।	वाक्य में प्रसंगानुसार एक ही शब्द के अनेक अर्थ हो सकते हैं जैसे- कर, मत, जल, आदि।
13. शब्द का व्याकरण लिंग, वचन, क्रिया, विशेषण से कोई संबंध नहीं होता है।	पद या रूप व्याकरण का परिचय देते हैं।

6.7. रूप परिवर्तन

शब्दों का पदों के रूप हमेशा एक से नहीं रहते। उनमें परिवर्तन होता रहता है। सामान्य दृष्टि से देखने पर रूप परिवर्तन और ध्वनि परिवर्तन में अंतर नहीं दिखाई देता पर यथार्थतः दोनों में अंतर रहता है। कभी-कभी ये दोनों इतने समान हो जाते हैं कि इनको अलग करना कठिन होता जाता है। अतः हम यहाँ ध्वनि परिवर्तन नहीं बल्कि रूप परिवर्तन पर विचार करेंगे। रूप परिवर्तन का क्षेत्र अपेक्षाकृत सीमित होता है। वह किसी एक शब्द या पद के रूप को प्रभावित करता है। उससे भाषा के पूरे संस्थान से कोई संबंध नहीं होता। इस दृष्टि से ध्वनि-परिवर्तन अपेक्षाकृत बहुत व्यापक है

और रूप-परिवर्तन सीमित तथा संकुचित है।

6.8. रूप परिवर्तन के कारण

रूप परिवर्तन के कौन-कौन से कारण होते हैं उन्हें निम्नलिखित बिंदुओं के आधार पर देखा जा सकता है।

6.8.1. सरलता- एक नियम के आधार पर चलने वाले रूपों के साथ यदि उसके अपवादों को भी याद रखना पड़े तो मस्तिष्क पर एक व्यर्थ का भार पड़ता है। और इसमें स्वभावतः कुछ कठिनाई भी होती है, अतएव सरलता के लिए जन-मस्तिष्क अपवादों को निकालकर उनके स्थान पर नियम के अनुसार चलने वाले रूपों को रखना चाहता है। उदा. पुरानी अंग्रेजी की तुलना में आधुनिक अंग्रेजी तथा संस्कृत की तुलना में क्रिया और कारक के रूपों की एकरूपता आदि। जिस प्रकार ध्वनि परिवर्तन में प्रयत्न लाघव का जो स्थान है, रूप परिवर्तन में सरलता का वही स्थान है। इस सरलता के लिए प्रायः किसी अन्य प्रचलित रूप के सादृश्य पर नया रूप बना लेते हैं। इसके फुटकर उदाहरण भी मिलते हैं। जैसे पूर्वीय के लिए अपने यहां 'पौरस्त' शब्द था, परंतु लोगों ने उसके स्थान पर 'पौर्वात्य' बना लिया।

6.8.2. एक रूप की प्रधानता- एक रूप की प्रधानता के कारण भी कभी-कभी रूप परिवर्तन हो जाता है। उदा. सम्बन्ध कारक के रूपों की प्रधानता का परिणाम यह हुआ है कि बोलचाल में मेरे को, मेरे से, मेरे में, मेरे पर, तेरे को, तेरे से, तेरे पर जैसे रूप मुझे मुझको, मुझसे मुझ पर, आदि के स्थान पर चल पड़े है।

6.8.3. अज्ञान- अज्ञान के कारण भी कभी-कभी नये रूप बन जाते हैं और इनमें से कुछ प्रचलित भी हो जाते हैं- मरना से मरा, धरना से धरा और सड़ना से सड़ा की भाँति करना से 'करा' रूप ठीक है, पर किसी ने देना से दिया या लेना से लिया के जगह पर करना से 'किया' रूप चल दिया जो अशुद्ध होने पर भी चल पड़ा है और आज भी वही परिनिष्ठित रूप है। मैंने करा शुद्ध होते हुए भी अशुद्ध माना जाता है। अज्ञानतावश बने रूपों में आवश्यक नहीं है कि सभी चल ही जाए।

6.8.4. नवीनता, स्पष्टता या बल- नवीनता, स्पष्टता या बल के लिए भी नये रूपों का प्रयोग चल पड़ता है। बोलचाल की हिन्दी में मैं के स्थान पर 'हम' का प्रयोग बढ़ रहा है और अस्पष्टता मिटाने के लिए लोग बहुवचन में 'हम' के स्थान पर 'हम लोग' का प्रयोग कर रहे हैं।

बल के लिए भी नये रूप बना लिए जाते हैं इनमें बहुत से अशुद्ध भी होते हैं 'अनेक' का अर्थ ही है 'एक नहीं' अर्थात् एक से अधिक जो बहुवचन हैं, पर इधर अनेक के स्थान पर 'अनको' का प्रयोग चल पड़ा है। उदा. बे फजूल- यहाँ 'ओ' पर बल देने के लिए – बे फजूल बात (अर्थात् ऐसी बात जो बहुत ही फजूल हो) का प्रयोग करते हैं, यद्यपि यह पूर्णतया अशुद्ध है और वे लगा देने से इसका अर्थ उलटा हो जाना चाहिए।

इस प्रकार रूप के क्षेत्र में एकरूपता और अनेकरूपता की दौड़ साथ-साथ चलती है और उनके बीच में रूप परिवर्तन चलता रहता है।

6.9. रूप परिवर्तन की दिशाएँ

पदों या शब्दों के रूपों का परिवर्तन प्रमुखता दो दिशाओं में होता है – 1. अपवाद और 2. अभिव्यंजना

6.9.1. अपवाद-

स्वरूप प्राप्त रूप मस्तिष्क के लिए बोझ होते हैं, अतएव उनके स्थान पर अनेकरूपता हटाकर एकरूपता लाकर नियमानुसार या एक प्रकार से बनें रूपों का प्रयोग हम करने लगते हैं। अंग्रेजी में बली और निर्बल दो प्रकार की क्रियाएँ हैं। बली क्रियाओं का रूप किसी नियमित रूप से नहीं चलता, जैसे- गो, वेंट, गान, या पुट, पुट, पुट, या वीट, वेट, वीटेन,

या राइट, रोट, रिटेन आदि। इसके विरुद्ध निर्बल क्रियाओं में इड (ed) लगाकर रूप बना लिए जाते हैं। अंग्रेजी भाषा के इतिहास के आरंभ में बली क्रियाएँ बहुत अधिक था, पर इनको याद रखना एक बोझ था इसीलिए जन-मस्तिष्क ने धीरे-धीरे बहुत सी बली क्रियाएँ निर्बल हो गयी और उनके पुराने अनियमित रूप आ गए और उनके पुराने अनियमित रूप समाप्त हो गये और उनके स्थान पर नियमित रूप आ गए। इस प्रकार उनके रूप परिवर्तन हो गए। वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत के व्याकरण की तुलना की जाए तो यह स्पष्ट दिखाई पड़ता है कि वैदिक संस्कृत में संज्ञा तथा क्रिया के रूपों में अपवाद बहुत अधिक थे पर लौकिक संस्कृत तक आते-आते अपवाद रूप में प्राप्त रूपों का स्थान नियमित रूपों ने ले लिया। संस्कृत से प्राकृत की तुलना करने पर यह एकरूपता य नियमितता लाने का प्रयास स्पष्ट दिखाई पड़ता है। संस्कृत में अकारान्त संज्ञाओं की संख्या बहुत बड़ी है अतएव उनके रूपों के नियम अपेक्षाकृत अधिक प्रचलित हैं। प्राकृत काल में आते-आते हम देखते हैं कि कुछ अकारान्त से इतर संज्ञा शब्दों के रूप भी अकारान्त की भाँति चलते-मिलते हैं।

उदा. प्राकृत. पुतस्य (संस्कृत. पुत्र से पुत्रस्य) और सब्बस्य (सं. सर्व से सर्वस्य) आग्गिस्य (सं. अग्नि, जिसका संस्कृत रूप अग्नेः था तथा वाउस्य (सं. वायु. जिनका संस्कृत रूप वायोः था) यद्यपि ये इकारान्त तथा उकारान्त है। इस प्रक्रिया में सादृश्य काम करता है और इसकी शुरुआत लड़कों या अनपढ़ों से होती है। इसके पीछे मानसिक प्रयत्न-लाघव की भावना रहती है। हिन्दी में चला, लिखा, पढ़ा के सादृश्य पर 'करा' का प्रयोग कुछ क्षेत्रों में होता है। छठा के स्थान पर 'अव' छठवां का प्रयोग भी यही है।

6.9.2. अभिव्यंजना-

अभिव्यंजना की सुविधा या भ्रम दूर करने के लिए या नवीनता लाने के लिए भी लोग बिल्कुल नये रूपों का प्रयोग करना पसंद करते हैं। इसे एक रूपता के स्थान पर अनेक रूपता का प्रयास कह सकते हैं। हिन्दी के परसर्ग इसी कारण प्रयोग में आए। विभक्तियों के घिसने से जब विभक्त कारकों के रूप एक हो गए तो अर्थ की स्पष्टता के लिए उन्हें अनेक करना आवश्यक प्रतीत हुआ और इसके लिए प्राकृत-अपभ्रंश काल में अलग से शब्द जोड़े गये। अवधी बोली में कर्ता कारक के एक वचन और बहुवचन के रूप एक हो गए थे।

उदा. वरधा खात अहै (एक वचन)
वरधा खात अहैं (बहुवचन)

इसे सुधारने के लिए बाद में बहुवचन में 'न' जोड़ा जाने लगा और अब कहते हैं-

उदा. वरधवन या वरधन खात अहैं।
घोड़वन दौड़त अहैं।

परंतु यह नियम पूर्णतः लागू नहीं होता और 'घोड़ा दउड़त अहै', 'घर गिर हैं' या 'लरिका जात हैं' जैसे भी प्रयोग मिलते हैं।

ध्वनि परिवर्तन से भी शब्द या पद के रूप में धीरे-धीरे परिवर्तन आ जाता है, जैसे- संस्कृत 'वर्तते' से हिन्दी का 'वर्तन' इसे रूप परिवर्तन न कहकर ध्वनि परिवर्तन कहना ही अधिक उचित है। यों ध्वनियों के परिवर्तन के कारण इस रूप में पर्याप्त परिवर्तन हो गया है।

6.10. निष्कर्ष -

इस इकाई में हमने रूप विज्ञान की महत्वपूर्ण संकल्पना पर चर्चा की है। रूप भाषा का सबसे छोटा खंड है। अगर रूप स्वतंत्र है तो वे मूल शब्द कहलाएंगे जैसे पेड़, बच्चा, घोड़ा आदि। अगर रूप बद्ध हो तो वह उपसर्ग या प्रत्यय

कहलाएगा और मूल शब्द के साथ मिलकर विस्तृत शब्दों का निर्माण करेगा। जैसे उपसर्ग से 'सामान्य' शब्द बनता है और प्रत्यय से 'एकता' शब्द बनता है। हमने रूप के सभी अंगों को दिखाने का प्रयास किया है जिसमें रूप और शब्द में किस प्रकार के अंतर देखने को मिलते हैं तथा इसके कारण क्या है। उसी प्रकार रूप के परिवर्तन पर भी विचार किया गया है और अंत में रूप परिवर्तन की दिशाएँ कौन सी है यह भी दिखाया गया है।

6.11. स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न

1. रूप विज्ञान की संकल्पना-रूप की परिभाषा को समझाते हुए रूप के कारण को सोदाहरण रूप से लिखिए।
2. रूप परिवर्तन के कारण को बताइए।
3. रूप परिवर्तन की दिशाओं के बारे में सुविस्तार रूप से लिखिए।

सहायक ग्रंथ

1. भाषा-विज्ञान के सिद्धांत और हिन्दी भाषा- डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना, मीनाक्षी प्रकाशन, मीरठ।
2. भाषा-विज्ञान और हिन्दी – डॉ. सरयूप्रसाद अग्रवाल, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।
3. भाषा-विज्ञान की भूमिका- देवेन्द्रनाथ शर्मा, राधा कृष्ण प्रकाशन, दिल्ली।
4. सामान्य भाषा विज्ञान-सबाबूराम सक्सेना, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।
5. भाष-विज्ञान एवं भाषा-शास्त्र- डॉ. कपिलदेव द्विवेदी, विशविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।
6. हिन्दी भाषा की संरचना- डॉ. भोलानाथ तिवारी, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली।

डॉ. सोनकांबळे पिराजी मनोहर

7. अर्थविज्ञान

उद्देश्य

जिस प्रकार वाक्य विज्ञान में पद बंध उप वाक्य, वाक्य आदि घटकों के निमित वाक्यों के प्रकारों की चर्चा करते हैं उसी प्रकार भाषा की अर्थ संरचना भी होती है जिसमें हम शब्द और अर्थ के विभिन्न संदर्भों की चर्चा करते हैं।

1. अर्थ की परिभाषाओं को समझ सकेंगे।
2. अर्थ विज्ञान क्या है ? इसे विस्तार से समझा पाएंगे।
3. अर्थ विज्ञान की संकल्पनाओं से परिचित होंगे।
4. शब्द और अर्थ के संबंध को समझ सकेंगे।
5. अर्थ परिवर्तन के कारण बता सकेंगे।
6. अर्थ परिवर्तन की दिशाओं पर चर्चा करेंगे।

इकाई-VII

7.0. उद्देश्य

7.1. प्रस्तावना

7.2. अर्थ की परिभाषाएँ

7.3. अर्थविज्ञान की संकल्पना

7.4. अर्थ के प्रकार

7.5. अर्थ परिवर्तन के कारण

7.5.1. बल का अपसरण

7.5.2. पीढ़ी-परिवर्तन

7.5.3. अन्य भाषा से शब्दों का उधार लेना

7.5.4. एक भाषा-भाषी लोगों का तितर-बितर होकर विकसित होना।

7.6. अर्थ परिवर्तन की दिशाएँ

7.6.1. अर्थ-विस्तार

7.6.2. अर्थ संकोच

7.6.3. अर्थादेश

7.7. निष्कर्ष

7.8. स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न

7.1. प्रस्तावना

संस्कृति तथा सभ्यता के जिस उच्च सोपान पर आज हम स्थित हैं उसके लिए मानव प्रमुखता भाषा प्रतीकों का ऋणी हैं जो उसे मनन-चिंतन निदिध्यासन का सामर्थ्य प्रदान करते हैं। सिंह यदि कभी मृग के बारे में सोचता होगा ? तो उसके मनोपटल पर 'मृग' सजीव स्वरूप उभर आता होगा परंतु आपको कोई सिंह, मृग की कहानी सुनानी हो तो धारा प्रवाह में चित्र के स्थान पर भाषा प्रतीक उभर आएंगे। भाषा प्रतीक ही हमारे स्मृति भंडार में मरे रहते हैं। अर्थ विज्ञान में शब्दार्थ के अतिरिक्त पक्ष का विवेचन, विश्लेषण किया जाता है। अर्थ क्या है ? अर्थ का ज्ञान कैसे होता है ? शब्द और अर्थ का क्या संबंध है ? संकेत गृह कैसे होता है ? मन में बिंब निर्माण कैसे होता है ? बिंब से अर्थ बोध की प्रक्रिया आदि भाषा के अंतरिक पक्ष है। अर्थ विज्ञान में शब्दों के अर्थ में विकास, अर्थ के विकास की दिशाएँ अर्थ परिवर्तन के कारण। अर्थ और उसे संप्रेषित करने वाला शब्द दोनों ही भाषा के अविछिन्न अंग है। 'अर्थ' शब्द से अभिन्न है। किसी भी अर्थ की अभिव्यक्ति और अर्थ का बोध किसी शब्द विशेष से ही संभव है। अर्थ का लक्षण बताते हुए भतृहरि ने अपने ग्रंथ 'वाक्यपदीय' में कहा है कि 'जिस शब्द के उच्चारण से जिस अर्थ की प्रतीति होती है, वही उसका अर्थ है।' शब्द और उससे निर्मित विभिन्न भाषिक इकाइयों के माध्यम से ही हम सोच पाते हैं और अपने भावों-विचारों को व्यक्त कर पाते हैं। किसी भी शब्द का यह संप्रेषित अर्थ प्रयोक्ता और श्रोता दोनों पर निर्भर रहता है। अतः शब्द विशेष से उनके मस्तिष्क में उभरने वाले अर्थबिंब या अर्थ-छवि में पर्याप्त अंतर या भेद हो सकता है। इससे स्पष्ट है कि किसी शब्द का उसके अर्थ से स्थिर या नित्य संबंध नहीं होता। साथ ही, यह भी आवश्यक नहीं कि किसी शब्द विशेष का एक ही अर्थ हो। एक शब्द के एक से अधिक अर्थ भी हो सकते हैं जो कि संदर्भ विशेष में प्रयोग किए जाने पर ही पूर्ण रूप से समझे जा सकते हैं। इस पाठ में भाषा प्रतीक और वास्तविक जगत की सत्ता के अंत-संबंध 'अर्थ' को स्पष्ट किया जा रहा है। साथ ही उसमें आने वाले परिवर्तन और कारण आदि पर भी विस्तार से जानकारी प्राप्त होगी।

7.2. अर्थ की परिभाषाएँ

भाषाविज्ञान की वह शाखा जिसमें शब्दों के अर्थ का अध्ययन किया जाता है उसे अर्थविज्ञान कहा जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य यह होता है कि भाषा के अंतर्गत अर्थ की संरचना, संप्रेषण एवं ग्रहण की प्रक्रिया का विश्लेषण करना होता है। अर्थात् अर्थविज्ञान के अंतर्गत अर्थ के स्वरूप, शब्दार्थ संबंध, अर्थ के प्रकार, अनेकार्यवाची शब्द के अर्थनिर्णय का आधार आदि विषयों का अध्ययन किया जाता है।

1. "यत्र योऽन्वेते ये शब्दमर्थस्तस्य भवेद सौ।" अर्थात् – जो अर्थ जिस शब्द के साथ संबंध रखता है वही उसका अर्थ होता है। – **कुमारिल भट्ट**

2. "शब्दश्च शब्दद् बहिर्भूतः अर्योऽबहिर्भूतः।" अर्थात् – "अर्थ शब्द की अंतरंग शक्ति का नाम है, क्योंकि शब्द बहिर्भूत होता है, जब कि अर्थ अबहिर्भूत या अपृथक होता है।" – **महर्षि पतंजलि**

3. "सभी शब्द अपने-अपने अर्थ का बोध कराने के लिए होते हैं, परंतु जिस-जिस अर्थ का बोध कराने के लिए जो-जो शब्द प्रयुक्त होता है उस शब्द का वही अर्थ होता है।" – महर्षि पतंजलि

4. "शब्द के द्वारा जो प्रतीति होती है, उसे अर्थ कहते हैं।" – **डॉ. देवेन्द्र नाथ शर्मा**

5. "प्रत्येक सार्थक शब्द अपने साथ अपना एक अर्थ, भाव या विचार रखता है। वही अर्थ उसका प्राण या सार है और उस शब्द का सारा महत्व उस अर्थ पर ही निर्भर रहता है।" – **डॉ. भोलानाथ तिवारी.**

6. "किसी शब्द के द्वारा जो प्रतीति होती है, उसे उस शब्द का अर्थ कहा जाता है।" – **डॉ. देवीदत्त शर्मा**

7. "What anything means depends on who means it" (अर्थात् – किसी वस्तु का अर्थ उस व्यक्ति पर निर्भर करता है, जिसे वह वस्तु अभिप्रेत होती है।) – **डॉ. शिलर**

8. "संबंध विशेष को अर्थ कहते हैं, क्योंकि किसी शब्द में केवल अर्थ ही नहीं होता, अपितु उसे अपने अर्थ से संबंध रहता है।" (A relation constitutes meaning….. a word not out has meaning but is related to its meaning.) – **डॉ. रसल**

23

9. "Meaning depends on consequences and truth depends on meaning." (अर्थात्– परिणाम अर्थ का आधार होता है और अर्थ सत्य का इसलिए परिणाम ही अर्थ माना जाता है।) – **ऐलफ्रेड सिजविक**

10. "मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अर्थ वास्तव में संदर्भ का प्रकरण होता है, परंतु तात्विक या तार्किक रूप में अर्थ को संदर्भ या प्रकरण की अपेक्षा कुछ और भी माना जा सकता है।" – **डॉ. जे. एस. मूर**

7.3. अर्थविज्ञान की संकल्पना –

अर्थ – किसी भाषिक इकाई वाक्य, वाक्यांश, रूप, शब्द, ध्वनि, लोकोक्ति आदि को किसी भी इंद्रिय जैसे- कान, आँख, नाक, जीभ त्वचा भी आदि से ग्रहण करने पर जो मानसिक प्रतीति होती है, वही अर्थ है। कुछ अपवादों को छोड़कर किसी भी भाषिक इकाई का अर्थ सबके लिए, सभी परिस्थितियों में एवं सर्वदा एक नहीं होता। इस प्रकार अर्थ का वास्तविक रूप व्यक्ति, स्थान काल एवं परिस्थिति आदि कई बातों पर निर्भर करता है।

अर्थ की प्रतीति – यह दो आधारों पर होती है – 1. आत्म अनुभव अर्थात् स्वयं किसी चीज का प्रत्यक्ष संपर्क द्वारा अनुभव करना। 2. पर-अनुभव- अर्थात् दूसरे के अनुभवों को सुन या पढ़ कर किसी वस्तु या विषय को जानना। जो चीजें या विषय हमारी अपनी पहुँच के बाहर होते हैं, उनके लिए हम दूसरों के ज्ञान पर निर्भर रहते हैं। उदा. चीनी मिट्टी होती है, आत्म अनुभव पर आधारित हो सकता है, किन्तु सूरज, ईश्वर, आत्मा, विज्ञान आदि अनेक वस्तुओं एवं विषयों के बारे में हम प्रायः दूसरों के अनुभवों या ज्ञान का सहारा लेते हैं। जब भी हम किसी भाषिक इकाई के अर्थ की प्रतीति करते हैं तो उस प्रतीति के पीछे मूलतः ये ही दो आधार होते हैं। अर्थविज्ञान में अर्थ का अध्ययन होता है यह अध्ययन मुख्यतः ऐतिहासिक एवं तुलनात्मक होता है। किन्तु संरचना या वर्णनात्मक स्तर पर भी अब अर्थ के अध्ययन की बात की जाने लगी है। आज अर्थ विज्ञान को लेकर विद्वानों में मतभेद है। पुराने तथा कुछ नये विद्वान इसे भाषाविज्ञान की एक शाखा मानते हैं। बहुत से आधुनिक विद्वान विशेषतः अमरीकी तथा उन्हीं की विचारधारा से प्रभावित अन्य इसे भाषा विज्ञान से अलग मानते हैं। कुछ लोगों के अनुसार यह दर्शनशास्त्र की एक शाखा है, कुछ अन्य लोगों के अनुसार यह एक स्वतंत्र विज्ञान है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि अर्थविज्ञान का दर्शन से बहुत अंशों में संबंध है और उसका काफी अंश ऐसा है जो मनोविज्ञान और तर्कशास्त्र की अपेक्षा रखता है, किन्तु इसमें भी सन्देह नहीं है कि अर्थ भाषा की आत्मा है और भाषाविज्ञान जब 'भाषा' का 'विज्ञान' है तो बिना उसके अध्ययन के उसे पूर्ण नहीं कहा जा सकता।

सच कहा जाए तो भाषा के अध्ययन के आरंभ काल में ही अर्थ के अध्ययन की ओर लोगों का ध्यान गया था। प्राचीन भारत में इस विषय का प्राचीनतम ग्रंथ यास्क का 'निरुक्त' है। यास्क के अतिरिक्त, व्याकरण न्याय, मीमांसा, वेदान्त, तथा काव्यशास्त्र के अनेक ग्रंथों में भी आचार्यों ने अर्थ का अनेक दृष्टियों से विवेचन किया है। आधुनिक काल में 'कोशविज्ञान' के प्रसंग में सर्वप्रथम लोगों का ध्यान इस ओर गया था। इसमें प्रथम नाम के. रिजिंग का लिया जाता है। 1826-27 में लैटिन भाषा पर दिए गए अपने व्याख्यानों में उन्होंने अर्थ विज्ञान के वैज्ञानिक अध्ययन की ओर संकेत किया था। बाद में उनके शिष्य ए. बेनरी तथा जर्मन विद्वान पॉल पोस्टगेट, व्रू. ग्रभान, वेचटल, स्वीट आदि ने इसे आगे बढ़ाया। इसका व्यवस्थित स्वरूप सामने लाने का श्रेय फ्रांसीसी विद्वान ब्रील को जाता है . यूरोप में भी प्लेटों के समय तक शब्द और उसके निहित अर्थ के स्वाभाविक संबंध पर विचार होने लगा था। ध्वनिविज्ञान आदि की भाँति इसका संबंध भाषा के शरीर या बाह्य से नहीं है। यह अध्ययन अपना संबंध सीधा मनोविज्ञान से रखता है, अतः बहुत ही सूक्ष्म, गंभीर और अनिश्चित सा है। कहने की आवश्यकता नहीं है कि अपनी इसी अस्पष्ट प्रकृति के कारण मनोरंजक और आकर्षक होने पर भी अर्थ- विचार अपने अध्येताओं को तीव्र गति से बढ़ने नहीं देता।

अर्थ के संदर्भ में परिभाषा में भी यह दिखाया है कि 'अर्थ भाषाविज्ञान की वह शाखा है जिसमें शब्दों के अर्थ का अध्ययन किया जाता है, उसे अर्थविज्ञान कहते है।' इसका मुख्य उद्देश्य यह होता है कि भाषा के अंतर्गत अर्थ की संरचना, संप्रेषण एवं ग्रहण की प्रक्रिया का विश्लेषण करना होता है। अर्थात् अर्थविज्ञान के अंतर्गत अर्थ के स्वरूप, शब्दार्थ, संबंध शब्दार्थ बोध के साधन अनेकार्यवाची शब्द के अर्थ निर्णय का आधार आदि विषयों का अध्ययन किया जाता है।

सामान्य अवधारणा यह है कि शब्द से अर्थ का बोध होता है किन्तु सभी शब्दों से सभी अर्थों का बोध नहीं होता है अपितु किसी निश्चित शब्द से किसी निश्चित अर्थ का ही बोध होता है। अन्य असंबंध अर्थ का नहीं। अतः शब्द

और अर्थ के मध्य एक ऐसे संबंध को स्वीकार करना होगा जो निश्चित शब्द से निश्चित अर्थ के बोध का नियामक हो, अन्यथा किसी भी शब्द से किसी अर्थ का बोध स्वीकारना होगा। शब्द और अर्थ का यह संबंध प्रत्येक व्यक्ति अपनी भाषा-व्यवहार की परंपरा से सीखता है। क्योंकि मनुष्यों को जगत में विद्यमान असंख्य वस्तुओं का अनुभव होता है और ये वस्तु परस्पर भिन्न होती है अतः अपनी विशिष्ट पहचान रखती है।

आचार्य 'पाणिनी' ने भाषा का सार 'अर्थ' माना है। एतदर्थ शब्दों को ही 'प्रतिपादित' (मूल संज्ञा शब्द या प्रकृति) माना है। अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रतिपादकम् (अष्टा 1-2-45) यास्क ने अपने ग्रंथ 'निरुक्त' अर्थात् निर्वचन, निरुक्ति (Etymology) का आधार ही अर्थ को माना है। अर्थज्ञान के बिना निर्वचन असंभव है। -(अर्थ नित्यः परीक्षेत। निरुक्त 2-1)

वस्तुतः शब्द केवल अर्थ का संग्रह या सम्मुचय मात्र नहीं होता अपितु शब्द एवं अर्थ परस्पर संबंधित भी होते हैं तथा शब्द एवं अर्थ का यह संबंध भाव व्यवहार की परंपरा द्वारा निश्चित एवं स्थिर होता है। दैनिक बात-चीत में किसी शब्द के अर्थ का प्रयोग इसी संबंध में किया जाता है। उदा. यदि कोई पूछे कि 'दर्शाना' शब्द का अर्थ क्या है ? तो सहजता से कहा जा सकता है कि इसका अर्थ दिखाना है। दूसरा यदि कोई दृढ़ शब्द का अर्थ पूछे तो कहा जा सकता है कि ये 'ढीला' क विलोम शब्द है, उसी प्रकार 'गुलाब' शब्द का अर्थ जानना चाहता है तो उसे समझाया जा सकता है कि यह एक प्रकार का पुष्प होता है। अतः स्पष्ट है कि शब्द के अर्थ को व्यक्त करने की प्रक्रिया में शब्द के लक्षण द्वारा अर्थ का निर्धारण नहीं किया जाता बल्कि शब्द एवं उसके द्वारा संकेतित मूर्त सत्ता के परस्पर संबंध द्वारा अर्थ का निर्धारण होता है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है क प्रत्येक शब्द का अपना एक अर्थ, भाव या विचार होता है, जो उसे सार्थक बनाता है। इसे ही पारिभाषिक शब्दावली में अर्थग्राम कहा जाता है। प्रत्येक कालखंड में किसी शब्द का अर्थ सदैव एक-सा नहीं रहता अपितु उसमें समय के साथ-साथ विकार, परिवर्तन या विकास होता रहता है और यह परिवर्तन संबंधित भाषा समुदाय के व्यक्तियों की मानसिकता से जुड़ा होता है। शब्दों के अर्थ में आने वाले इस विकार का अध्ययन अर्थविज्ञान का महत्वपूर्ण क्षेत्र है। अर्थविज्ञान के अंतर्गत शब्द के अर्थ का अध्ययन करते समय सर्वप्रथम शब्द के अर्थ को रीति के अनुसार देखा जाता है, न कि शब्द के प्रयोगकर्ता द्वारा प्रस्तुत तात्पर्य से।

अर्थविज्ञान में इसी अर्थ-परिवर्तन या अर्थ-विकास का अध्ययन होता है और हम विकास या परिवर्तन की दिशा तथा उसके मूल में छिपे कारण को स्पष्ट करने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार अर्थ विज्ञान के अंतर्गत हम किसी शब्द के अर्थ-तत्व में होने वाले परिवर्तन या विकास के कारण तथा उसकी दिशा पर विचार करते हैं। उदाहरण के लिए हम 'गँवार' शब्द ले सकेत हैं। 'गँवार' का शाब्दिक अर्थ है 'गाँव का रहने वाला', पर आजकल उसका प्रचलित अर्थ 'असभ्य' या 'असंस्कृत' है।

7.4. अर्थ के प्रकार

किसी भाषा समुदाय द्वारा व्यवहृत शब्दों के माध्यम से जो भी अभिव्यक्त होता है, उसे उस भाषा समुदाय के संदर्भ में अर्थ के अंतर्गत रखा जा सकता है। इस आधार पर अर्थ के निम्नलिखित दो भेद संभव है-

7.4.1. अवधारणात्मक अर्थ – (Conceptual meaning)

अवधारणात्मक अर्थ को तार्किक और संज्ञात्मक अर्थ (logical and cognitive meaning) कहते हैं। इससे अर्थ निर्देशात्मक (Denotative) होता है, जिसका संबंध मूलतः बाह्य जगत में विद्यमान वस्तुओं, उनसे प्राप्त अनुभवों तथा मन में उत्पन्न भावों आदि के नामकरण से होता है। जब किसी व्यक्ति के मस्तिष्क में बाह्य जगत की किसी वस्तु की संकल्पना उभरती है तो उसे अभिव्यक्त करने के लिए किसी शब्द का सहारा लिया जाता है। इस शब्द का वह अर्थ जो उस संकल्पना को एक नाम देता है, वह अवधारणात्मक अर्थ कहलाता है। यह संकेतित वस्तु के मूल लक्षण पर केंद्रित होता है एवं गौण लक्षणों को छोड़ दिया जाता है। दूसरे शब्दों में यह संकेतित वस्तु की जातिगत संकल्पना होती है। जैसे – जब हम 'मिठाई' शब्द का प्रयोग करते हैं तो इसके अंतर्गत विभिन्न आकार-प्रकार एवं रंगों की मिठाई के अर्थ समाहित हो जाते हैं। अवधारणात्मक अर्थ दो संरचनात्मक सिद्धांतों पर (व्यतिरेकी एवं घटकीय विन्यास) पर आधारित होता है। शब्दकोशों में भी शब्द का अर्थ इसी प्रकार से दिया गया होता है। व्यतिरेकी लक्षणों के आधार पर अवधारणात्मक अर्थ का अध्ययन इस प्रकार किया जाता है-

सजीव + -
मानवीय + -
पुरुष + -
वयस्क + -

इसी प्रकार घटकीय विन्यास के आधार पर भाषाविज्ञान की बड़ी इकाइयों का निर्माण छोटी इकाइयों द्वारा किया जाता है।

7.4.2. सहचारी अर्थ (Associative meaning)

सहचरी अर्थ का संबंध बोलने वाले की समझ पर निर्भर करता है। जो निम्नलिखित हैं –

1. संपृक्तार्थ/लक्षार्थ (Connotative meaning)
2. सहप्रयोगार्थ (Collocative meaning)
3. सामाजिक अर्थ (Social meaning)
4. भावपरक अर्थ (Affective meaning)
5. व्यक्तार्थ (Reflected meaning)
6. कथ्यगत अर्थ (Thematic meaning)

7.4.2.1. संपृक्तार्थ/लक्षार्थ (Connotative meaning)

जब कोई वक्ता किसी शब्द का व्यवहार करता है तो उस शब्द का अपना अर्थ होता है, उससे संबंधित कोई वस्तु इस जगत में अवश्य विद्यमान होती है, तभी श्रोता उसके अर्थ को समझ पाता है। जब वक्ता द्वारा प्रयुक्त किसी शब्द से मुख्य या सामान्य अर्थ के अतिरिक्त भी कुछ अर्थ संप्रेषित हो रहा हो, जिसका समाहार मूल अर्थ में न होता हो उसे संपृक्तार्थ कहते हैं। संपृक्तार्थ का क्षेत्र अवधारणात्मक अर्थ से अधिक विस्तृत होता है। इसमें समाज सभ्यता एवं संस्कृति आदि का योगदान रहता है। संपृक्तार्थ, अर्थ का वह पक्ष है जो संबंधित भाषा समुदाय के यथार्थ को देखने-परखने के दृष्टिकोण पर निर्भर करता है। उदा. भारत में 'कुत्ता' की गणना एक वफादार जानवर के रूप में की जाती है। आज के तकनीकी युग में ऑडियों-विजुयल विज्ञापन संपृक्तार्थ के सटीक उदाहरण है जिसमें भाषिक एवं दृश्य प्रतीक दोनों का प्रयोग संकेतित वस्तु के साथ एक विशेष प्रकार का अर्थ जोड़ते है।

जब हम अर्थ का विश्लेषण करते हैं तो हमें दो प्रकार के अर्थों को जानना पड़ता है- संपृक्तार्थ (Connotative meaning) एवं अभिधेयार्थ (Denotative meaning) जैसे- 'पहाड़' शब्द कभी ऊँचाइयों का दर्शाता है और कभी कठिनाईयों को दर्शाता है और कभी कठिनाईयों एवं विपत्ति को।

7.4.2.2. सहप्रयोगार्थ (Collocative meaning)

सहप्रयोगार्थ के अंतर्गत किसी शब्द का अर्थ उसके संरचनात्मक घटकों के योग से बने अर्थ से भिन्न और विस्तृत होता है। इसमें शब्द के प्रचलित अर्थ के अतिरिक्त उससे संबंधित अन्य अर्थ भी युक्त हो जाता है। जैसे 'लंबोदार' शब्द का अर्थ है लंबा=बड़ा और उदर = पेट अर्थात् 'बड़ा है पेट जिसका' किन्तु सभी बड़े पेट वाले व्यक्तियों के लिए 'लंबोदर' शब्द का व्यवहार नहीं किया जाता अपितु 'गणेश' के लिए किया जाता है। इसी प्रकार 'सुंदर' शब्द का अर्थ यद्यपि सुंदरता को दर्शाता हैं किन्तु ज्यादातर नारी सौंदर्य को दर्शाता है तथा 'गुलाब' शब्द का अवधारणात्मक पक्ष जहाँ पुष्प की एक विशेष जाति जो विभिन्न आकार एवं विभिन्न रंगों के गुलाब की ओर संकेत करता है। वही इस शब्द का प्रयोग परंपरागत रूप से वैभव एवं ऐश्वर्य के प्रतीक के रूप में भी किया जाता है। दोनों अर्थ सहप्रयोगार्थ कहलाते हैं।

7.4.2.3. सामाजिक अर्थ (Social meaning)

अर्थ सामाजिक होता है। जैसे- 'तू' 'तुम' और 'आप' का व्याकरणिक दृष्टि से प्रयोग एक ही अर्थ में होता है।

लेकिन इनके सामाजिक अर्थ अलग-अलग है। सामाजिक स्तर में और आयु में बड़े-छोटे व्यक्तियों की भिन्नता से इनके अर्थ में अंतर आ जाता है। सामाजिक अर्थ भाषा के सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थितियों से संबंधित होता है। अर्थ का यह पक्ष समाज की मान्यताओं और समाज में मान्यता प्राप्त कुछ चुनिंदा शब्दों के अर्थ को दर्शाता है।

उदा. मुंबई के अंडरवर्ल्ड के कुछ शब्द भिन्न प्रकार के अर्थ दर्शाते हैं। जैसे – 'पेटी' एक लाख नगद, 'खोखा'- एक करोड नगद के लिए प्रयोग किया जाता है। दान और भिक्षा शब्दों को प्रायः धार्मिक दृष्टि से देखा जाता है।

7.4.2.4. भावपरक अर्थ (Affective meaning)

अर्थ का यह पक्ष वक्ता की अनुभूति एवं व्यवहार पर निर्भर करता है। जब कोई व्यक्ति किन्हीं परिस्थितियों में क्षमायाचना करता है या किसी से कोई सहायता माँगता है अथवा किसी को उसके द्वारा किए गए उपकार के बदले धन्यवाद देता है तो वह नम्रता पूर्वक शब्दों का प्रयोग करता है। इस अर्थ के प्रयोग में वाणी के साथ-साथ शारीरिक भाव भंगिमा की भी महत्वपूर्ण भूमिका होता है। यह अर्थ व्यक्ति के लिए एक ही शब्द के अलग-अलग अर्थ हो सकते हैं। जैसे यदि 'सदी' शब्द का उदाहरण ले तो अभिधार्थ में तो सर्दी का अर्थ एक अवधिविशेष से है। जिसमें या तो उत्तरी या दक्षिणी गोलार्थ सूर्य से दूर होता है। लेकिन भावपरक अर्थ के रूप में सदी शब्द हर व्यक्ति के लिए अलग-अलग अर्थ को दर्शाता है। जैसे उस व्यक्ति के लिए सदी शब्द का अर्थ सकारात्मक होगा जो सर्द मौसम के आते ही स्लेजिंग का आनंद लेता है। लेकिन उस बच्चे के लिए नकारात्मक अर्थ होगा जिसे बर्फ के गोलों से दोस्तों ने प्रताड़ित किया हो।

7.4.2.5. व्यक्तार्थ अर्थ (Reflected meaning)

यह अर्थ दूसरे अर्थों के संबंध को देखते हुए लिया जाता है। जैसे एक शब्द के अर्थ को हम किस प्रकार ले लेते हैं। जैसे हिन्दी शब्द चेला, सेवक का प्रयोग भिन्न-भिन्न संदर्भों में करते और समझाते हैं।

7.4.2.6. कथ्यगत अर्थ (Thematic meaning)

यह अर्थ शब्द के प्रयोग पर उनके प्रभाव को देख कर आँका जाता है। जैसे- हम 'कल' का प्रयोग दो प्रकार से कर सकते हैं – 1. मैं कल आऊँगा . 2. कल मैं आऊँगा। दूसरे वाले कल में निश्चितता का भाव है। इसी प्रकार कर्तृवाच्य और कर्मवाच्य (Active and Passive) वाक्यों में शब्दों का अर्थ कुछ हद तक दूसरे वाले प्रकार का हो जाता है।

7.5. अर्थ परिवर्तन के कारण

मनुष्य की मनःस्थिति में सर्वदा परिवर्तन होता रहता है, जिसके फलस्वरूप उसके विचार भी एक-से नहीं रह पाते। भाषा विचारों की वाहिका है, अतः उसे भी विचारों का साथ देना पड़ता है। इस साथ देने के प्रयास में ही उसके शब्दों में अर्थ-परिवर्तन आ जाता है। इस परिवर्तन के मूल में कार्य करने वाले कारणों पर विचार करना आसान नहीं है, क्योंकि वे इतने संयुक्त और गुथे रहते हैं कि निश्चित स्वरूप दिखाई ही नहीं पड़ता। एक शब्द के अर्थ-परिवर्तन पर विचार करते समय कभी एक कारण दिखाई पड़ता है, तो कभी दूसरा। फिर भी एक बात तो निश्चित-सी है कि भाव-साहचर्य ही घूम-फिर कर अर्थ-परिवर्तनों में अधिक कार्य करता दिखाई पड़ता है। इसके अतिरिक्त कुछ सामाजिक और भौगोलिक कारण भी होते हैं, पर इनका भी प्रभाव सीधा न पड़कर उसी रास्ते से पड़ता है। कभी-कभी व्यक्ति या संप्रदाय में विचार-विभिन्नता के कारण भी अर्थ-परिवर्तन हो जाता है . नीचे इस संबंध में कुछ कारणों पर हम लोग विस्तृत रूप से विचार करेंगे। यहाँ इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि किसी भी शब्द में एक ही कारण नहीं काम करता; इसी कारण, एक कारण के उदाहरणों में अन्य कारणों की भी गंद मिल सकती है।

7.5.1. बल का अपसरण (Shift of Emphasis)

किसी शब्द के उच्चारण में यदि केवल एक ध्वनि पर बल देने लगें, तो धीरे-धीरे शेष ध्वनियाँ कमजोर पड़कर लुप्त हो जाती है। उपाध्याय जी परिवर्तित होकर 'ओझा' इसी बल के अपसरण के कारण हुए हैं। ध्वनि की ही भाँति अर्थ में भी यह 'बल' कार्य करता है। किसी शब्द के अर्थ के प्रधान पक्ष से हटकर, बल यदि दूसरे पर आ जाता है तो धीरे-धीरे वही अर्थ प्रधान हो जाता है और प्रधान अर्थ बिलकुल लुप्त हो जाता है। यहाँ प्रश्न यह उठता है कि बल कैसे प्रधान पक्ष से हटकर गौण हो जाता है। इसका निश्चित उत्तर नहीं दिया जा सकता। हाँ, इतना अवश्य कहा जा सकता है कि भाव-साहचर्य का ही यह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव है, जिसमें समीपवर्ती दो भावों में एक भाव विजयी बन जाता है। उदा. 'गोस्वामी' शब्द का आरंभिक अर्थ था 'बहुत-सी गायों का स्वामी।' बहुत-सी गायों का स्वामी 'धनी' हगा, अतः 'माननीय' भी होगा। इसी प्रकार धीरे-धीरे इसका अर्थ माननीय हुआ। वहीं एक और भावना कार्य करने लगी। वह भावना यह है कि जो अधिक गाय की सेवा करेगा, वह धर्मपरक भी होगा। इसी प्रकार बल के अपसरण से 'गोस्वामी' शब्द 'गायों का स्वामी' के अर्थ से परिवर्तित होकर 'माननीय धार्मिक व्यक्ति' का वाचक हो गया।

7.5.2. पीढ़ी-परिवर्तन

मनुष्य अनुकरण प्रिय प्राणी है, पर स्वयं अपूर्ण होने के कारण वह शुद्ध और पूर्ण अनुकरण नहीं कर पाता। यही कारण है कि पीढ़ी-परिवर्तन के समय जब पुरानी पीढ़ी चिंता की ओर चल पड़ती है, और नई पीढ़ी मुकुलित होने लगती है तो प्रत्येक क्षेत्र में परिवर्तन होने लगते हैं। नई पीढ़ी अनुकरण ठीक न कर सकने के कारण अनजाने में भी नये रास्ते पर आ खड़ी होती है। यही परिवर्तन का मूल है। यह परिवर्तन ध्वनि के विषय में तो स्पष्टतः देखा जाता है, पर अर्थ के विषय में इसका घटित होना असंभव नहीं है। अधिक अस्पष्ट शब्द रखने वाले शब्दों के विषय में तो यह परिवर्तन और भी स्वाभाविक हो जाता है, क्योंकि आवश्यक नहीं है कि नई पीढ़ी प्रत्येक शब्द को उतनी ही गहराई तक समझे। इसी न समझने में नया अर्थ विकसित हो जाता है।

उदाहरण के लिए 'पत्र' शब्द का इतिहास इस दृष्टिकोण से बड़ा मनोरंजक है। आरंभ में लोगों ने पत्र या पत्ते पर लिखना आरंभ किया। कुछ समय तक पते पर लिखा जाता रहा। दूसरी पीढ़ी आई और उससे यही सोचा कि जिस पर लिखा जाता है, उसे पत्र कहते हैं। यह गलती वहाँ और भी स्पष्ट हो जाती है जब इस नई पीढ़ी को भाज वृक्ष की छाल को भी लिखने के काम में आने के कारण 'भोजपत्र' या 'भूर्जपत्र' कहते हम पाते हैं। धीरे-धीरे लिखने के काम में और भी बराबर, चपटा और पतली चीजें आने लगी और पत्र का अर्थ आगे आने वाली पीढ़ियों ने इन्हीं गुणों को मान लिया और किसी चीज का बराबर, चपटा और पतला रूप 'पत्र' कहा जाने लगा। अर्थात् 'पत्र' या 'पत्तर' जो खड़ीबोली में 'पतला' के रूप में परिवर्तित हो गया इसमें बल के अपसरण का भी हाथ स्पष्ट है।

7.5.3. अन्य विभाषा से शब्दों का उधार लेना –

कभी-कभी संसर्ग या आवश्यकता के कारण एक भाषा का शब्द दूसरी भाषा में उधार ले लिया जाता है। ऐसा करने में शब्द का शरीर तो आ जाता है (परिवर्तित होकर कभी-कभी आता है), पर आत्मा ठीक उसी प्रकार नहीं आती। फलस्वरूप उधार लेकर प्रयोग करने वाले लोग उस शरीर पर पिछली आत्मा से मिलती-जुलती कोई आत्मा डाल कर उसे अपना लेते हैं। इस प्रकार शब्द की आत्मा अर्थात् अर्थ में कुछ परिवर्तन हो जाता है। फारसी में 'मुर्ग' का अर्थ था 'पक्षी' । 'मुर्गाबी' शब्द में अब भी यह अर्थ सुरक्षित है, जिसका अर्थ है 'पानी की चिड़िया'। हिन्दुस्तानी बोलियों या भाषाओं में मुर्ग का अर्थ पक्षी न रहकर 'पक्षी विशेष' हो गया। इस अर्थ-परिवर्तन की दिशा में अर्थ-संकोच है। फारसी का दूसरा शब्द 'दरिया' (नदी) गुजराती में जाकर 'समुद्र' का अर्थ देने गला है। इसी प्रकार अंग्रेजी का क्लॉक (clock) शब्द अंग्रेजी में दीवाल-घड़ी या घड़ी के लिए प्रयुक्त होता है, पर गुजराती में उसका अर्थ 'घटा' हो गया है। अंग्रेजी का ग्लास शब्द, जिसका अर्थ शीशा है, हिन्दी में गिलास बनकर एक विशिष्ट प्रकार के बर्तन का अर्थ देने लगा है। कुछ शब्द हमारे यहाँ अरबी भाषा में गये हैं। अधिक तो नहीं, पर कुछ परिवर्तन उनमें भी हुआ है। सच तो यह है कि विभाषाओं में जाने पर कम ही शब्द अपने ठीक और पूरे पुराने अर्थों में प्रयुक्त होते हैं।

7.5.4. एक भाषा भाषी लोगों का तितर-बितर होकर विकसित होना-

जब एक भाषा बोलने वाले लोगों का समूह कई वर्गों में विकसित होने लगता है और अन्त में अलग-अलग वर्ग बन जाते हैं तो उन विभिन्न वर्गों में एक शब्द भिन्न-भिन्न अर्थ देने लगता है। इसके पीछे उन लोगों का अलग-अलग विकास कार्य करता है। यों ये कारण अकेले कार्य नहीं करते, इनके साथ-साथ अन्य कारण भी काम करते हैं। इसी कारण एक परिवार की विभिन्न भाषाओं में कभी-कभी एक ही शब्द अलग-अलग अर्थ देता दिखाई देता है।

अधिकतर यह अर्थ परिवर्तन बहुत साधारण होता है, पर कुछ ऐसे भी उदाहरण मिलते हैं, जिनमें यह इतना अधिक हो जाता है कि पहचाना भी नहीं जाता। उदा. 'वाटिका' का संस्कृत में अर्थ 'बगीचा' था। भोजपुरी में इसी से विकसित शब्द 'बारी' बगीचा का अर्थ देता है, पर बंगला में यह शब्द 'वाड़ी' हो गया, जिसका अर्थ घर है। संस्कृत का 'नील' शब्द हिन्दी में नीला है और अपना मूल अर्थ देता है, गुजराती में यह 'लीलो' होकर 'हरे' का अर्थ देने लगा है। अंग्रेजी और हिन्दी दोनों ही एक ही भारोपीय परिवार की भाषाएँ हैं, पर कितना आश्चर्य है कि इनके फी (Fee) और 'पशु' शब्दों में अर्थ इतना महान अंतर हो गया है, यद्यपि ये दोनों मूलतः एक ही शब्द हैं। इसी प्रकार संस्कृत के युग (दो) तथा अंग्रेजी के योक (Yoke) एवं संस्कृत का मृग (=जानवर) और फारसी का 'मुर्ग' (पक्षी) भी मूलतः एक ही शब्द है। यह भी ध्यान देने योग्य है कि ऐसे शब्दों की ध्वनि में भी प्रायः परिवर्तन हो जाता है।

अर्थ परिवर्तन

जिस प्रकार हमने 'गँवार' शब्द को लेकर चर्चा की है और यह देखा है कि किस प्रकार उसमें परिवर्तन हुआ है। लेकिन उसके परिवर्तन का कारण भी विचारणीय है। अनुमानतः कारण यह ज्ञात होता है कि 'गँवार' का अर्थ पहले 'गाँव का रहने वाला' था। गाँव में अधिकतर लोग असंस्कृत होते ही थे। अतः असंस्कृत होने के कारण सांकेतिक रूप में पहले यह प्रयोग चला होगा और बाद में अपने दूसरे अर्थ में यह शब्द रूढ़ हो गया होगा। इस दिशा में हम अर्थ परिवर्तन के की दिशाएँ कौन-कौन सी है इस पर चर्चा करेंगे।

आज का एक बहुत प्रचलित शब्द है 'तेल' है। शब्द पर ध्यान देने से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह 'तेल' से निकला है और आरंभ में केवल तिल के रस को 'तेल' कहते रहे होंगे। पर आज तो इसका अर्थ इतना परिवर्तित हो गया है कि केवल सरसों, नारियल और रेंडी के तेल को ही नहीं अपितु मिट्टी, साँप और मछली के तेल को भी तेल कहा जा रहे है। उसी प्रकार वैदिक संस्कृत में 'मृग' शब्द पशु मात्र का वाचक है। 'मृगराज' में अब तक भी यह अर्थ सुरक्षित है, पर आज उसका अर्थ हिरण हो गया है। उसी संदर्भ में एक और शब्द 'साहसी' यदि आज किसी को 'साहसी' कहें तो वह बहुत प्रसन्न हो जाएगा पर उसे क्या पता कि संस्कृत में 'साहस' का प्रयोग हत्या और व्यभिचार आदि बुरे कार्यों के लिए होता था।

इन सभी उपर्युक्त उदाहरणों पर ध्यान दें तो स्पष्ट हो जाता है कि अर्थ-परिवर्तन या विकास की दिशा एक ही नहीं है। कुछ शब्द पहले संकुचित अर्थ रखते थे और विकास के पश्चात उनके अर्थ का विस्तार हो गया। इसके उलटे कुछ शब्द, और भी संकुचित हो गये। इसी प्रकार कुछ के अर्थ नीचे गिर गये और कुछ के ऊपर उठ गये। यही विकास की विभिन्न दिशाएँ हैं।

7.6. अर्थ परिवर्तन की दिशाएँ –

अर्थ परिवर्तन की तीन मुख्य दिशाएँ मानी जाती है- 1. अर्थ-विस्तार, 2. अर्थ-संकोच, 3. अर्थदिश।

7.6.1. अर्थ-विस्तार (Expansion of Meaning)

शब्दों का अर्थ जब सीमित क्षेत्र से निकल कर विस्तार पा जाता है, तो उसे अर्थ-विस्तार कहते हैं। ऊपर 'तेल' शब्द के अर्थ-विस्तार को हम देख चुके हैं। पहले उसका प्रयोग केवल तिल के तेल के लिए होता था, पर अब अभी वस्तुओं के तेल के लिए होता है। भाषा में अर्थ-विस्तार के उदाहरण अधिक नहीं मिलते, क्योंकि भाषा में ज्यों-ज्यों विकास होता है, उसमें सूक्ष्म से सूक्ष्म और सीमित से सीमित वस्तुओं और भावनाओं के प्रकटीकरण की शक्ति आती जाती है। इस प्रकार अर्थ-संकोच ही स्वाभाविक है, अतः वही अधिक पाया जाता है। टकर ने तो यहाँ तक कहा है कि

यथार्थ रूप में अर्थ-विस्तार होता ही नहीं। जिसे हम अर्थ-विस्तार कहते हैं, वह एक प्रकार का अर्थादेश मात्र है। खैर, यह तो नहीं कहा जा सकता कि अर्थ-विस्तार होता ही नहीं। हाँ, कम अवश्य होता है। पर, जो होता है, वह शुद्ध अर्थ-विस्तार है और उसे हम अर्थादेश नहीं कह सकते, जैसा कि टकर महोदय ने कहा है। उदा. के लिए संस्कृत के 'कल्य' शब्द का प्रयोग आने वाले कल के लिए तथा 'परश्व' का आने वाले परसों के लिए होता था, पर अब हिन्दी में दोनों का अर्थ-विस्तार हो गया है। दोनों ही कल और परसों बीते हुए तथा आने वाले, दोनों ही दिनों के लिए प्रयुक्त होते हैं। 'अभ्यास' शब्द का प्रयोग पहले केवल बार-बार बाण आदि फेंकने के लिए होता था, पर अब तो बुरे से बुरे कार्यों से लेकर अच्छे-अच्छे कार्यों तक का अभ्यास किया जाता है। 'गवेषणा' शब्द प्रारंभ में केवल गाय को ढूँढने के प्रयोग में आता था, पर आज किसी भी विषय पर गवेषणापूर्ण लेख लिखे जा सकते हैं। उसी प्रकार 'स्याह' का अर्थ काला है, और आरंभ में लोग काले रंग से लिखते थे, इसलिए उसे 'स्याही' कहा गया। पर आज नीली, लाल और हरी आदि सभी रंगों की रोशनाइयाँ 'स्याही' नाम से अभिहित किया जाता है। 'गोहार' शब्द पहले गायों के चुराये जाने पर की गई पुकार के लिए प्रयुक्त होता था, पर अब सभी प्रकार की पुकार 'गोहार' है। 'गोहार' से ही 'गोहराना' क्रिया है जो पुकारने के अर्थ में अवधी तथा भोजपुरी में प्रयुक्त होती है। 'अधर' का पहले अर्थ था नीचे का ओष्ठ, अब दोनों ओष्ठों को 'अधर' कहते हैं।

इतना ही नहीं, व्यक्तिवाचक संज्ञाओं में भी अर्थ-विस्तार हो जाता है। जयचन्द कभी एक व्यक्ति मात्र था, परंतु इधर 20 वीं सदीं में भारत के स्वतंत्र होने के पूर्व तक पुलिस और फौज विभाग के सारे कर्मचारी जयचंद कहे जाने लगे थे। 'विभीषण' और 'नारद' भी अपने अर्थ को विस्तृत कर चुके हैं, एक घर का भेदिया है, तो दूसरा लड़ाई लगाने वाला। इसी प्रकार गंगा एक विशिष्ट नदी का नाम है, परंतु मराठी में यह 'नदी' का पर्याय हो गया है। गुजराती में भी इसका विस्तृत अर्थ में प्रयोग मिलता है।

7.6.2. अर्थ-संकोच (Contraction of Meaning)

भाषा के विकास में अर्थ-संकोच का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। भाषा के आरंभ-काल में सभी शब्द सामान्य रहे होंगे। सभ्यता के विकास के साथ विशिष्टता की भावना आती गई होगी और शब्दों में अर्थ-संकोच होता गया होगा। इसीलिए व्रील ने कहा है कि राष्ट्र या जाति जितनी ही अधिक विकसित होगी, उसकी भाषा में अर्थ-संकोच के उदाहरण उतने ही अधिक मिलेंगे। अर्थ-संकोच के कारण किसी शब्द का प्रयोग सामान्य या विस्तृत अर्थ से हटकर विशिष्ट या सीमित अर्थ में होने लगता है। अंग्रेजी के 'Deer' तथा संस्कृत के 'मृग' शब्द का प्रयोग पहले 'हरिण' के लिए हो रहा है। 'गो' शब्द गम् धातु से बना है ऐसा कहा जाता है, जिसका अर्थ है 'गमन करने वाला', पर अब उसका प्रयोग केवल गाय के लिए होता है। इसी प्रकार 'भार्या' का मूल अर्थ है जिसका भरण-पोषण किया जाये, पर अब यह केवल पत्नी के लिए प्रयुक्त होता है, यद्यपि आज की बहुत-सी पत्नियाँ भरण-पोषण की अपेक्षा बिल्कुल ही नहीं रखती। कुछ उदाहरण तो ऐसे भी हैं, जिनमें स्त्रियाँ अपने पतियों का भी भरण-पोषण करती है। श्रद्धा से किया जाने वाला प्रत्येक कार्य 'श्राद्ध' कहा जाता था, पर अब केवल मृत्यु के बाद श्राद्ध का प्रयोग होने लगा है। उसी प्रकार 'पकंज', 'जलज', 'अज्ज' मूलतः पंक या पानी में जन्मने वाली सभी चीजों (मछली, कीड़े, घास आदि) के वाचक रहे होंगे, किन्तु अब इनका अर्थ केवल 'कमल' है। इस प्रसंग में यह भी संकेत्य है कि शब्दों का अर्थ धीरे-धीरे समय बीतने के साथ परिवर्तित होते-होते तो संकुचित होता ही है, उपसर्ग (आचार-सदाचार, दुराचार), प्रत्यय (कुटी-कुटीर, देग-देगचा, बाग-बगीचा), विशेषण (अंबर-नीलांबर, पीतांबर, श्वेतांबर; घोड़ा- लाल घोड़ा, काला घोड़ा, छोटा घोड़ा, तेज घोड़ा), समास (अनुज,-रामानुज, कृष्णानुज) प्रसंग (राम बहुत तेज लड़का है) अन्य भाषा से शब्द ग्रहण ('शब्द' अपनी मूल भाषा के सभी अर्थों में दूसरी भाषा में प्रायः नहीं जाते, कुछ सीमित अर्थों में ही जाते हैं। अंग्रेजी में 'कालर' का प्रयोग मछली का टुकड़ा, आभुषण विशेष आदि कई अर्थों में होता है, किन्तु हिन्दी में वह केवल एक अर्थ (कपड़ो का कालर) में प्रयुक्त होता है। फैशन आदि अन्य भी अनेक शब्द इसी प्रकार हैं। संस्कृत में 'घरा' का अर्थ योनि, गर्भाशय, शिरा, गूदा आदि भी था, किन्तु हिन्दी में केवल 'पृथ्वी' के लिए यह शब्द प्रयुक्त होता है) आदि के कारण तुरंत एक क्षण में उसके अर्थ में संकोच आ जाता है।

7.6.3. अर्थादेश (Transference of Meaning)

भाव-साहचर्य के कारण कभी-कभी शब्द के प्रधान अर्थ के साथ एक गौण अर्थ भी चलने लगता है। कुछ दिन में ऐसा होता है कि प्रधान अर्थ का धीरे-धीरे लोप हो जाता है और गौण अर्थ में ही शब्द प्रयुक्त होने लगता है। इस प्रकार एक अर्थ के लोप होने तथा नवीन अर्थ के आ जाने को 'अर्थादेश' कहते हैं। ऊपर हम 'गँवार' शब्द ले चुके हैं। इस संबंध में दूसरा उदाहरण 'अमुर' का दिया जा सकता है . ऋग्वेद की आरंभिक रचनाओं में यह द्विवाची शब्द है, पर बाद में राक्षसवाची हो गया। 'वर' का अर्थ श्रेष्ठ था, पर अब इसका प्रयोग 'दुलहे' के लिए प्रयुक्त होता है। स्वयं 'दुलहा' शब्द भी इसी प्रकार का है, इसका मूल अर्थ 'जी जल्द न मिले'(= दुर्लभ) था, पर अब यह 'वर' के नवीन अर्थ में ही प्रयुक्त होता है। ईरानी शब्द 'दिहकन' का मूल अर्थ 'देहात का बड़ा तोलुकेदार' है, परंतु उर्दू तथा पारसी गुजराती में 'देहकान' का मूल अर्थ मूर्ख होता है। अशोक 'देवानाप्रिय:' कहा जाता था, पर बाद में इसका अर्थ 'मूर्ख' ह गाया। इसी प्रकार बौद्ध धर्म के अनुयायी बौद्ध कहलाते हैं, परंतु 'बुद्धू' (जो उसी का रूपांतर है) का अर्थ मूर्ख होता है। 'मेये' बंगला में पहले 'माँ' के अर्थ में आता था। धीरे-धीरे अर्थादेश होने लगा, और आज रानीगंज के आसपास इसका अर्थ पत्नी हो गया है। 'पाषंड' नाम का एक संप्रदाय अशोक के समय में था। बड़ी सराहना के साथ अशोक ने उसके साधुओं को दान दिया था। बाद में वे साधु या उनके शिष्य भ्रष्टाचारी हो गये, अतः पाषंड में अर्थादेश होने लगा और आज दुष्टता, ढोंग, दिखावट आदि के लिए इसका प्रयोग होता है। उसी प्रकार बंगला भाषा में गृह से निकले शब्द 'घर' का अर्थ हिन्दी की भाँति घर न होकर 'कमरा' है। यह अर्थादेश तो स्पष्टतः भाव-साहचर्य के कारण हुआ है। इसे अर्थ-संकोच भी कहा जा सकता है।

7.7. निष्कर्ष-

अर्थविज्ञान में शब्दों के अर्थ का अध्ययन किया जाता है, जिसमें अर्थ के विभिन्न प्रकार सांस्कृतिक वातावरण, वस्तु या व्यापार प्रदर्शन, व्याख्या एवं परिभाषाएँ आदि के आधार पर विभिन्न प्रकार की श्रेणियों में विभक्त किये जा सकते हैं। मुख्य रूप से इसमें अर्थ की अवधारण एवं परिभाषाएँ, अर्थ की संकल्पना एवं स्वरूप, अर्थ ग्रहण की प्रक्रिया तथा उसका विश्लेषण, अर्थ परिवर्तन के कौन-कौन से कारण होते है उसका भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से अध्ययन किया गाया है। अर्थ परिवर्तन के कारणों के साथ-साथ अर्थपरिवर्तन की दिशाओं पर भी चर्चा की गयी है। जिसमें भाषाविज्ञान की दृष्टि से जिनके कारण अर्थपरिवर्तन की दिशाएँ निश्चित होती है उसे दिखाने का प्रयास किया गया है। भाषाविज्ञान के अनुसार अर्थपरिवर्तन के कारण और दिशाएँ कितनी है उस अध्ययन के सुविधा हेतु प्रस्तुत किया जा रहा है। साथ ही अर्थ के प्रकारों पर भी विशेष रूप से प्रकाश डाला गया है। अतः इस पाठ के माध्यम से हम अर्थ विज्ञान के विभिन्न अंगों पर विस्तार से चर्चा कर सकते हैं।

7.8. स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न

1. अर्थ के प्रकार को विस्तार रूप से लिखिए।
2. अर्थ परिवर्तन के कारण को सोदाहरण रूप से लिखिए।
3. अर्थ परिवर्तन की दिशाओं को विस्तार रूप से लिखिए।

सहायक ग्रंथ

1. भाषा-विज्ञान के सिद्धांत और हिन्दी भाषा- डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना, मीनाक्षी प्रकाशन, मीरठ।
2. भाषा-विज्ञान और हिन्दी – डॉ. सरयूप्रसाद अग्रवाल, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।
3. भाषा-विज्ञान की भूमिका- देवेन्द्रनाथ शर्मा, राधा कृष्ण प्रकाशन, दिल्ली।
4. भाष-विज्ञान एवं भाषा-शास्त्र- डॉ. कपिलदेव द्विवेदी, विशविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।

डॉ. सोनकांबळे पिराजी मनोहर

8. शब्द विज्ञान

उद्देश्य :

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप शब्द किसे कहते हैं, शब्द और शब्द विज्ञान से परिचित हो सकेंगे । हिन्दी शब्द निर्माण, शब्द - समूह के विभिन्न स्त्रोतों से परिचय प्राप्त कर सकेंगे ।

इकाई- **VIII**

8.1. प्रस्तावना

8.2. शब्द का अर्थ और परिभाषा

8.3. शब्द विज्ञान की परिभाषा

8.4. हिन्दी का शब्द समूह

8.5. शब्द की शक्तियां

8.6. शब्दों का वर्गीकरण या शब्द रचना के उपादान

8.6.1. रचना के आधार पर

8.6.2. इतिहास या स्रोत के आधार पर

8.6.3. रुपांतर या व्याकरण के आधार पर

8.6.4. प्रयोग के आधार पर

8.7. शब्द परिवर्तन के कारण

8.8. उपसंहार

8.1. प्रस्तावना :

किसी भी भाषा का स्वरूप जानने के लिए उसका ध्वनि विज्ञान, शब्द - विचार और वाक्य विचार जानना आवश्यक है । ध्वनियों के वर्णों से शब्द का निर्माण होता है । 'शब्द'भाषा की छोटी सार्थक इकाई । भाषा वैज्ञानिक विश्लेषण में भाषा की शब्दावली का विश्लेषण महत्वपूर्ण होता है । भाषा किसी भी समाज के संप्रेषण का सशक्त एवं सक्षम साधन है । मनुष्य समाज से ही भाषा सीखता है और समाज में ही उसका प्रयोग करता है । भाषा के उद्भव और विकास में उस समाज के इतिहास की बहुत बड़ी भूमिका होती है । हिन्दी भाषा एक विस्तृत जन समुदाय की भाषा है । अन्य भाषाओं की तरह इसका उद्भव और विकास की परंपरा समाज के इतिहास से जुडा हुआ है । देश, काल, परिवेश के प्रभाव

से आए हुए बदलावों को आत्मसात् करते हुए आगे चलने की प्रक्रिया को विकास कहते हैं। भाषा में भी विकास की यह प्रकिया उसके कई पहलुओं में अभिव्यक्त होता है। भाषा के शब्द - समूह या शब्द भंडार भी ऐसा एक पहलू है। शब्द, भाषा के - संरचनात्मक अध्ययन में सबसे अधिक प्रयुक्त होनेवाली इकाई है। ध्वनियों के विभिन्न अर्थ पूर्ण संयोजन से शब्द बनते हैं और सार्थक होते हैं। भाषा को स्थायी रुप प्रदान करने में शब्दों का भी महत्वपूर्ण योग है।

8.2. शब्द का अर्थ और परिभाषा:

भाषा की स्वतंत्र तथा सार्थक इकाई को 'शब्द' कहते हैं। शब्द भाषा की लघुतम सार्थक इकाई होती है। शब्दों की रचना वर्णों के संयोग से होती है। ये वर्ण अलग – अलग अनुक्रमों में आकर अलग-अलग शब्दों की रचना करते हैं। उदाहरण के लिए 'क', 'म', 'ल' तीन वर्ण हैं। अलग - अलग अनुक्रमों में ये क्रमश: कलम, कमल तथा मकल शब्दों का निर्माण करते हैं। परंतु हिन्दी में कलम तथा कमल तो हैं लेकिन मकल नहीं। इसका अर्थ यही हुआ कि वर्णों के प्रत्येक अनुक्रम को शब्द नहीं कहा जा सकता। वर्णों का जो अनुक्रम अर्थवान होता है वही शब्द कहलाता है। अर्थात् शब्द भाषा की अर्थवान इकाई है। साथ ही एक और बात है कि कभी-कभी एक अक्षर अपने आप में ही शब्द होता है जैसे 'आ', 'न' आदि। इन दोनों अक्षरों से अर्थ का बोध होता है। अतः यह दोनों भी अक्षर होने के साथ-साथ शब्द भी है।

शब्द भाषा की अत्यधिक महत्वपूर्ण इकाई है। जिस भाषा में जितने अधिक शब्द होंगे, उतने ही अधिक अर्थ क्षेत्रों को व्यक्त करने की क्षमता उसमें होगी। अतः समृद्ध भाषा की पहचान यही है कि उसका शब्द भंडार व्यापक हो, उसमें जीवन की विविध स्थितियों, प्रसंगों और संदर्भों के अनुकूल अभिव्यक्ति की क्षमता हो। भाषा का प्रयोग जितने अधिक क्षेत्रों में विस्तृत होता है, उतने ही क्षेत्रों के अनुकूल उसकी शब्दावली का विकास होता जाता है।

शब्द भिन्न-भिन्न अर्थों में प्रयुक्त होता है। साथ ही एक, अर्थ के लिए भिन्न-भिन्न शब्द प्रयुक्त होते हैं। अर्थात् समानार्थक होने के बावजूद शब्दों का प्रयोग समान नहीं होता। उदाहरण के लिए "कीचड़" और "पंक" दोनों शब्द एक ही अर्थ के द्योतक हैं लेकिन "कीचड़" का प्रयोग आम बोलचाल में होता है, जबकि "पंक" का प्रयोग साहित्य के क्षेत्र में ही होता है। इसी तरह, एक शब्द का अलग-अलग संदर्भों में अलग-अलग अर्थ होता है। अर्थ-ग्रहण करते समय उन संदर्भों को समझना अत्यंत आवश्यक होता है।

जैसे – उसने मीरा का पद गाया।
वह अधीक्षक पद पर नियुक्त हुआ।

कहने का तात्पर्य यह है कि किसी शब्द का अर्थ - बोध करते समय शब्दकोश और प्रयोग- संदर्भ, दोनों का ध्यान रखना जरुरी है। क्योंकि जैसे ही किसी भाषा विशेष का प्रयोग करने वाले किसी नए विचार, संकल्पना अथवा स्थिति से जुडते हैं वैसे ही उसकी

अभिव्यक्ति के लिए उपयुक्त शब्दों के निर्माण की जरूरत उन्हें पडती है। अर्थ का आधार होने के कारण शब्द को अर्थ - तत्व भी कहा जाता है।

प्रत्येक शब्द किसी वस्तु, व्यक्ति या भाव का बोधक होता है। अतः शब्द का उच्चारण करते ही या उसे सुनते ही हमारे मानस-पटल पर उस व्यक्ति, वस्तु या भाव का चित्र अंकित हो जाता है। इन्हीं शब्दों के संयोजन से वाक्य बनते हैं। जिससे किसी पूर्ण भाव की अभिव्यक्ति होती हैं। शब्द केवल एक चित्र उपस्थित कर सकता है पूरे भाव का बोध नहीं कर सकता परन्तु वाक्य किसी निश्चित भाव की अभिव्यक्ति करता है। अत: शब्द को हम वर्ण और वाक्य के बीच की कड़ी कह सकते हैं।

8.3. शब्द-विज्ञान की परिभाषा :

'शब्द' का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन शब्द विज्ञान हैं। शब्द-विज्ञान भाषा विज्ञान की वह शाखा है जिसके अंतर्गत शब्दों के संरचनात्मक संगठन स्त्रोत, वर्गीकरण, स्वरूप आदि का वैज्ञानिक अध्ययन होता है। रूप या पद का आधार शब्द है। शब्दों पर रचना या इतिहास इन दो दृष्टियों से विचार किया जा सकता है।

8.4. हिन्दी का शब्द समूह :

किसी भी भाषा में प्रयुक्त समस्त शब्दों को समेकित रूप में उस भाषा की शब्द संपदा या शब्द समूह या शब्द भण्डार कहते हैं। यह शब्द – समूह जितना समृद्ध होगा उतना ही उस भाषा की समृद्धि होगी। वस्तुत: विश्व की समस्त भाषाओं का आधार शब्द ही है। समय- समय पर आए सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और धार्मिक आदि बदलावों का प्रभाव किसी भी भाषा के शब्द – समूह पर भी पड़ता है। उसके कारण नाए - नए शब्दों का विकास अथवा पुराने शब्दों में अर्थ- संस्कार होता है। परिणाम स्वरूप - समूह की वृद्धि होती है। हिन्दी के शब्द समूह के विकास के तीन - चरण हमें स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं –

1. प्राचीन काल में संस्कृत, पालि, प्राकृत और अपभ्रंश से हिन्दी शब्द समूह का विस्तार।
2. मध्यकाल में मुसलमानों का राज्य होने और ईरान के साथ प्राचीन संबंधों के कारण हिन्दी के शब्द समूह का विस्तार।
3. आधुनिक काल में अंग्रेजों के संपर्क से अनेक अंग्रजी शब्दावली के जुड जाने से हिन्दी के शब्द-समूह का विस्तार।

आज की मशनीकरण तथा भौतिक आवश्यकताओं के अनुरूप अनेक नए-नए शब्द हिन्दी में आ रहे हैं। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर व्यवहार-व्यवसाय की वृद्धि के अनुरूप भी अनेक नए - नए हिन्दी में आ रहे हैं। उदा : पासपोर्ट, डालर, कंप्यूटर, वीसा और सी.डी आदि। हिन्दी भाषा प्रत्येक काल में उस काल की समसामयिक अभिव्यक्ति के लिए अपने शब्द

समूह में परिवर्तन - परिवर्धन करती आई है।

8.5. शब्द की शक्तियाँ :

किसी भी भाषा में प्रत्येक शब्द किसी अर्थ का बोधक होता है परन्तु सभ्यता के विकास के साथ-साथ शब्दों के अर्थों में भी विकास हुआ है। कलांतर में एक ही शब्द को अनेक अर्थ दे दिए गए और प्रसंगानुसार वह भिन्न-भिन्न अर्थ व्यक्त करने लगा। इस प्रकार शब्द की तीन प्रकार की शक्तियाँ विकसित हुई। वे है - अभिधा, लक्षणा और व्यंजना।

अभिधा शक्ति से शब्द का कोशागत अर्थ व्यक्त होता है। जो प्रसंग के बिना भी जाना जा सकता है। जैसे- श्याम का अर्थ काला या किसी व्यक्ति का नाम हो सकता है। अभिधा शक्ति से ज्ञात होने वाले अर्थ को वाच्यार्थ कहते हैं। अभिधा या वाचक शब्दों के भी तीन भेद किये जाते हैं - रूढ़, यौगिक और योगरूढ़ ।

शब्द की दूसरी शक्ति है लक्षणा। लक्षणा द्वारा शब्द का कोशगत अर्थ से कुछ भिन्न अर्थ व्यक्त होते हैं जिसे लक्ष्यार्थ कहते हैं। जैसे – 'डाकुओं पर सारा गाँव टूट पडा'। यहाँ गाँव का कोशगत अर्थ 'घरों का समूह या बस्ती नहीं है क्यों कि बस्ती तो निर्जीव है। यहाँ गाँव का अर्थ है - गाँव में रहने वाले लोग। अत: यहा 'गाँव' का लक्ष्यार्थ हुआ। इसी प्रकार 'कुर्सी का मोह' और 'तुलसी का अध्ययन' में कुर्सी और तुलसी के लक्ष्यार्थ से अभिप्राय है।

जब लक्ष्यार्थ से भी आगे बढ़कर किसी भिन्न अर्थ का संकेत पाया जाता है तब शब्द की तीसरी शक्ति व्यंजना काम करती है। व्यंजना द्वारा व्यक्त अर्थ को व्यंग्यार्थ कहते है। व्यंग्यार्थ को वास्तव में शब्द की शक्ति न कहकर वाक्य की शक्ति कहना चाहिए। व्यंग्यार्थ प्रायः प्रसंग से ही जाना जाता है। एक ही वाक्य का भिन्न- भिन्न प्रसंगों पर भिन्न - भिन्न अर्थ लगाया जा सकता है। जैसे - मंदिर का घंटा बज रहा है। उसका अर्थ प्रातः काल किसी का उठने का संकेत हो सकता है। अर्थात् सवेरा हो गया, उठ जाओ।

8.6. शब्दों का वर्गीकरण या शब्द रचना के उपादान :

हिन्दी शब्दों का वर्गीकरण चार आधारों पर कर सकते है।

1. रचना के आधार पर
2. इतिहास के आधार पर
3. व्याकरण के आधार पर
4. प्रयोग के आधार पर

8.6.1. रचना या व्युत्पत्ति के ओधार पर शब्दों के तीन भेद है - रूढ़, यौगिक और योगरूढ़।

रूढ़ शब्द : जिन शब्दों के सार्थक खंड न किए जा सकें, उन्हें रूढ़ शब्द कहते हैं। हाथ, पैर, दिन और रात आदि के खंड करेंगे तो 'हा, थ, पै, र,दि, न, रा, त जैसी निरर्थक ध्वनियाँ शेष रहेंगी। रूढ़ शब्द किन्ही अन्य शब्दों के मेल से नहीं बने होते।

यौगिक शब्द : जब किसी रूढ़ शब्द के साथ कोई दूसरा, अर्थ वाला, शब्द या शब्दांश जुड़ता है तो वह शब्द यौगिक बन जाता है। इस प्रकार के शब्द, संधि या समास की प्रक्रिया से तथा उपसर्ग और प्रत्यय लगाकर बनाए जाते हैं।
'परोपकार' शब्द 'पर'तथा 'उपकार'शब्दों की संधि से बना है।
'घुडसवार'- 'घोडे का सवार'शब्दों से बना समास है।
'अनुशासन' शब्द में 'शासन'के साथ 'अनु'उपसर्ग जुड़ा है।

योगरूढ़ शब्द : जिस यौगिक शब्द से किसी रूढ़ अथवा विशेष अर्थ वा विशेष अर्थ का बोध होता है, उसे योग रूढ़ शब्द कहते है। जैसे – चारपाई, पंकज और दशानन।

चारपाई का अर्थ है - चार पायों वाली। पर यह शब्द केवल खाट के लिए आता है। चार पैरों वाली कुर्सी, गाय और मेज आदि के लिए नहीं।

पंकज का अर्थ है – पंक अर्थात् कीचड़ में 'ज' अर्थात् पैदा होने वाला। पर यह केवल कीचड़ में पैदा होने वाले 'कमल'के अर्थ में ही आता है। कीचड़ में तो कीड़े, जलजीव, कमल,ककडी और सिंघाडे आदि भी पैदा होते हैं, पर 'पंकज' उसके लिए नहीं आता।

'दशानन' का अर्थ है - दस सिर वाला। पर यह शब्द केवल, 'रावण' के लिए ही आता है। किसी अन्य के लिए नहीं। अत: 'चारपाई', 'पंकज' और दशानन योग रूढ़ शब्द है।

शब्द रचना के उपादान : शब्दों की रचना धातु, उपसर्ग और प्रत्यय के मेल से होती है। यह आवश्यक नहीं है कि हर एक शब्द में तीनों अंश हो। एक भी हो सकता है, दो भी और तीन, चार और पाँच भी लेकिन इनके मेल से बना शब्द एक ही रहेगा।

धातु- धातु वह मूल शब्द होता है जिसमें अन्य अक्षरों अथवा शब्दों को जोड़कर विभिन्न शब्द बनाए जाते हैं। अंग्रेजी में 'धातु' को 'Root' कहते है तथा व्युत्पत्ति को 'etymology'। एक मूल शब्द के आगे या पीछे अक्षर था अक्षर समूह जोडकर अनेक शब्द बनाए जा सकते हैं।

उपसर्गः उस भाषिक इकाई को कहते हैं जिसका भाषा - विशेष में स्वतन्त्र प्रयोग न होता हो, किन्तु जिसे विभिन्न प्रकार के शब्दों के आरम्भ में जोडकर शब्दों की रचना की जाती है। उपसर्ग में तत्सम उपसर्ग, तद्भव उपसर्ग और विदेशी उपसर्ग आदि तीन प्रकारों का प्रयोग होता है। प्रत्यय- उस भाषिक इकाई को कहते है जिसका प्रयोग स्वतन्त्र रुप से न हो और जिसे किसी और भाषिक इकाई के अन्त में जोड़कर शब्द रचना की जाय।

8.6.2. इतिहास के आधार पर या स्त्रोत के आधार पर : -

किसी भी भाषा के शब्द विभिन्न स्त्रोतों से आते हैं। हिन्दी भाषा में शब्दों के विभिन्न स्त्रोत ये है - बहुत सारे शब्द तो संस्कृत से आए हैं। कुछ शब्द तद्भव रुप में आए हैं। दूसरा स्त्रोत विदेशी भाषाएँ हैं। इस स्त्रोत से शब्द पश्तो, तुर्की, अरबी, फ़ारसी और अंग्रेजी आदि से आए हैं। हिन्दी भाषा के शब्द - समूहों के चार वर्ण बनते हैं – वे 1. तत्सम शब्द 2. तद्भव शब्द 3. देशज शब्द 4. विदेशी शब्द आदि।

तत्समशब्द : तत्सम में 'तत्' का अर्थ है 'वह'अर्थात 'संस्कृत' और 'सम' का अर्थ है समान। अर्थात् 'तत्सम' उन शब्दों को कहते हैं जो संस्कृत के समान हो अथवा संस्कृत जैसे हो। ये शब्द संस्कृत से लगभग अपने मूलरूप में आए हैं। उदाः अग्नि, ऋषि, चतुर, नृप और जल इत्यादि। कुछ शब्दों में अल्प परिवर्तन हुआ है अतः उन्हे अर्थ तत्सम कहते है। जैसे - घरम, करम, समरथ, श्रीमान और भगवान इत्यादि।

तद्भव शब्द : 'तत्' का अर्थ होता है वह, और 'भव' का पैदा हुआ। अतः 'तद्भव' शब्द का शाब्दिक अर्थ होता है "उससे पैदा हुआ"। 'तद्भव' शब्द वे शब्द है जो संस्कृत, प्राकृत, और अपभ्रंश भाषा परंपरा से ध्वनि - परिवर्तन के कारण विकसित हुए शब्द है।

उदाः **तत्सम**	**तद्भव**
अक्षि	आँख
दंत	दाँत
क्षेत्र	खेत
पक्ष	पंख
अंधकार	अंधेरा
गृह	घर
कर्म	काम
हाथ	हस्त

तत्सम शब्दों में ध्वनि-परिवर्तन होने से तद्भव शब्द विकसित होते हैं। यह ध्वनि परिवर्तन मनमाने ढंग से नहीं होता बल्कि भाषिक नियमों के अनुसार ही होता है।

(क) संस्कृत में संयुक्त व्यंजन के पूर्व स्वर ह्रस्व होता है। जब ऐसे शब्द तद्भव रूप धारण करते हैं तब ह्रस्व स्वर दीर्घ में परिवर्तित हो जाता है और संयुक्त व्यंजन के स्थान पर एक ही व्यंजन रह जाता है। जैसे –

सर्प - साँप
पंक्ति - पाँत
दुग्ध - दूध
अक्षु - आँसू
अग्नि - आग
पंच - पाँच

तत्सम शब्द की कुछ महाप्राण ध्वनियाँ, तद्भव बनते समय 'ह' में बदल जाती हैं – जैसे–

सौभाग्य - सुहाग
दधी - दही
वधू – बहू
मुख - मुँह

हिन्दी भाषा में तद्भवों की संख्या तत्समों की तुलना में अधिक है।

देशज शब्द : जिन शब्दों की उत्पत्ति संस्कृत, प्राकृत या अपभ्रंश के स्त्रोत से न हुई हो और न किसी विदेशी स्त्रोत से उन शब्दों को देशज शब्द, कहते हैं। ये शब्द या तो मुसलमानों के पूर्व आने वाली जातियों ने दिए है या ध्वनि के आधार पर गढ़ लिए गए हैं। ये शब्द साधारण लोगों के बीच प्रचलित होते हुए एक परंपरा के रूप में भाषा में विद्यमान होते हैं। ऐसे शब्द हिन्दी भाषा में बड़ी संख्या में मिलते हैं। ऐसे शब्द प्रत्येक देश व समाज की जीवन शैली का परिचायक होते हैं। हिन्दी में प्रयुक्त देशज शब्दों के कुछ उदाहरण इस प्रकार है - गिचपिच, झमेला, ऊटपटांगा, गड़बड़ और लकदक आदि। बहुत सारे देशज शब्द, ध्वन्यात्मक अनुकरण से या किसी वस्तु के गुण या भाव को प्रकट करने के लिए ध्वनियों के अनुकरण से बनते हैं। जैसे –

गोल – मटोल और चिपचिपा आदि।

विदेशी शब्द : विदेशी स्त्रोतों से हिन्दी में आए हुए शब्दों को विदेशी शब्द कहते हैं। विदेशी शब्द अनेक भाषाओं से आए हैं। उनमें सबसे बडी संख्या फ़ारसी, अरबी और तुर्की शब्दों की है। उसके बाद अंग्रेजी शब्दों की प्रचार-प्रसार दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है। कुछ शब्द अन्य भाषाओं में आए है।

'पुर्तगली- मेंज, कमीज, कमश और गिरजा आदि।
फांसीसी - प्लेटो, काजू और फेंक आदि।
रूसी - स्पुतनिक, बोदका और रुबल आदि।
जर्मन - किंडरगार्टन, ऊमलाउत और ऐबलाउत आदि।
मलय - काकातूआ, खोपडा (नारियल) साबूदाना।
चीनी – चा और लीची आदि।
जापानी - लंचा, शिक्षा, जुजुत्सू, हाराकिरी और येन आदि।

अंग्रेजी स्त्रोत से आए शब्द - अफसर, अर्दली, इंजन, इंजीनियर, कार, मोटर, डॉक्टर, कप, एड्वोकेट,पार्लीयामेंट, टेलीफोन, स्कूल, पेन और कंप्यूटर आदि।

फारसी स्त्रोत से आए शब्द - अनार, आसान, कद, शायरी, मरीज, बीमार, हलवा और जरूर आदि।

अरबी स्त्रोत से आए शब्द - अरबी के कुछ शब्द सीधे - संपर्क से हिन्दी में आए हैं तो

कुछ फारसी के माध्यम से आए है ।

उदा: अमीर, इम्तहान, वकील, मुकदमा, इमारत, जवाहरत, हिरासत, रिश्वत, -- आदि ।

तुर्की स्रोत से आए शब्द - तुर्की के कुछ शब्द सीधे तुर्की के संपर्क से आए और कुछ फारसी के माध्यम से । उदा - गलीचा, सराय, चेचक, वारूद, तोप, दारोगा, गनीमत, काबू, तलाश और बहादुर आदि ।

अरबी, फ़ारसी तुर्की की क़, ख़, ग़, ज़तथा फ़ ध्वनियाँ हिन्दी में क, ख , ग, ज और फ - ध्वनियों के समान ही प्रयुक्त की जा रही हैं ।

उदाः क़द (फा) - कद् (हिन्दी)

क़लम (अं) - कलम

ख़बर (अ.) - खबर

ख़ान (तु) - खान /खाँ आदि ।

इस प्रकार हिन्दी भाषा देश-काल की आवश्यकताओं के अनुरूप, विभिन्न स्रोतों से अनेकानेक शब्दों को समय-समय पर अपने दायरे में समेटते हुए चली आई है । विभिन्न स्रोतों से ग्रहण किए शब्दों को अपनी प्रकृति के अनुरूप परिवर्तित – परिवर्धित किया और अपने शब्द - समूह की सीमा के विस्तृत कर दिया है । अंतर्राष्ट्रीय संपर्क बढ़ने के कारण आज भी हिन्दी भाषा के शब्द-समूह में नव-विकसित शब्द आ रहे हैं ।

8.6 3. रूपांतर या व्याकरण के आधार पर :

रूपांतर के आधार पर शब्द के दो भेद किए जाते हैं- विकारी शब्द और अविकारी शब्द ।

जिन शब्दों के रूप लिंग, वचन और कारक आदि के कारण परिवर्तित हो जाते हैं उन्हें विकारी शब्द कहते हैं । जैसे : संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया आदि ।

संज्ञा : किसी प्राणि, स्थान, वस्तु या भाव के नाम को संज्ञा कहते है ।

सर्वनाम : संज्ञा की आवृत्ति को रोकने के लिए उसके स्थान पर जिस शब्द का प्रयोग किया जाता है, उसे सर्वनाम कहते हैं ।

विशेषण : किसी संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता प्रकट करने वाले शब्द को विशेषण कहते है ।

विशेषण जिस शब्द की विशेषता प्रकट करता है, उसे विशेष्य कहते है ।

क्रिया : जिस शब्द अथवा शब्द - समूह से किसी काम को करना या होना ज्ञात हो उसे क्रिया कहते हैं ।

जिन शब्दों पर लिंग, वचन और कारक इत्यादि का कोई प्रभाव नहीपडता उन्हें अविकारी शब्द कहते हैं । जैसे - क्रिया विशेषणा, संबंध बोधक, समुच्चाय बोधक और विस्मयादि बोधक आदि ।

क्रिया विशेषण:जिन अव्ययों से क्रिया की विशेषता प्रकट होती है उसे क्रिया

विशेषण कहते हैं।

संबंध बोधकः जो संज्ञा या सर्वनाम से मिलकर उनका सम्बन्ध दूसरे शब्दों के साथ जोड़ते हैं, उन्हें संबंध बोधक कहते हैं।

समुच्चयबाधक या योजक: दो शब्दों, वाक्यांशों अथवा वाक्यों को मिलानेवाले अविकारी शब्द, समुच्चयबोधक (या योजक) कहलाते हैं।

विस्मयादि बोधक: जिन अव्ययों से आश्चर्य, आनंद, संबोधन तिरस्कार, भय, शोक, दुःख और क्रोध आदि के भाव प्रकट हो उन्हें विस्मयादि बोधक कहते हैं।

8.6.4. प्रयोग के आधार पर शब्दों का वर्गीकरण :

प्रयोग के आधार पर शब्दों के तीन प्रकार होते हैं- सामान्य शब्द, अर्थ - पारिभाषिक शब्द तथा पारिभाषिक शब्द।

(1) सामान्य शब्द : सामान्य शब्द की श्रेणी में उन शब्द को रखा जा सकता है जिनका इस्तेमाल हम दिन - प्रतिदिन के सामान्य व्यवहार में करते हैं। जैसे- वस्तुओं, स्थानों और संबंधों आदि के वाचक शब्द। इनका संबंध मूलतया मूर्त वस्तुओं, स्थितियों अथवा अवस्थाओं से होता है। किताब, कलम, घर ,विद्यालय और बुढ़ापा आदि सामान्य शब्द है।

(2) अर्थ-पारिभाषिक शब्द: अर्थ पारिभाषिक शब्द वे है जो कभी तो पारिभाषिक शब्द के रूप में प्रयुक्त होते हैं और कभी सामान्य शब्द के रुप में। अर्थात् सामान्य व्यवहार में प्रयुक्त होने के अलावा, किसी क्षेत्र-विशेष के संदर्भ में भी उनका इस्तेमाल पारिभाषिक शब्द के रुप में किया जाता है। उदाहरण के लिए 'आदेश, दावा और रस आदि।

(3) पारिभाषिक शब्द : केवल विशिष्ट विषयों - शास्त्र, विज्ञान, शिल्प और कला आदि में विशिष्ट अर्थ में प्रयुक्त होते हैं, जिन्हें पारिभाषिक शब्द कहते हैं। पारिभाषिक शब्दों के पीछे कोई विचार या संकल्पना जुडी होती है। ये -वे शब्द होते हैं जिनकी निश्चित परिभाषा दी जा सके, अर्थात् जिनकी सीमाएँ बाँध दी गई हो। जिनका किसी क्षेत्र - विशेष में एक निश्चित अर्थ सीमित कर दिया गया हो और उस क्षेत्र - विशेष में उन्हें उसी अर्थ में प्रयोग किया जाता हो, किसी अन्य अर्थ में नहीं। जैसे एक शब्द है - "आयकर"। इस शब्द का प्रयोग किसी व्यक्ति अथवा संस्था की आय कर पर सरकार द्वारा वसूल किए जाने वाले 'कर" के अर्थ में किया जाएगा। सरकार से भिन्न किसी संस्था द्वारा वसूल की जाने वाली राशि आयकर नही कहलाएगी। अत: उनकी परिभाषा की जा सकती हैं इसलिए उन्हें "पारिभाषिक शब्द भी कहा जाता है। वस्तुतः 'पारिभाषिक' शब्द हिन्दी में ज्यादा प्रचलित है। खास तौर पर शब्दावली के साथ पारिभाषिक विशेषण ही अधिक चलता है।

8.7. शब्द परिवर्तन के कारण :

शब्द परिवर्तन के कारण दो प्रकार के होते हैं।

1. प्राचीन शब्दों का लोप।
2. नवीन शब्दों का आगमन।

प्राचीन शब्दों का लोप से अर्थ है कुछ शब्द प्राचीन काल में विविध रीति-

रिवाज,कर्मकाण्ड आदि में प्रयोग करते थे जो आज नकारात्मक बन बैठे। उदा: यज्वा और अहीन आदि प्राचीन काल में यज्ञ आदि क्रतुओं में प्रयोग करते थे आज लुप्त हो गए। उसी प्रकार खान-पान और रहन-सहन आदि में भक्त, अपूप, सक्तुक आदि का प्रचार चलता था। आज इनमें परिवर्तन आकर भात, हाबुस, पुआ आदि रूप प्रचलन हो रहे हैं। इसी प्रकार पुराने जमाने के गहने आदि रूप अन्य श्रृंगार साधन आज लुप्त जा रहे हैं। इसी प्रकार ध्वनि परिवर्तन होते-हाते, कभी-कभी शब्द इतने घिस जाते हैं कि उन्हें समूह से निकल जाना पड़ता है और उसके स्थान पर भाषा में प्राकृत तथा अपभ्रंश शब्द आ जाते हैं। कभी-कभी कठिन शब्दों के उच्चारण को आसान बनाकर उच्चरित किया जाता है। उदा : सहस्र – शत।

नवीन शब्दों का आगमन : भाषा सतत परिवर्तनशील होने के कारण जन- संपर्क में अनेक नवीन शब्द आ जाते हैं।

अ) सभ्यता का विकास : सभ्यता के विकास के साथ-साथ विविध नवीन वस्तुओं का निर्माण होता है। उन वस्तुओं के नये-नये नाम भी अविष्कृत होते हैं। उदा: नलकूप (जिस कुएँ से नल का पानी निकलता है)

आ) चेतना : स्वतंत्रता के पश्चात भारत के प्रशासन विधान में अनेक परिवर्तन आ गये हैं। उनके साथ-साथ अंग्रेजी और अन्य भाषाओं के भी कुछ शब्द आ गये हैं।

उदा : कलक्टर - जिलाधीश

आफिस - कार्यालय

अफसर - अधिकारी

इसी प्रकार उर्दू से भी हिन्दी में कुछ शब्दों का आगमन हुआ है – अमीना, वकील, तहसील और हुजूर। ये शब्द चार - पाँच सदियों से हिन्दी में प्रचलित होते आ रहे हैं।

इ) भिन्न भाषा-भाषी शब्दों या क्षेत्रों का संपर्क भारत में अरब, ईरानी तथा अंग्रेजी आदि लोग आये थे। वे लोग अपने साथ अपनी - अपनी भाषाओं के शब्द भी साथ लाये।

उदा : लेखिनी - पेन (अंग्रेजी)

कलम (फ़ारसी)

गृह - होम (अंग्रेजी)

ई) दृश्यात्मकता : कुछ चीजों के विशिष्ट रुप में दिखाई देने के कारण कभी-कभी कुछ शब्द उनकी दृश्यात्मक अनुभूति की अभिव्यक्ति के लिए आ जाते हैं।

उदा : बगबग, जगमग और चमचम आदि।

3) ध्वन्यात्मकता: कुछ वस्तुओं की ध्वनि के कारण भी नये शब्द उन ध्वनियों के आधार पर आ जाते हैं।

मोटर - ध्वनि के कारण पो-पो, कुत्ते भौंकने के कारण, भौ- भौ, कौए के पुकारने के कारण का - का आदि शब्द हिन्दी में आये है।

ऊ) नवीनता और साम्य लाने के लिए : नवीनता और साम्य लाने के लिए कभी - कभी लोग नये शब्द लाते है और वे शब्द प्रचार में आ जाते हैं।

उदा: पाश्चात्य के साम्य में पूर्वेच्च शब्द आ गया है।

पिंगल के आधार पर डिंगल शब्द आया है।

8.8. सारांश:

हिन्दी का शब्द भंडार बहुत व्यापक है और कई स्रोतों से हिन्दी में शब्द आगए हैं। हिन्दी की अपनी शब्दावली के अतिरिक्त, अरबी, फ़ारसी, तुर्की और अंग्रेजी से बड़ी संख्या में हिन्दी में शब्द आ गाए हैं। हिन्दी के अपने शब्दों में भी कई कारणों से परिवर्तन आए है। शब्द परिवर्तन के कारण अनेक प्रकार है। इस इकाई में सभी विषयों का विस्तार से अध्ययन किया गया है।

बोध प्रश्न :

1. शब्द किसे कहते हैं? वर्ण और शब्द में क्या अंतर है। शब्द निर्माण के विभिन्न स्रोतों के बारे में लिखिए।
2. शब्द विज्ञान किसे कहते - सविस्तार लिखिए।
3. हिन्दी शब्द समूह के बारे में लेख लिखिए।

संदर्भ ग्रंथ:

1. हिन्दी भाषा - डॉ. भोलानाथ तिवारी
2. भाषा विज्ञान - डॉ. भोलानाथ तिवारी
3. हिन्दी भाषा और लिपि - धीरेंद्र वर्मा
4. सामान्य भाषा विज्ञान - बाबूराम शर्मा

डॉ. मंजूला

9. वाक्य विज्ञान- वाक्य गठन में परिवर्तन के कारण

उद्देश्य :

भाषिक इकाइयों में वाक्य अधिक महत्वपूर्ण इकाई है जिसके माध्यम से विचारों का पूर्ण संप्रेषण संभव हो पाता है। हिन्दी भाषा में जो वाक्य प्रयुक्त होते हैं वे विविध प्रकार के हैं। वाक्य विज्ञान की विश्लेषण प्रक्रिया के आधार पर हिन्दी वाक्यों का विश्लेषण सोदाहरण प्रस्तुत करना इस इकाई का प्रमुख उद्देश्य है।

इकाई- **IX**

9.1. प्रस्तावना

9.2. वाक्य की परिभाषा

9.3. वाक्य विज्ञान का अध्ययन क्षेत्र

9.4. वाक्य के प्रकार

9.4.1. आकृतिमूलक वर्गीकरण के अनुसार

9.4.2. रचना के आधार पर

9.4.3. भाव या अर्थ के आधार पर

9.4.4. क्रिया के आधार पर वाक्य के प्रकार

9.5. वाक्य गठन के परिवर्तन के कारण

9.5.1. अन्य भाषाओं का प्रभाव

9.6.सारांश

9.1. प्रस्तावना :

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। जिस समाज में रहता है, वहाँ उसे अपने भावों की अभिव्यक्ति के लिए 'शब्द समूह' की आवश्यकता पड़ती है। 'शब्द-समूह' सार्थक शब्दों के योग से अपने भावों को इस प्रकार से अभिव्यक्त करने का, मनुष्य के माध्यम से प्रयत्न करता है कि वह पूर्ण अर्थ संप्रेषित कर सके। भाषा संप्रेषण का सशक्त तथा अनिवार्य माध्यम है। भाषा की संप्रेषणीयता को साध्य बनानेवाली भाषिक इकाइयों में वाक्य अधिक महत्वपूर्ण इकाई है। संप्रेषण का सामान्य अर्थ होता है कि अपने मन के भावों और विचारों को दूसरों तक पहुँचाना। संप्रेषण दो प्रकार से होता है मौखिक और लिखित। ये दोनों प्रकार के संप्रेषण वाक्यों द्वारा ही संभव होता है। कभी-कभी हम एक ही वाक्य में पूरे भाव को अभिव्यक्त कर देते हैं तो कभी-कभी एक से अधिक वाक्यों में। भाव को समझने, समझाने के लिए कम से कम एक पूर्ण वाक्य की आवश्यकता होती है। वाक्य एक पदीय भी हो सकता है

। वाक्य कितना भी छोटा क्यों न हो पर संप्रेषण के लिए आवश्यक भाषिक इकाई है। इस वाक्य का विस्तृत अध्ययन, विश्लेषण वाक्य विज्ञान के अंतर्गत किया जाता है। हिन्दी भाषा का वाक्य वैज्ञानिक स्तर पर विश्लेषण से संबंधित इस इकाई में वाक्य की परिभाषा के साथ हिन्दी के प्रमुख वाक्य प्रकारों का विवेचन किया जा रह है।

9.2. वाक्य की परिभाषा :

भाषा में संप्रेषण की दृष्टि से वाक्य की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए भाषा विज्ञानियों ने वाक्य को विभिन्न रीति से परिभाषित किया है।

1. वाक्यंस्यात् योग्यता कांक्षासत्ति युक्ति पदोच्चय :
- आचार्य - विश्वनाथ
2. अर्थकत्वादेकवाक्यंसाकांक्षचेध्दिमागेस्थात्
- भीमांसकजैमिनी।
3. "पूर्ण अर्थ की प्रतीति कराने वाले शब्द - समूह को" वाक्य कहते हैं। - पतंजलि

4. "वाक्य ही भाषा की न्यूनतम पूर्ण सार्थक सहज इकाई है।"
भातृहरी - वाक्यदीयब्रह्मकाण्ड
5. वाक्य भाषा की सबसे छोटी इकाई है जो किसी भाव को पूर्णता में व्यक्त करने की क्षमता रखती है।
6. वाक्य रूपिमों का वह उपक्रम है जो किसी कथ्य या कथ्यांश के पूर्ण अर्थ की प्राप्ति कराता है।
7. भाषा की न्यूनतम पूर्ण सार्थक इकाई वाक्य है।
8. वाक्य भाषा की वह जहज इकाई है जिसमें एक या अधिक शब्द होते हैं तथा जो अर्थ की दृष्टि से पूर्ण हो या अपूर्ण, व्याकरणिक दृष्टि से विशिष्ट संदर्भ में अवश्य पूर्ण होते हैं, साथ ही उसमें प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कम-से-कम एक समापिका क्रिया अवश्य होती है।
9. आपस में मिलकर संयुक्त इकाई बनकर वाक्य में प्रयुक्त होने वाले पद - समूह को पदबंध कहा जाता है और पदबधों के मेल से बनी रचना वाक्य कहलाता है।

इन परिभाषाओं से वाक्य के बारे में कुछ तथ्य निकलते हैं –
वाक्य भाषा की एक ऐसी इकाई है जो एक पूर्ण विचार या भाव को प्रकट करता है।

• वाक्य एक या एक से अधिक शब्द समूहों से बनी इकाई है जो अपने में पूर्ण तथा स्वतंत्र प्रयोग के योग्य होता है। ये पद समूह वाक्य में एक निश्चित क्रम या नियम के अनुसार आते हैं।

• वाक्य कभी - कभी अर्थ की दृष्टि से अपूर्ण भी हो सकता है पर व्याकरण की दृष्टि से सदैव पूर्ण होता है।
• व्याकरण की दृष्टि से वाक्य भाषा की सबसे बड़ी इकाई है।

9.3. वाक्य विज्ञान का अध्ययन क्षेत्र :

वाक्य विज्ञान में वाक्य - गठन की प्रक्रिया का वर्णनात्मक, तुलनात्मक, तथा ऐतिहासिक दृष्टि से अध्ययन किया जाता है।

वर्णनात्मक में किसी भाषा में, किसी एक युग में प्रचलित वाक्य गठन का अध्ययन किया जाता है।

तुलनात्मक तथा 'व्यतिरेकी' में दो या दो से अधिक वाक्य गठन का अध्ययन कर उसके साम्य और वैषम्य को देखा जाता है।

ऐतिहासिक भाषा विज्ञान में एक भाषा को विभिन्न कालों के परिप्रेक्ष्य में अध्ययन कर देखा जाता है। पुन: उसका ऐतिहासिक विवरण प्रस्तुत किया जाता है।

हिन्दी भाषा के वर्तमान कालीन वाक्य विचार वर्णनात्मक वाक्य विज्ञान के अंतर्गत किया जाता है। यह अध्ययन प्रक्रिया वैज्ञानिक विश्लेषण की दृष्टि से की जाती है। इसमें पद समूहों को वाक्य बनाने के नियम, पद समूहों के परस्पर संबंध वाक्यों के प्रकार, वाक्य के आवश्यक विविध अंग या तत्व आदि का अध्ययन होता है। व्याकरणिक कोटियाँ संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया और क्रिया विशेषण आदि की भी अध्ययन वाक्य विज्ञान की सीमा में आता है।

इन सब के आधार पर स्थूल रूप में दो बिन्दु उभरकर आते हैं –
1. वाक्य शब्दों का समूह है।
2. वाक्य पूर्ण होता है।

प्रथम बिन्दु के आधार पर : वाक्य एक से अधिक शब्दों का होता है किन्तु कभी - कभी एक ही शब्द वाक्य की पूर्णता को दर्शा देता हैं - जैसे पानी, रोटी, पुस्तक साम्य, आदि। सम्पूर्ण वाक्य, एक शब्द में सिमटकर अर्थ की पूर्णता का संकेत दे देता है।

द्वितीय बिन्दु के आधार पर : कभी - कभी अर्थ की दृष्टि से वाक्य अपूर्ण होता है। जैसे दो व्यक्ति बातचीत कर रहे हों। एक अपनी बात कह देता है दूसरा मध्य में ही एक वाक्य कह देता है कि – "अच्छा वह उससे कब मिला ? ऐसी स्थिति में वाक्य पूर्ण नहीं होता, वहाँ उत्तर की भी अपेज्ञा बनी रहती है। वाक्य पूर्ण होते हुए भी अपूर्ण होता है और कहीं अपूर्ण

होने पर भी पूर्णता का अर्थ व्यक्त करता है –

जैसे – हाँ! चलिए, नहीं, क्यों ? जाइए , आइए आदि पूर्ण वाक्य कह जायेंगे।

अच्छा वह बात कह देना। नहीं। वह स्वयं ले आयेगा। उसने क्या कहा था। आदि वाक्यों में कुछ न कुछ अपेक्षित हैं। इसलिए अपूर्ण हैं।

यदि उपर्युक्त आशय को परिभाषा में बाँधते हुए यह कहा जाये तो उचित होगा कि –

"वाक्य, भाषा की वह सहज इकाई है जिसमें एक या अधिक, शब्द होते हैं। अर्थ कीदृष्टि से पूर्ण या अपूर्ण किन्तु व्याकरणिक दृष्टि से विशिष्ट संदर्भ में पूर्ण तथा प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में, एक क्रिया से युक्त होकर पूर्ण वाक्य का आभास देते हैं"।

इस परिभाषा को वाक्य के संदर्भ में इस प्रकार समझा जा सकता है:-

1. भाषा की सहज इकाई वाक्य है।
2. वाक्य में एक व एक से अधिक शब्द हो सकते हैं।
3. वाक्य में अर्थ की पूर्णता हो भी सकती है व नहीं भी।
4. वाक्य व्याकरण की दृष्टि से पूर्ण होते हुए भी कभी-कभी संदर्भानुसार भी पूर्ण होता है।
5. वाक्य में समापिका क्रिया आवश्यक है। प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से।

विशेषताएँ

वाक्य में पाँच महत्वपूर्ण बातें हैं जिनका ध्यान रखा जाना आवश्यक हैं।

1. वाक्या सार्थक हो अर्थात् शब्दों का सार्थक चयन हो। जैसे - भूख लग रही हैं। पुस्तक पढ़नी चाहिए। हाँ, जाऊंगा।
2. योग्यता :- अर्थात वाक्य में शब्दों का सार्थक, संगति आवश्यक है। प्रसंगानुकूल भाव का बोध हो। उदा: गुरु ही हमारा मार्ग दर्शन कर सकता है।
3. आकांक्षा: - मनुष्य ऐसे वाक्यों को सुनना चाहता है जो अर्थ को पूर्ण रूप से अभिव्यक्त कर सकें व सम्प्रेषित भी।
4. समीपता: - वाक्य के शब्दों का सही चयन व सही संगति आवश्यक है।
5. व्याकरणिक दृष्टि से वाक्य में एक रुपता आवश्यक है इसे अन्विति (concordance) कहते हैं। जैसे - पैड हरा - भश है। नदी बह रही है आदि। इनमें व्याकरणिक एक रुपता है।

वाक्य के अंग : वाक्य के दो अंग होते हैं –

1.उद्देश्य (subject) - का अर्थ है वाक्य का वह अंग जिसके बारे में वाक्य के शेष अंग के लिए कुछ एक कहागया है। जैसे – आम खाया, पुस्तक पढ़ी - यहाँ आम, पुस्तक "केन्द्रीय – शब्द" है उसके अर्थ को पूर्ण करने के लिए खाया तथा पढ़ी का प्रयोग किया गया है और अर्थ

को विस्तार दिया गया है। अर्थात केंद्रीय शब्द के अर्थ का विस्तार "खाया व पढ़ी" में हुआ।

2. **विधेय (Predicate)** वाक्य का वह अंश है जो उद्देश्य के अर्थ का खुलासा करें। अर्थात इसमें क्रिया का विस्तार होता है। जैसे – सरला अभी स्कूल से आयी है, इसमें सरला उद्देश्य अर्थात् केंद्रीय संज्ञा है, "अभी स्कूल से आयी है" - विधेय है।

9.4. वाक्य के प्रकार :

भाषा वैज्ञानिकों में भाषाओं का वर्गीकरण चार प्रकार किया है।

9.4.1. आकृतिमूलक वर्गीकरण के अनुसार वाक्य दो प्रकार के हैं।

अ) अयोगात्मक : इसमें शब्दों का योग नहीं रहता है। वाक्य में शब्द अलग - अलग रहते हैं। दूसरी विशेषता यह है कि सभी शब्दों का स्थान निश्चित रहता है। सम्बन्ध तत्व भी शब्दों के स्थान को प्रभावित नहीं कर पाता। शब्दों में कोई परिवर्तन नहीं किया जाता इसलिए सम्बन्ध का पता शब्दों के स्थान से ही चलता है। चीनी भाषा अर्थात एकाक्षर में आयोगात्मक भाषा का प्रयोग अधिक होता है। संस्कृत, ग्रीक आदि प्राचीन भारोपीय भाषाएँ श्लिष्ट योगात्मक थीं, किन्तु उनसे विकसित अंग्रेजी, हिन्दी और आधुनिक भाषाएँ वियोगात्मक हो गई हैं। वाक्य का पदक्रम बदलने से अर्थ भेद हो जाता है। स्थान परिवर्तन से अर्थ परिवर्तन होता है।

उदा : 1. Suresh killed mohan

2. Mohan killed Suresh

3. सीता राधा को बुलाती है।

4. राधा सीता को बुलाती है।

आ) योगात्मक :-

प्रश्लिष्ट - योगात्मक भाषा के नाम से इसे सम्बोधित किया जाता है। इन वाक्यों में सभी शब्य मिलकर एक बड़ा शब्द बन जाते हैं।

जैसे - नीनकक - मैं मांस खाता हू (मेक्सिकन)

क = खाना, नकल = माँस, नवल = मैं

इन वाक्यों का विश्लेषण सहज नहीं है। इस प्रकार का संगठन प्रश्लिष्ट योगात्मक कहलाता है। योगात्मक के प्रश्लिष्ट, अश्लिष्ट और श्लिष्ट - तीन प्रकार होते है।

9.4.2. रचना के आधार पर वाक्य के प्रकार :

रचना की दृष्टि से वाक्य के तीन भेद किए जाते हैं:

1. सरल वाक्य (या साधारण वाक्य)
2. मिश्रित वाक्य
3. संयुक्त वाक्य

9.4.2.1. सरल वाक्य की संरचना उद्देश्य एवं विधेय को दृष्टि में रखकर की जाती है। जैसी – "राधा स्कूल गयी" वाक्य में राधा "उद्देश्य" है और स्कूल गयी 'विधेय' है। उद्देश्य अर्थात केन्द्रीय भाव है और 'विधेय'केन्द्रीय - भाव का विस्तार है। इस प्रकार सरल वाक्य उसे कहते हैं जिसमें केवल एक ही उद्देश्य और एक ही विधेय होता है।

सरल वाक्य के प्रकार : सरल वाक्य के विभिन्न प्रकारों पर विचार करने से पहले वाक्य को बनाने वाले विभिन्न घटकों या अवयवों की जानकारी प्राप्त करना आवश्यक है। वाक्य घटकों की पहचान शब्द वर्गों के आधार पर (संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया, विशेषण और क्रिया विशेषण आदि) प्रकार्य के आधार पर किया जाता है। सरल वाक्य को पाँच भागों में विभाजित किया जा सकता है।

अ) अकर्मकीय वाक्य: जिस वाक्य में कर्म पद नहीं होता उसे अकर्मक वाक्य कहते हैं। इसमें केवल कर्ता और क्रिया होते हैं।

उदा : सौरभ / हँसता है। (सौरभ - कर्ता, हँसता है - अकर्मक क्रिया)

आ) एक कर्मकवाक्य: जिस वाक्य में कर्ता और क्रिया के साथ एक कर्म पदबंध भी होता है उसे एक कर्मक या सकर्मक वाक्य कहते हैं।

उदा : शीला / सेब/ खाती है। (शीला - कर्ता, सेब-कर्म, खाती है - सकर्मक क्रिया)

इ) द्विकर्मकीय वाक्य: जिस वाक्य में कर्ता और क्रिया के साथ दो कर्म पदबंध होते हैं, उस वाक्य को द्विकर्मक वाक्य कहते हैं। इन दो कर्म पदबंधों में एक गौण कर्म होता है और दूसरा प्रधान कर्म।

उदा: रवि / मंजु को / चिट्टी / लिखता है।

रवि - कर्ता, मंजू को – कर्म (गौण) चिट्टी - कर्म (प्रधान)

लिखता है - सकर्मक किया।

ई) कर्तृपूरकीय वाक्य: सामान्यतः वाक्य की क्रिया यह निश्चित करती है कि वाक्य में कितने घटक होंगे और कौन-कौन से घटक होंगे। अर्थात वाक्य में कर्म - पदबंध होगा या नहीं, पूरक होगा या नहीं आदि।

उदा : राम चलता है।

रमेश हिन्दी का छात्र है।

इन वाक्यों में - राम कर्ता है और चलता है क्रिया।

रमेश कर्ता है और चलता है – क्रिया। पर इस वाक्य का पूरा भाव समझने के लिए कुछ 'पूरक शब्द'की आवश्यकता पड़ती है जिससे कर्ता के संबंध में पूरी जानकारी प्राप्त होती है।

इस वाक्य में 'हिन्दी का छात्र'पूरक है जो वाक्य के भाव को पूरा करने में सहायक है। अत: जिस वाक्य में कर्ता और क्रिया के साथ कर्ता की विशिष्टता का बोध कराने वाला एक पूरक की अपेक्षा रहती हैं उसे कर्तृपूरकापेक्षी वाक्य कहा जाता है।

3) कर्मपूरकीय वाक्य:

जिस वाक्य में कर्ता, क्रिया और कर्म के साथ कर्म की विशिष्टता का बोध करानेवाला एक पूरक पदबंध की भी आवश्यकता या अपेक्षा होती है उसे कर्मपूरकापेक्षी वाक्य कहा जाता है।

उदा : मैं साधु को डॉक्टर समझता था।

प्रसाद जी के नाटक ऐतिहासिक हैं।

9.4.2.2. मिश्र वाक्य और उसके प्रकार :

मिश्र वाक्य उसे कहते हैं जिसमें एक से अधिक सरल वाक्य इस प्रकार से जुड़े होते हैं कि उनमें एक वाक्य प्रधान होता है और बाकी उस पर आश्रित होते हैं।

उदा : 1.जीवन में प्रति आस्था है इसलिए कर्म करता हूँ तथा उसका फल पाता हूँ।
इस वाक्य में 'जीवन के प्रति आस्था है' - प्रधान वाक्य है और "इसलिए कर्म करता हूँ, तथा उसका फल पाता हूँ।" आश्रित वाक्य हैं।
2. पिताजी ने कहा कि मैं कल रात नहीं सो सका।

पिताजी ने कहा – प्रधान वाक्य

कल रात नहीं सो सका कि मैं- आश्रित वाक्य

3. वह छात्र उत्तीर्ण हो जाएगा जो परिश्रम करेगा।

वह छात्र उत्तीर्ण हो जाएगा – प्रधान वाक्य

जो परिश्रम करेगा - आश्रित वाक्य।

इस प्रकार प्रधान या स्वतंत्र वाक्य (उपवाक्य) में मुख्य कथन होता है और उसका समर्थन या विस्तार या पूर्ति आश्रित उपवाक्य करता है। उपवाक्य भी दो प्रकार होते हैं - प्रधान उपवाक्य (Principleclause) आश्रित उपवाक्य (subordinate clause)।

किसी वाक्य में उपवाक्य आश्रित या गौण न होकर प्रधान हो उसे प्रधान उपवाक्य कहते है।

उदा : राम परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ है, क्यों कि उसने अच्छा पढ़ा इस वाक्य में

राम परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ – प्रधान उपवाक्य है।

क्यों कि उसने अच्छा पढ़ा – आश्रित उपवाक्य है।

आश्रित उपवाक्य वह है जो प्रधान न होकर गौण अथवा दूसरे वाक्य पर आधारित होता है।

मिश्रवाक्य के प्रकार : मिश्रवाक्य में प्रयुक्त मुख्य (प्रधान) उपवाक्य तथा गौण उपवाक्य का मेल रहता है। अर्थात के लिए मुख्य वाक्य पर आश्रित रहने वाले उपवाक्य के पहले 'कि', 'जो', 'जिस', 'जेब', 'जहां', 'अगर' आदि समुच्चय अव्ययों का प्रयोग होता है। विभिन्न प्रकार के समुच्चय अव्ययों के साथ जुड़ने की गौण वाक्य की इस वशेषता के कारण पूरे वाक्य में उसकी भूमिका या प्रकार्य भी प्रभावित होता है। मुख्य उपवाक्य के साथ गौण उपवाक्य के संबंध का स्वरूप भी इस विशेषता के आधार पर ही निर्धारित होता है। गौण उपवाक्यों की

इन्हीं विशेषताओं को आधार मानकर मिश्रवाक्य के तीन भेद किए गए है -

1. संज्ञा उपवाक्य - युक्त मिश्रवाक्य

२. विशेषण उपवाक्य – युक्त मिश्रवाक्य

3. क्रिया विशेषण उपवाक्य - युक्त मिश्रवाक्य

1. संज्ञा - उपवाक्ययुक्तमिश्रवाक्य: जो उपवाक्य, वाक्य में संज्ञापद का काम करते हैं उन्हें संज्ञा उपवाक्य कहते हैं। वाक्य में संज्ञा पद कर्ता एवं कर्म दोनों रूपों में प्रयुक्त हो सकते है। संज्ञा उपवाक्य जिस वाक्य में होता है उसे संज्ञा उपवाक्य से युक्त मिश्रवाक्य कहा जाता है।

उदा: यह सच है कि कल मैं बारिश में भीगा था।

पिताजी ने कहा कि कल रमेश शिमला जा रहा है।

चाचाजी ने कहा कि आज वे नाश्ते में केवल फल लेंगे।

क्या आप जानते हैं. यह किसका छाता है।

इस में 'कि'को लोप हुआ है, फिर भी भाव वही है। अक्सर संज्ञा उपवाक्य के पहले समुच्चय बोधक अव्यय 'कि' का प्रयोग होता है।

2. विशेषण उपवाक्य - युक्त मिश्रवाक्य :

विशेषण - उपवास्यमिश्रवाक्य में वही काम करता है जो सरल वाक्य में विशेषण – शब्द करता है। यह मिश्रवाक्य के मुख्य वाक्य या प्रधान वाक्य में प्रयुक्त किसी संज्ञा की विशेषता अथवा उसकी व्याप्ति या फैलाव को सीमित करता है। विशेषण उपवाक्य के प्रारंभ में अकसर 'जो' या इसके किसी रुप (जिसका, जिसके आदि) का प्रयोग होता है।

उदा : 1. सुनील के पास एक घड़ी है जिसमें असली हीरे जड़े हैं।

2. बाहर एक लड़की खड़ी है जिसके लंबे बाल हैं।

3. मैं ने वह मकान बेच दिया जो पिछले साल खरीदा था।

विशेषण उपवाक्य के दो प्रकार होते है।

वर्णनात्मक विशेषण उपवाक्य : इसमें संज्ञा के रुप, गुण या प्रकार्य का सामान्य वर्णन होता है। ये उपवाक्य मुख्य वाक्य की जिन संज्ञाओं की विशेषता बताते हैं, उनके साथ सामान्यतः 'एक', 'कोई', 'कुछ', 'पैसा' आदि संबंध वाचक सर्वनाम शब्द का प्रयोग होता है। कभी-कभी इनमें से किसी का भी प्रयोग नहीं होता।

उदा : यह एक समस्या है जो किसी से हल नहीं किया जा सकता।

कुछ अनुभव उपयोगी होते हैं जिससे हमें सीख मिलती है।

निर्देशात्मक विशेषण उपवाक्य : इस कोटि के उपवाक्य में संज्ञा की व्याप्ति या फैलाव को निर्दिष्ट करने का बोध होता है। निर्देशात्मक विशेषण उपवाक्य, मुख्य उपवाक्य की जिन संज्ञाओं की व्याप्ति का निर्देश कर रह है उनके साथ, 'वह', 'वे', 'उन', संबंध वाचक शब्द का प्रयोग होता है।

उदा: वह आदमी कौन है जो आपको देखकर हँस रहा है।
मैंने वह गाडी बेच दी जो दो साल पहले खरीदी थी।

3. क्रिया विशेषण उपवाक्य युक्त मिश्रवाक्य:

क्रिया विशेषण उपवाक्य सामान्यतः मुख्य वाक्य की क्रिया की विशेषता को सूचित करता है। क्रिया की विशेषता सूचित करने से तात्पर्य यह है कि उस क्रिया से बोध होने वाले-कार्य- व्यापार के घटित होने के समय, स्थान, रीति, परिणाम और कारण आदि से संबंधित जानकारियाँ देना है।

उदा : 1. जब हम दिल्ली में रहते थे तब लीला हमारी पडोसी थी। (समय को सूचित करता है।)

2. जहाँ रमा रहती है वहाँ एक मंदिर भी है। (स्थान सूचक)

3. जैसे चित्रा नाचती है वैसा मालती नहीं नाचती। (रीति वाचक)

4. जितनी बारिश चिरापुंजी में होती हैं उतनी बारिश और कहीं नहीं होती। (परिणाम सूचक उपवाक्य)

जिस प्रकार क्रिया विशेषण केवल क्रिया की ही नहीं, बल्कि विशेषण और स्वयं क्रिया- विशेषता बताता है, उसी प्रकार क्रिया विशेषण उपवाक्य भी मुख्यवाक्य की क्रिया, किसी विशेषण और क्रियाविशेषण की विशेषण बताने का काम करता है।

उदा : उसका रंग इतना गोरा है कि उसे सभी विदेशी समझते हैं।
गाडी एसी तेज़ चल रही है जैसे हवा में उड रही हो।

क्रिया विशेषण उपवाक्य के आरंभ में अनिवार्य रूप से प्रयुक्त होनेवाले 'जब', 'जाँह', 'जैसा', 'जैसे' आदि को संबंधवाचक क्रियाविशेषण भी कहते हैं और सामान्यतः इसका दूसरा घटक (तब, तो, वाँह, वैसा, कि आदि) मुख्य वाक्य में रहता है और गौण विशेषण उपवाक्य को मुख्य वाक्य के साथ जोडता है। इन शब्दों को 'नित्यसंबंधी' शब्द कहते हैं।

सामान्यतः मिश्रवाक्य में संबंधवाचक क्रिया-विशेषण तथा नित्यसंबंधी शब्द जोड़े में ही आते हैं।

जैसे – जब – तब
इतना – कि
जितना – उतना
ऐसे – जैसे
जहाँ – तहाँ... आदि।

9.4.2.3. संयुक्त वाक्य और उसके प्रकार :

संयुक्त वाक्य उसे कहते हैं जिसमें दो या दो से अधिक सरल या मिश्रित वाक्य (उपवाक्य) स्वतंत्र रूप से योजक (समुच्छय बोधक अव्यय) शब्दों द्वारा जुड़ जाते हैं।

उदा : 1. सीता गाँव गई और दादी माँ को लेकर आई।

2. सूरज निकल रहा है और चिड़ियाँ चहचहा रही हैं।

इन में दो-दो उपवाक्य है।

(क) सीता गाँव गाई (ब) दादीमाँ को लेकर आई।

(क) सूरज निकल रहा है (ख) चिड़ियाँ चहचहा रही हैं।

इन उपवाक्यों को स्वतंत्र रूप से भी प्रयोग किया जा सकता हैं और वे अपने अर्थ की पूर्ति के लिए दूसरे वाक्य पर आश्रित नहीं है । ये उपवाक्य'और' योजक शब्द या समुच्चयबोधक अव्यय से जुड़े हैं। इस प्रकार के वाक्यों को संयुक्त वाक्य कहते हैं।

संयुक्त वाक्य में प्रयुक्त उपवाक्य अपने आप में स्वतंत्र या पूर्ण होते हैं और ये उपवाक्य एक विशिष्ट प्रकार के संबंध से आपस में जुड़े रहते है, इन्हीं अर्थ संबंधों के भेद के आधार पर संयुक्त वाक्य के चार प्रकार माने जाते हैं।

अ) संयोजक बोधक संयुक्त वाक्य।

आ) विभाजक बोधक संयुक्त वाक्य।

इ) विरोधवाची संबंध बोधक संयुक्त वाक्य।

ई) परिणामवाची संयुक्त वाक्य।

अ) संयोजक संबंध बोधक संयुक्त वाक्य :

जब संयुक्त वाक्य के दो उपवाक्यों से दो कार्य - व्यापारों या स्थितियों को जोड़ने का भाव प्रकट होता है तो उनके बीच संयोजक संबंध माना जाता है। संयोजक संबंध से जुड़े दो या अधिक उपवाक्यों से बने वाक्य संयोजक संबंध बोधक संयुक्त वाक्य कहलाता है।

संयोजक संबंध को दिखाने के लिए और, तथा, एवं, फिर, ही, नहीं- बल्कि आदि समुच्चयबोधक अव्ययों का प्रयोग किया जाता है।

उदा: 1. मनोज दिल्ली गया था और कल ही वापस आया।

2. स्त्री-शिक्षा केवल उसे साक्षर बनाने के लिए ही नहीं, बल्कि उसमें आत्मविश्वास और शक्ति भरने के लिए भी आवश्यक है।

जब किसी संयुक्त वाक्य में दो से अधिक उपवाक्य संयोजक संबंध से जुड़े हों तो केवल अंतिम दो उपवाक्यों के बीच ही 'और', 'तथा' आदि समुच्चयबोधक अव्ययों को लगाना चाहिए। जैसे -

उसने दरवाजा खोला, इधर- उधर देखा, सारे पैसे जेब में डाल दिए और दबे-पाँव बाहर चला गया।

आ) विभाजक संबंध बोधक संयुक्त वाक्य :

जब संयुक्त वाक्य के दो उपवाक्यों से दो कार्य- व्यापरों या स्थितियों में से एक को स्वीकारने का या दोनों को त्यागने का बोध होता है तो उनके बीच विभाजक संबंध माना जाता है । विभाजक संबंध से जुड़े दो या अधिक उपवाक्यों से बने संयुक्त वाक्य विभाजक संबंध बोधक संयुक्त वाक्य कहलाता है ।

विभाजक संबंध-सूचक अव्यय हैं - या, अथवा, या, न, नहीं तो, कहे, न कि --- आदि । जब दो से अधिक विकल्प का बोध करने वाले उपवाक्य विभाजन संबंध बोधक अव्यय 'या' 'अथवा' तथा 'कि' से जुड़ते समय, अंतिम दो उपवाक्यों के बीच ही उस अव्यय का प्रयोग क्रिया जाता है । शेष उपवाक्यों को कामा से अलग दिखाए जाते हैं । -

उदा : मैं आपको खुद आकर ले जाऊँगा, ड्राईवर के साथ गाड़ी भिजवा दूंगा या गाड़ी के साथ नौकर को भी भेजूंगा ।

(इ) विरोधवाचीसंबंधबोधक संयुक्त वाक्य:

जब संयुक्त वाक्य में प्रयुक्त दो उपवाक्यों के कार्य व्यापारों या स्थितियों के बीच विरोध या विरोधाभास का संबंध महसूस होता है तो उसे विरोधाभासी संबंध कहा जाता है । इससे जुड़े दो या अधिक उपवाक्यों से बने वाक्य विरोधवाची संयुक्त वाक्य कहलाते है ।

विरोधवाची संबंध को सूचित करने वाले समुच्चय बोधक अव्यय, लेकिन, किंतु, मगर, पर, बल्कि, आदि हैं ।

उदा : मैं ने बढ़ई को आज लाने को कहा लेकिन वह आया नहीं ।

(ई) परिणामवाचीसंयुक्तवाक्य :

जब संयुक्त वाक्य के दो उपवाक्यों में से एक से कार्य का बोध होता है और दूसरे से उसका परिणाम, तब उनके बीच परिणामवाची संबंध माना जाता है । परिणाम वाची संबंध सूचक अव्ययों से जुड़े उपवाक्यों से बना वाक्य परिणामवाची संयुक्त वाक्य कहलाता है।

उदा : बैंगलूर में लगातार बारिश हो रही है इसलिए वहाँ के
कालेजों को छुट्टी घोषित की गई है ।

संयुक्तवाक्य को उसके बनावट के अनुसार पुनः दो प्रकार माना जाता है ।

अ) पूर्णांग संयुक्त वाक्य: इसमें दो या दो से अधिक, उपवाक्य, बिना किसी परिवर्तन में केवल आवश्यक समुच्चयबोधक अव्यय या (कॉमा) अल्पविराम के प्रयोग से जुड़े रहते हैं । इस प्रकार के वाक्य में उपवाक्य, अपने पूर्ण रूप से वहाँ मौजूद रहते हैं ।

उदा : 1. मैं प्रिंसिपल से मिलने कालेज गया पर व छुट्टी पर थे ।

2. बच्चे पाठ पढ़ रहे थे, माँ उपन्यास पढ़ रही थी और दादीमाँटी.वी. देख रही थी ।

आ) अल्पांग संयुक्त वाक्य:

अल्पांग संयुक्त वाक्य में प्रयुक्त उपवाक्यों में दो में से किसी एक उपवाक्य के कुछ अंश का लोप हो जाता है । लोप होने पर भी अर्थ समझ में आ जाता है । क्योंकि, लुप्त अंश का वही अर्थ दूसरे उपवाक्य में परोक्ष रुप में मौजूद रहता है ।

उदा: हम चाय नहीं (पीएेंगे) लस्सी पीएेंगे ।

उसके पास सौंदर्य है और तुम्हारे पास गुण। (है)

इन वाक्यों में कोष्ठक में दिए गए अंश दोनों उपवाक्यों के लिए समान है। इसलिए एक उपवाक्य में इनका लोप हो गया है। फिर भी अर्थ बोध में कोई बाधा नहीं आ रही है।

9.4.3. अर्थ या भाव की दृष्टि से वाक्य के भेद :

अर्थ की दृष्टि से वाक्य के कई भेद किए जाते हैं। उनमें आठ प्रमुख है।
वाक्य मुख्य रूप से आठ प्रकार के अर्थ प्रकट कर सकते हैं –

विधान, निषेध, आज्ञा, इच्छा, संदेह, प्रश्न, संकेत, भाव आदि।

1. **विधानार्थक वाक्य:** जिस वाक्य से कुछ होने या करने का भाव व्यक्त होता है उसे विधानार्थक वाक्य कहते है।
उदा : छात्रावास की घंटी बजी। छात्र भोजन करने चले गए।

2. **निषेधसूचक या निषेधार्थक वाक्य:** जिस वाक्य से अस्वीकृत या किसी बात का न होना पाया जाए उसे निषेधार्थक वाक्य कहते।
उदा: मैं ने पुस्तक नही पढ़ी।
रात को मैं नहीं सो सका।

3. **आज्ञार्थक या आज्ञासूचक वाक्य:** जिस वाक्य से कोई आज्ञा या आदेश व्यक्त होता है उसे आज्ञार्थक वाक्य कहते है।
उदा: सब लोग खाना खा लें।
भगवान तुम्हें सुख एवं समृद्धि दे।

4. **इच्छासूचक या इच्छार्थक वाक्य:** जिस वाक्य से इच्छा, आशीर्वाद, अभिलाषा या शुभकामना आदि व्यक्त होती है उसे इच्छार्थक कहते हैं।
उदा: भगवान तुम्हें सुख एवं समृष्टि दे।
तुम परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाओ।

5. **संदेशर्थक या संदेहसूचक वाक्य:** जिस वाक्य से कार्य के होने में संदेह प्रकट हो उसे संदेहार्थक कहते हैं।
उदा : शायद वह चला गया होगा।
उसने पुस्तक पढ़ ली होगी।

6. **प्रश्नसूचकवाकय:** जिस वाक्य से प्रश्न का बोध हो प्रश्न किया जाए उसे प्रश्न सूचक कहते है।
उदा: क्या आप चले जाएँगे?
तुम्हारा भाई कहाँ गया ?

7. **संकेतसूचक या संकेतार्थक वाक्य:** जिस वाक्य से संकेत या शर्त का बोध होता तो उसे संदेह सुचक कहते है।
उदा: यदि आप समय पर पहुंचते तो रेलगाड़ी पकड़ लेते।

पानी बरसता तो फसल अच्छी होती।

8. **विस्मयार्थक या भावबोधक वाक्य:** जिस वाक्य से विस्मय, हर्ष, विषाद, घृण आदि भाव प्रकट हो उसे विस्मथार्थक वाक्य कहते।

उदा: वाह, क्या कहना है ?

अरे, इतना सुंदर ताजमहल।

9.4.4 : क्रिया के आधार पर वाक्य के प्रकार :

भाषा में क्रिया का प्रमुख स्थान है। वह प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रुप से वाक्य में विद्यमान रहती है। संस्कृत, लैहिन आदि बहुत सी- पुरानी भाषाओं में तथा बंगाल, रूसी आदि, आधुनिक भाषाओं में बिना क्रिया के भी वाक्य मिलते हैं। किन्तु मूलत: वाक्य क्रियायुक्त होता है। अत: क्रिया के होने या न होने के आधार पर वाक्य दो प्रकार के होते हैं।

1. **क्रियायुक्त वाक्य:** यह वाक्य में क्रिया होती है। संसार में अधिकांश भाषाओं के अधिकांश वाक्य क्रियायुक्त होते हैं।

उदा: राम आता है।

राम शहर गया।

2. **क्रिया विहीन वाक्य:**

यह वाक्य क्रिया विहीन होता है। संस्कृत, बंगला, रुसी आदि भाषाओं में यह प्रवृत्ति विशेष रूप से मिलती है। हिन्दी में कुछ समाचार पत्रों के शीर्षक क्रियाहीन होते हैं।

उदा: 1. देश की आजादी फिर खटई में।

2. कुतुबमीनार से कूदकर आत्महत्या।

कुछ लोकोक्तियों भी क्रियाविहीन रहती हैं।

1. हाथी के दाँत खाने के और दिखाने के और।

2. आँख के अन्धे नाम नयनसुख।

3. नाम दानवीर और निकला बड़ा कंजूस।

9.5. वाक्य गठन में परिवर्तन के कारण

वाक्य पदों के समूह की उस इकाई को करते हैं जो व्याकरणिक दृष्टि से पूर्ण है तथा जिसमें एक क्रिया अवश्य हो। वाक्य के बार में पाँच बातें ध्यान देने की हैं –

1. इसमें एक से अधिक पद (या शब्द) होते हैं।
2. वास्तविक प्रयोग में संदर्भ के अनुसार कभी-कभी गौण शब्दों को छोड़कर केवल उस एक, शब्द या उन कुछ शब्दों के वाक्य भी मिलते हैं। जो प्रश्न या विषय से सीधे संबद्ध होते हैं और जिनके आधार पर पूरे-वाक्य की कल्पना श्रोता या पाठक सहज ही कर

लेता है । वाक्य या लेखक भी पूरे वाक्य में से ही एक या कुछ पदों को वाक्य का उस प्रसंग में प्रतिनिधि मानकर प्रयोग करता है । 3. वाक्य व्याकरणिक दृष्टि से पूर्ण होता है, अर्थात् व्याकरणिक दृष्टि से उसमें कोई कमी नहीं रहती अतः ये वाक्य नहीं है । यदि प्रयुक्त वाक्य में अपेक्षित अव्ययों की कमी होती हैं तो आसन्न प्रसंग में उसकी पूर्ति हो जाती हैं ।

4.अर्थ या भाव की दृष्टि से वाक्य में पूर्णता हो भी सकती है, नहीं भी ।

5.हर वाक्य में एक क्रिया अवश्य होती है । इन विशेषताओं के साथ वाक्य में अनेक परिवर्तन भी आते हैं । उन परिवर्तनों के कारण अनेक होते हैं । इस इकाई में वाक्य परिवर्तन कुछ मुख्य कारणों के बारे में जान सकेंगे ।

5. यहाँ वाक्य परिवर्तन के कुछ मुख्य कारणों के बारे में जानेंगे ।

9.5.1. अन्य भाषाओं का प्रभाव :

किसी अन्य भाषा के प्रभाव से भाषा की वाक्य- रचना प्रायः प्रभावित होती है । मध्यकाल में मुगल दरबार की भाषा फ़ारसी थी । अत: उसका पठन-पाठन काफी होता था । इसी कारण उसका हिन्दी की काव्य-रचना पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ा । संस्कृत, अंग्रेजी आदि भाषाओं में एक वचन कर्ता के लिए कभी-कभी बहुवचन क्रिया प्रयुक्त होती है ।

उदा- अंग्रेजी में Teacher is coming. वाक्य में क्रिया का एकवचन में प्रयोग हुआ है ।

हिन्दी में अध्यापक एकवचन होने पर भी बहुवचन क्रिया का रूप आदर के नाम पर प्रयुक्त होता है । अध्यापक आ रहे हैं ।

इसी प्रकार,

मैं जाता हूँ । वस्तुत: यह वाक्य एकवचन सूचित करता है । लेकिन व्यवहार में आकर 'हम जाते हैं का प्रयोग हो रहा है । कभी-कभी औरतों के लिए भी पुलिंग क्रिया का प्रयोग करते हैं ।

उदा: भाभी आये है ।
मेले में औरतें भी आयेंगे ।

कभी-कभी फारसी और अंग्रेजी का प्रभाव वाक्य रचना पर एक साथ होता है ।
उदा- मैं चाहता हूँ कि आप परीक्षा में सफल हों । असल में यह 'कि'फ़ारमी से आया हुआ है । एक प्रकार से इस 'कि'पर अंग्रेजी का भी प्रभाव है । उदाहरण के लिए उपर्युक्त हिन्दी वाक्य का रुप अंग्रेजी में इस प्रकार है-I wish that (कि) you will get through the examination.

भाषा मानव की भावनाओं को क्या वक्त करने का माध्यम है। एक भाषा की भावना दूसरी भाषा में व्यक्त करने के लिए कभी-कभी उन्हीं भाषा की शैली का उनुकरण करते हैं। उदा- The man who had come yesterday was a thief. इसका हिन्दी में छायानुवाद होगा।

वह आदमी जो कल आया था, चोर था। हिन्दी का प्राकृत वाक्य होगा- जो आदमी कल आया था, चोर था।

अंग्रेजी में भविष्यत् काल के लिए तात्कालिक वर्तमान काल की क्रिया का प्रयोग करना एक प्रकार की शैली है।

The minister will come tomorrow. (भवुष्यकाल) लेकिन आजकल के व्यवहार में यह वाक्य बदलकर - The minister is coming tomorrow का रूप आगया है। हिन्दी में भी इसके प्रभाव का अनुकरण पड़ रहा है।

मंत्री कल आ रहे हैं।

9.5.2. विभक्तियों और प्रत्ययों का घिस जाना:

विभक्तियों के घिस जाने से अर्थ को समझने में कठिनाई होने लगाती है। अतः वाक्य में सहायक शब्द (परसर्ग सहायक क्रिया) जोड़े जाने लगते है। साथ ही वाक्य में पदक्रम निश्चित हो जाता है।

शम मोहन करता है।
मोहन राम कहता है।

इन वाक्यों में स्थान के कारण 'राम'प्रथम वाक्य में 'कर्ता'है और दूसरे वाक्य में 'कर्म' है। इसी प्रकार 'मोहन'प्रथम वाक्य में 'कर्म' है। इसी प्रकार 'मोहन' प्रथम वाक्य में 'कर्म' है और द्वितीय वाक्य में 'कर्ता' है। इसका कारण स्थान का परिवर्तन है। लेकिन संस्कृत में चाहे स्थान 'प्रथम'हो अर्थ वही रहेगा।

उदा: रामःरावणंहंति।
रावणंरामःहंति।

9.5.3. स्पष्टता एवं बल के लिए अतिरिक्त बल का प्रयोग:

व्यावहारिक जीवन में अधिक स्पष्टता के लिए कुछ अनावश्यक शब्द जोडे जाते हैं। 'आप'कर्ता के स्थान पर हो तो क्रिया आदर सूचक होता है।

उदा: चाय लीजिए (आदर सूचक वाक्य) अधिक स्पष्टता के लिए हम कहते हैं- कृपया चाय लीजिए। अथवा कृपया चाय लीजिएगा।

इसी प्रकार - राम लौट आया। राम वापस आया। ये दोनों वाक्य काफी है। किन्तु अधिक स्पष्टता के लिए हम करते है-।

राम वापस लौट आया।

इसी प्रकार का प्रयोग कभी - कभी अंग्रेजी में भी प्रयुक्त होता है-
Rama returned
Rama come back.
लेकिन हम कहते हैं - Rama returned back.

9.5.4. नवीनता :

नवीनता के लिए कभी - कभी नये प्रयोग चल पड़े हैं। उनके कारण भी वाक्य-रचना-विधान में परिवर्तन आते हैं। उदाहरण के लिए-

1. मुझे दस रुपये मात्र चाहिए। नवीनता का रूप- 'मुझे मात्र दस रुपये चाहिए।'
2. रात भर की बात। नवीनता का रुप - बात रात भर की।
3. तीन दिन की बादशाहता। नवीनत का रुप - बाद शाहत तीन दिन की।

9.5.5. बोलनेवालों की मानसिक स्थिति में परिवर्तन:

मानव समानिक प्राणी हैं। हर्ष, विषाद, शोक, आनन्द, क्रोध, हास्य आदि अवस्थाएँ मानव के मन पर प्रभाव डालती हैं। अतः तदनुसार मानव की वाक्य प्रणाली बदलती है। बोलने वाले के वाक्य में परिवर्तन आता है। युद्ध, शान्ति, प्रसन्नता और दुःख आदि का प्रभाव वाक्य रचना पर पड़ता है।

9.5.6. संक्षेप:

संक्षेप का प्रभाव वाक्य रचना के परिवर्तन का एक कारण है।
उदा : नहीं पढ़ता है।
नहीं पढ़ता। (संक्षेप रुप)
तुम आओ।
आओ। (संक्षेप रूप)

9.5.7. बल के लिए क्रम- परिवर्तन:

बल या स्थिति स्थिरता बताने के लिए कुछ वाक्यों में परिवर्तन होता है।
1. जाऊंगा तो।
जाऊँ तो गा - परिवर्तित रूप
2. नागपुर ही।
नाग ही पुर- परिवर्तित रुप।

9.6. सारांश : वाक्य - विज्ञान का विश्लेषण इसलिए महत्वपूर्ण और अधिक हो गया है क्योंकि उसके निर्माण की प्रक्रिया, शब्द - ज्ञान, अर्थ- ज्ञान, शब्द - क्रम, व्याकरणिक, एकरुपता, वाक्य, उपवाक्य, इसमें भी प्रधान तथा आश्रित वाक्य आदि का अध्ययन व ज्ञान आदि से अवगत होने का अवसर प्राप्त होता है ।

सामाजिक एवं व्यावहारिक स्तर पर वाक्य- प्रकार व उसकी रचना को प्रभाव दूरगामी होती है । मनोवैज्ञानिक दृष्टि से सम्बन्धों की बुनावट पर असर पड़ता है । आज के युग से वैज्ञानिक प्रगति के कारण जानकारी की जो सुविधाएँ उपलब्ध हैं उन्होंने हर दृष्टि से विस्तार को संभावित किया है । शब्द व अर्थ की महता, जीवन की सार्थकता से बहुत गहरे जुडी है । भाषा हमारे भाव-सम्प्रेषण का सशक्त माध्यम है ।

9.7. स्वयं अध्ययन के लिए प्रश्न

1. वाक्य की अर्थ और परिभाषाओं को बताते हुए विशेषताओं के बारे में लिखिए ।
2. वाक्य के प्रकारों के बारे में सोदाहरण रूप में लिखिये ।
3. वाक्य गठन परिवर्तन के मुख्य कारण को सविस्तार रूप से लिखिए ।

डॉ. मंजूला

204HN21

M.A. DEGREE EXAMINATION

SECOND SEMESTER

HINDI

Paper IV - **LINGUISTICS**

Time Three Hours | Maximum 70 Marks

पाश्चात्य काव्य शास्त्र

किन्हीं पाँच प्रश्नों के उत्तर लिखिए ।

सभी प्रश्नों के अंक समान हैं ।

(5 x 14 = 70)

1. (a) भाषा की परिभाषा देने हुए उसके विकास के मूल कारणों को स्पष्र कीजिए ।

(अथवा)

(b) भाषा विज्ञान की परिभाषा देकर उसकी शास्त्रा ओं के परचिय दीजिए ।

2. (a) ध्वनि नियम कया है । प्रमुस्त्र ध्वनि नियमों का परिचय दीजिए ।

(अथवा)

(b) ध्वनि - परिवर्तन के कारणों को स्पध्द कीजिए ।

3. (a) अर्थ - ररिवर्तन के कारणों को सोदाहरण समझाइए ।

(अथवा)

(b) रुप और शब्द के अंतर को स्पध्द करते हुए रूप - परिवर्तन केकारणों का समझाइए ।

4. (a) वाक्य की परिभाषा देते हुए वाक्य के विभिन्न प्रकारों का संक्षिप्र परिचय दीजिए ।

(अथवा)

(b) शब्द की परिभाषा देने हुए शब्दों के वर्गीकरण को स्पष्ह कीजिए ।

5. (a) किन्हीं दो पर टिप्पणी लिखिए ।

(i) कात्यायन

(ii) स्वर और व्यंजन ।

(iii) मुनित्रय ।

(iv) वाक्य - गठन में परिवनीन ।

(अथवा)

(b) किन्हीं दो पर टिप्पमी लिखिए ।

(i) पाणिनी ।

(ii) भाषाओं का आकृतिमूलक वर्गीकरण ।

(iii) पतंजलि ।

(iv) भाषा की संरचना ।

204 MA HIN

ORIGINALITY REPORT

9%	5%	1%	4%
SIMILARITY INDEX	INTERNET SOURCES	PUBLICATIONS	STUDENT PAPERS

PRIMARY SOURCES

1	Submitted to University of Mumbai Student Paper	3%
2	assets.vmou.ac.in Internet Source	1%
3	mdu.ac.in Internet Source	1%
4	anucde.info Internet Source	1%
5	Submitted to Podar International School Student Paper	<1%
6	uou.ac.in Internet Source	<1%
7	ia601400.us.archive.org Internet Source	<1%
8	www.rc.umd.edu Internet Source	<1%
9	Submitted to Pacific University Student Paper	<1%

10	More, Minakshi . "raajee seth ka samagr saahity: ek anusheelan", Maharaja Sayajirao University of Baroda (India), 2020 Publication	<1 %
11	Submitted to North-Eastern Hill University, Shillong Student Paper	<1 %
12	hindivishwa.org Internet Source	<1 %
13	Submitted to Submitted on 1690971277673 Student Paper	<1 %
14	www.sarkarischoolsolutions.com Internet Source	<1 %
15	Submitted to Maharishi University Of Information Technology, Lucknow Student Paper	<1 %
16	www.slideshare.net Internet Source	<1 %
17	baadalsg.inflibnet.ac.in Internet Source	<1 %
18	Gautam, Raj Bahadur. "Manjur Aehtesham Ke Katha Sahitya Me Samajik Sadbhav: Ek Adhyayan", Maharaja Sayajirao University of Baroda (India), 2023 Publication	<1 %

19	www.uou.ac.in Internet Source	<1%
20	repository.tribal.gov.in Internet Source	<1%
21	Submitted to Odisha State Open University Student Paper	<1%
22	Vasava, Rajeshbhai Fogatbhai. "Language depicted in the stories of Shailesh Mitayani: A Study.", Maharaja Sayajirao University of Baroda (India), 2020 Publication	<1%
23	epgp.inflibnet.ac.in Internet Source	<1%
24	C. K. Ogden, I. A. Richards, B. Malinowski, F. G. Crookshank. "The Meaning of Meaning - A Study of The Influence of Language upon Thought and of The Science of Symbolism", Routledge, 2014 Publication	<1%
25	"Vartamaan Samay Mai Digitalicaran ka Prabhav", NIILM University, 2024 Publication	<1%

Exclude quotes Off Exclude matches < 14 words

Exclude bibliography Off

204 MA HIN

GRADEMARK REPORT

FINAL GRADE

/0

GENERAL COMMENTS

PAGE 1

PAGE 2

PAGE 3

PAGE 4

PAGE 5

PAGE 6

PAGE 7

PAGE 8

PAGE 9

PAGE 10

PAGE 11

PAGE 12

PAGE 13

PAGE 14

PAGE 15

PAGE 16

PAGE 17

PAGE 18

PAGE 19

PAGE 20

PAGE 21

PAGE 22

PAGE 23

PAGE 24

PAGE 25

PAGE 26

PAGE 27

PAGE 28

PAGE 29

PAGE 30

PAGE 31

PAGE 32

PAGE 33

PAGE 34

PAGE 35

PAGE 36

PAGE 37

PAGE 38

PAGE 39

PAGE 40

PAGE 41

PAGE 42

PAGE 43

PAGE 44

PAGE 45

PAGE 46

PAGE 47

PAGE 48

PAGE 49

PAGE 50

PAGE 51

PAGE 52

PAGE 53

PAGE 54

PAGE 55

PAGE 56

PAGE 57

PAGE 58

PAGE 59

PAGE 60

PAGE 61

PAGE 62

PAGE 63

PAGE 64

PAGE 65

PAGE 66

PAGE 67

PAGE 68

PAGE 69

PAGE 70

PAGE 71

PAGE 72

PAGE 73

PAGE 74

PAGE 75

PAGE 76

PAGE 77

PAGE 78

PAGE 79

PAGE 80

PAGE 81

PAGE 82

PAGE 83

PAGE 84

PAGE 85

PAGE 86

PAGE 87

PAGE 88

PAGE 89

PAGE 90

PAGE 91

PAGE 92

PAGE 93

PAGE 94

PAGE 95

PAGE 96

PAGE 97

PAGE 98

PAGE 99

PAGE 100

PAGE 101

PAGE 102

PAGE 103

PAGE 104

PAGE 105

PAGE 106

PAGE 107

PAGE 108

PAGE 109

PAGE 110

PAGE 111

PAGE 112

PAGE 113

PAGE 114

PAGE 115

PAGE 116

PAGE 117

PAGE 118

PAGE 119

PAGE 120

PAGE 121

PAGE 122

PAGE 123

PAGE 124